CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सचित्र विश्वकोश

3822

7 विज्ञान * वैज्ञानिक * आविष्कारक

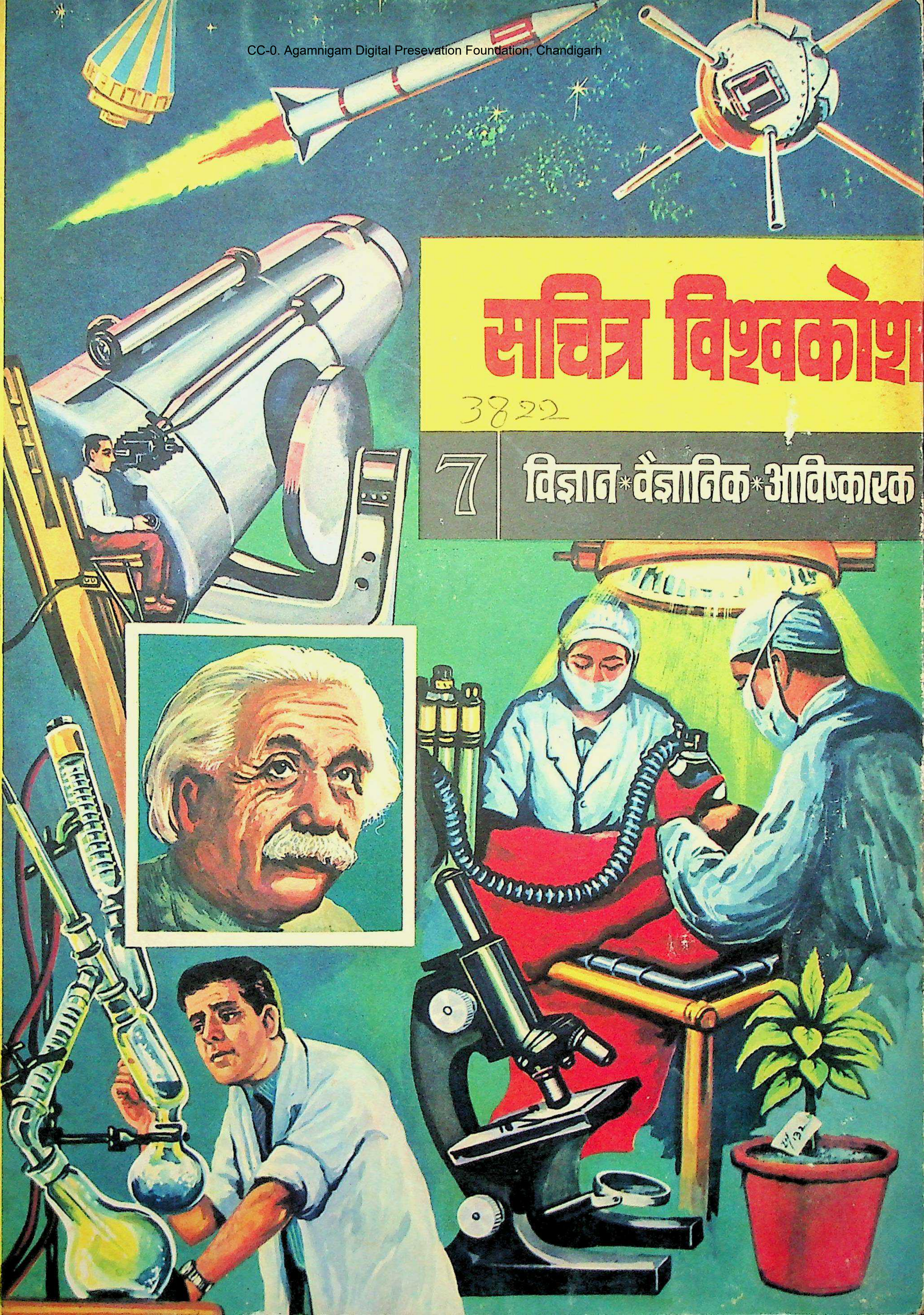

3822

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3822

अशोका स्टेशनर्स
फीरोज़ गांधी मार्ग, रायबरेली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7

सचित्र विश्वकोश

ज्ञान-विज्ञान की प्रामाणिक, तथ्यपूर्ण और नवीनतम जानकारी तथा दो हज़ार से अधिक रंगीन और दुर्लभ चित्रों से भरपूर दस सजिल्द और अपने-आपमें सम्पूर्ण खण्डों का अपने ढंग का अनूठा विश्वकोश

विशेषज्ञों द्वारा रचित तथा विश्व की अनेक भाषाओं में अनूदित 'गोल्डन बुक इन्साइक्लोपीडिया' का हिन्दी संस्करण

विज्ञान * वैज्ञानिक * आविष्कारक

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-6

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमिका

विश्वकोश की उपयोगिता से सभी परिचित हैं। विश्वकोश के द्वारा ग्राप किसी भी विषय के सम्बन्ध में प्रामाणिक ग्रौर नवीनतम जानकारी ग्रासानी से पा सकते हैं। ग्राज के युग में विश्वकोश एक महत्त्वपूर्ण ग्रौर बहुत उपयोगी संदर्भ पुस्तक (रेफरेन्स बुक) है जो विद्यार्थियों, विद्वानों ग्रौर जनसाधारण सभी के लिए मूल्यवान है।

मुझे प्रसन्नता है कि 'गोल्डन बुक एनसाइक्लोपीडिया' पर ग्राधारित यह 'सचित्र विश्वकोश' दस भागों में प्रकाशित हो रहा है। प्रत्येक खण्ड विषयानुसार है ग्रौर ग्रपने में पूर्ण है। 'गोल्डन बुक एनसाइक्लोपीडिया' ग्रपनी प्रामाणिकता के लिए संसार-भर में प्रसिद्ध है ग्रौर ग्रनेक देशों में इसके ग्रनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। हिन्दी में इस उपयोगी विश्वकोश का प्रकाशन बहुत ही सुन्दर रूप में हुग्रा है जिसके लिए प्रकाशक बधाई के पात्र हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर चार-रंगे ग्रनेक चित्र हैं ग्रौर सबसे ग्रच्छी बात यह है कि मात्र ग्रनुवाद न होकर इसमें ग्रावश्यकतानुसार भारतीयकरण भी किया गया है। मेरी सम्मति में ऐसा करने से इसकी उपयोगिता हिन्दी के पाठकों के लिए ग्रौर भी बढ़ गई है। यह महत्त्वपूर्ण प्रकाशन, एक तरह से, शिक्षा के क्षेत्र में दो मित्र देशों के सहयोग का प्रतीक है।

एक ग्रन्य विशेषता यह भी है कि इसमें भारत सरकार द्वारा निर्धारित टैक्नीकल शब्दावली का उपयोग किया गया है। मुझे ग्राशा है, हिन्दी के विद्यार्थी ग्रौर पाठक इससे पूरा लाभ उठाएंगे।

नई दिल्ली
अप्रैल, 1967

प्रेम किरपाल
शिक्षा-सचिव, भारत सरकार

प्रकाशकीय

'सचित्र विश्वकोश' की तैयारी में हमें ग्रनेक भारतीय विद्वानों ग्रौर वैज्ञानिकों का सहयोग मिला है। हम उन सबके प्रति ग्राभार प्रकट करते हैं, विशेषतः श्री श्रीकान्त व्यास के प्रति, जिनकी देख-रेख में यह हिन्दी संस्करण संपादित हुग्रा है। ग्रावरण-चित्र श्री ग्रार० के० बोस ने बनाए हैं।

—प्रकाशक

मूल्य : सात रुपये

THE GOLDEN BOOK ENCYCLOPAEDIA
by Bertha Morris Parker

Published by arrangement with Golden Press, Inc. New York.
© Copyright 1959 by Golden Press, Inc.
प्रथम संस्करण © 1967, राजपाल एण्ड सन्ज़
इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी० बी० टी०) नई दिल्ली में मुद्रित

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय, लखनऊ
क्रमांक 3822
प्राप्ति तिथि 17/6
State Museum, Library, Lko.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सचित्र विश्वकोश

खण्ड 7

विज्ञान, वैज्ञानिक, आविष्कारक

अंक और संख्याएं (NUMBERS AND NUMERALS) : आरम्भ में जब लोगों ने चीज़ों को गिनना शुरू किया, तब वे आज की तरह एक, दो और तीन नहीं गिनते थे। इसके स्थान पर वे निशानों का प्रयोग करते थे। कभी-कभी वे कंकरों से गिनती करते थे, या हाथ की उंगलियों का सहारा लेते थे। दस हमारे अंकों में सबसे महत्त्वपूर्ण इसलिए है कि हमारे हाथों में केवल दस उंगलियां होती हैं।

अंकों की सहायता से गिनती करना कंकरों या उंगलियों की सहायता से गिनती करने की अपेक्षा अधिक आसान है, खासकर तब जब लम्बी संख्या की गिनती करनी हो। अगर यह पूछा जाए कि सप्ताह में कितने दिन होते हैं तो सात उंगलियां दिखाकर इस संख्या को बता देना आसान होगा। लेकिन सोचिए अगर किसीसे यह पूछा जाए कि वर्ष में कितने दिन होते हैं तो उंगलियों की सहायता से इसका उत्तर देना कितना कठिन होगा।

संख्याओं की गणना की बात उनको लिखने के ढंग से एकदम भिन्न है।

संख्याएं सबसे पहले चित्रों में लिखी जाती थीं। अमरीका के आदिवासी अभी हाल तक चित्रों में लिखते थे। अगर किसी अमरीकी आदिवासी को यह लिखना होता था कि दस गोरे एक नाव में आए हैं, तो उसके लिए नाव का चित्र बनाकर, दस गोरों का चित्र बनाना भी आवश्यक होता था।

संख्या बताने का एक दूसरा पुराना तरीका किसी लकड़ी की छड़ी पर दांते बनाना या मिट्टी के बर्तन पर छोटी-छोटी लकीरें खींचना था। खेलों के स्कोर गिनने के लिए आज भी बच्चे लकीरें खींचने के उसी पुराने ढंग को अपनाते हैं।

पुराने ज़माने के सभी देश अंक लिखने के अपने तरीके निकालते रहे। मिस्र के निवासी एक से दस तक के अंक लिखने के लिए सीधी रेखाओं से काम लेते थे। 100, 1000 और 10,000 के लिए वे अलग-अलग चिह्नों का प्रयोग करते थे।

प्राचीन बेबीलोनिया के लोग नुकीली खूंटियों से मुलायम मिट्टी की पट्टियों पर लिखते थे। उनकी लिखावट को कीलक लिपि कहते हैं। अंक लिखने के उनके

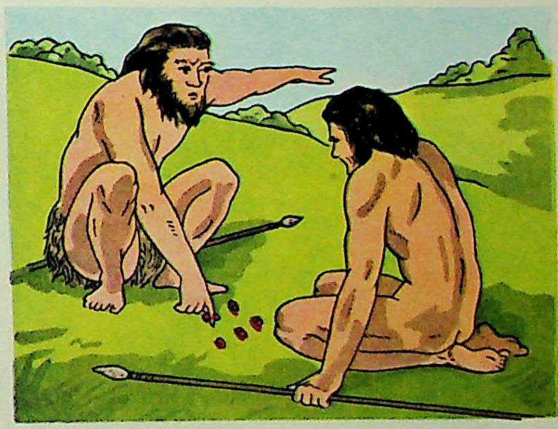

गुहावासी कंकरों को गिनती के लिए काम में लाते थे।

ढंग में 60 एक बहुत महत्त्वपूर्ण संख्या थी। इसके लिए वे एक अलग चिह्न का प्रयोग करते थे।

यूनानी लोग अपने अक्षरों को ही संख्या के चिह्न के रूप में काम में लाते थे। वे अपने अक्षरों के ऊपर ही एक छोटा-सा चिह्न बनाते थे, ताकि उन अक्षरों को अक्षर न समझकर अंक समझा जाए। अगर हमें ग्रीक शैली में अंक लिखने हों, तो हम 1 के लिए a′, 2 के लिए b′ और 10 के लिए j′ लिखेंगे। फिर 20 के लिए k′ और 21 के लिए ka′ तथा 30 के लिए l′ इत्यादि लिखते जाएंगे।

रोमन में प्रथम तीन अंकों के लिए I, II, III के चिह्न प्रचलित थे। 5 का चिह्न V था। चार का चिह्न IV,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थात् पांच से एक कम था। रोमन लोग 10 के लिए X का, 50 के लिए L का, 100 के लिए C का और 500 के लिए D का तथा 1000 के लिए M का प्रयोग करते थे।

यूरोप में शताब्दियों तक अंक लिखने के लिए रोमन पद्धति ही काम में आती रही। पुस्तक के अध्यायों, मकान के नम्बरों और घड़ी के डायलों पर रोमन अंक आज भी प्रायः लिखे जाते हैं।

आज जिन अंकों का सर्वाधिक प्रचार है उनका जन्म भारत में ही हुआ था। भारत से इन्हें अरब के लोगों ने सीखा और अरब वालों से इन्हें यूरोप के लोगों ने ग्रहण किया। इस पद्धति से अंक लिखने में केवल दस ही अंकों का प्रयोग किया जाता है। इनमें से एक शून्य का चिह्न है। इसके पहले अंक लिखने की किसी पद्धति में शून्य का प्रयोग नहीं होता था।

शून्य नामक एक अलग चिह्न रखने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि दूसरे अंकों के साथ इसे मिलाकर हम काफी लम्बी संख्याएं आसानी से लिख सकते हैं। उदाहरण के लिए 5 के साथ एक शून्य जोड़ने पर 50 की संख्या बन जाती है। हम 500 की संख्या इसमें दो शून्य जोड़कर बनाते हैं। इसके अलावा भारतीय अंकों से जोड़ने, घटाने, गुणा करने और भाग देने में भी बड़ी आसानी रहती है।

शताब्दियों तक एक देश से दूसरे देश में फैलते रहने से भारतीय अंकों का रूप बदल गया। फिर भी नौ अंकों को और एक शून्य को लिखने की पुरानी पद्धति आज भी ज्यों की त्यों प्रचलित है। आज इसका प्रयोग सारी दुनिया में हो रहा है। नागरी अंकों के रूप में प्राचीन भारत के अंकों से काफी भिन्नता आ गई है। परन्तु भारत सरकार ने पुनः अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को अपना लिया है, जो वस्तुतः भारतीय ही हैं। (देखें : गणित; शून्य)

अंतरिक्ष यात्रा (SPACE TRAVEL) : बहुत दिनों से लोग पृथ्वी पर से आकाश में जाने और चन्द्रमा तथा ग्रहों की यात्रा करने के सपने देखते रहे हैं। अभी कुछ समय पहले तक ज़्यादातर लोगों को यह विश्वास नहीं था कि ऐसा कभी वास्तव में संभव हो सकेगा। परन्तु अब रॉकेट हज़ारों मील दूर आकाश में चन्द्रमा तक पहुंच चुके हैं, और कृत्रिम उपग्रहों द्वारा पृथ्वी के अनेक चक्कर लगाए जा चुके हैं।

परन्तु अंतरिक्ष यात्रा संभव हो सके इसके पूर्व बहुत-से कार्य करने होंगे। इनमें से एक कार्य है यह पता लगाना कि अंतरिक्ष यात्रा शारीरिक दृष्टि से मनुष्य को अनुकूल पड़ेगी या नहीं।

अंतरिक्ष यात्रा में रॉकेट यान को बहुत तेज़ी से ऊपर उठना पड़ता है, ताकि पृथ्वी अपनी आकर्षण शक्ति से उसे नीचे न खींच सके। जैसे ही 'मुक्त उड़ान' शुरू होती है यात्री भारहीन हो जाता है। अंतरिक्ष यान के केबिन को बहुत कसकर बन्द रखना पड़ता है और यात्री को ऑक्सीजन और अन्य गैसों के एक मिश्रण की सांस लेनी पड़ती है। इसी प्रकार अंतरिक्ष यान पर निरन्तर कॉस्मिक किरणों की बौछार भी पड़ती रहती है।

अंकों और संख्याओं को लिखने की कुछ प्राचीन विधियां

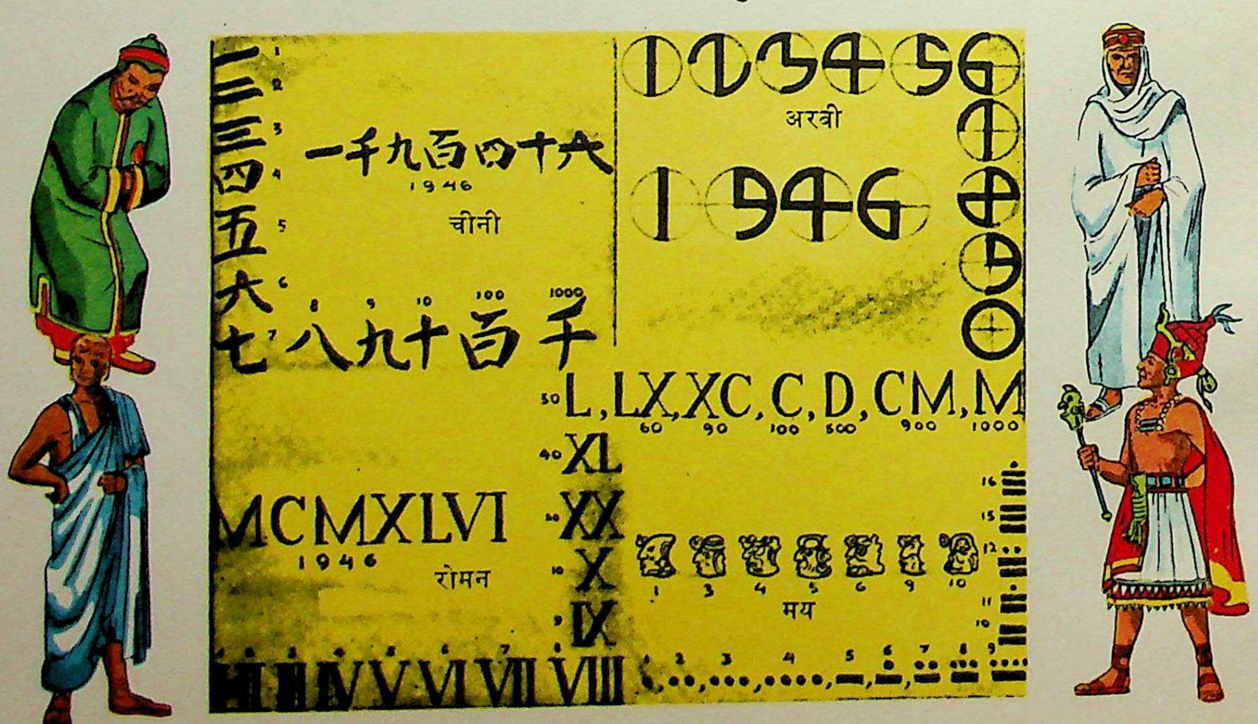

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

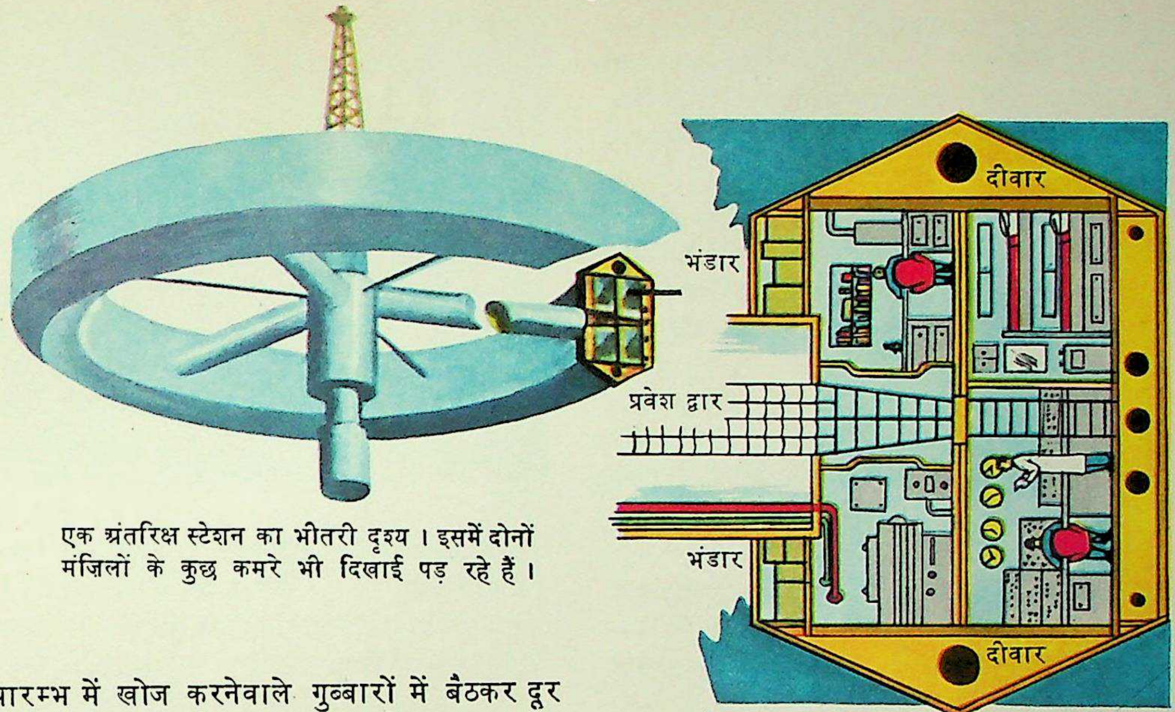

एक अंतरिक्ष स्टेशन का भीतरी दृश्य। इसमें दोनों मंजिलों के कुछ कमरे भी दिखाई पड़ रहे हैं।

आरम्भ में खोज करनेवाले गुब्बारों में बैठकर दूर तक समताप मंडल (Stratosphere) में गए थे। इस अनुभव से उन्हें यह आभास मिला कि अंतरिक्ष यात्रा कैसी होगी। प्रयोगशालाओं में कुछ समय के लिए मनुष्यों को ऐसी ही परिस्थितियों में रखा गया जैसी परिस्थितियों का सामना उन्हें अंतरिक्ष यात्रा में करना पड़ता है। प्रारम्भ में रॉकेटों में चूहे आदि जन्तु अंतरिक्ष में भेजे गए। फिर रूस द्वारा स्पुतनिक द्वितीय में लाइका नाम की एक कुतिया अंतरिक्ष में भेजी गई, जिसके हृदय की गति आदि की सूचना पृथ्वी पर रेडियो से आती रही। इन सब मानव-रहित उड़ानों से अंतरिक्ष के संबंध में बहुत-सी सूचनाएं प्राप्त हुईं। वैज्ञानिकों को पृथ्वी से सैकड़ों मील ऊपर घातक किरणों के क्षेत्र का भी पता चला। इसी प्रकार यह भी ज्ञात हुआ कि उल्काओं से कोई खतरा नहीं है। उनमें से बहुत-सी तो रेत के कण से भी बड़ी नहीं हैं।

इन अनुभवों से लाभ उठाकर सबसे पहले रूस ने सन् 1961 में उपग्रह में मनुष्य को भेजा। पहले अंतरिक्ष-यात्री का नाम यूरी गगारिन है। दूसरा अंतरिक्ष-यात्री भी रूसी ही था। अमरीका भी वर्ष-भर बाद अंतरिक्ष में मनुष्य भेजने में सफल हो गया। अंतरिक्ष में जानेवाले प्रथम अमरीकी का नाम है जॉन ग्लेन। ये यात्री उपग्रहों में कई दिनों तक पृथ्वी का चक्कर लगाते रहे। इन उपग्रहों से प्राप्त होनेवाले रेडियो-संकेतों से बहुत-सी सूचनाएं एकत्रित हुईं।

अंतरिक्ष यात्रा की दिशा में अगला कदम है, अंतरिक्ष स्टेशनों को स्थापित करना। इनके लिए कई वर्षों से योजनाएं तैयार की जा रही हैं। ये स्टेशन या तो घातक किरणों के क्षेत्र के नीचे या ऊपर स्थापित किए जाएंगे। चित्र में खोखले बड़े पहिये की शक्ल का एक संभावित अंतरिक्ष स्टेशन दिखाया गया है। संभवतः चन्द्रमा पहला आकाशीय पिंड होगा जिसपर मनुष्य पहुंचेगा। ऐसी आशा की जा रही है कि 1970 के पूर्व मनुष्य चन्द्रमा पर पहुंचने में सफल हो जाएगा। वैसे चन्द्रमा पर मनुष्यों के पहले बन्दर और कुत्ते भेजे जाएंगे।

(देखें : कृत्रिम उपग्रह; रॉकेट)

अगासी, जां लुई रोदोल्फ (JEAN LOUIS RODOLPHE AGASSIZ 1807-1873) : प्रसिद्ध प्रकृतिविज्ञानी लुई अगासी का जन्म स्विट्ज़रलैंड में हुआ था। बचपन से ही उन्हें अजीब-अजीब चीज़ें इकट्ठा करने का शौक था।

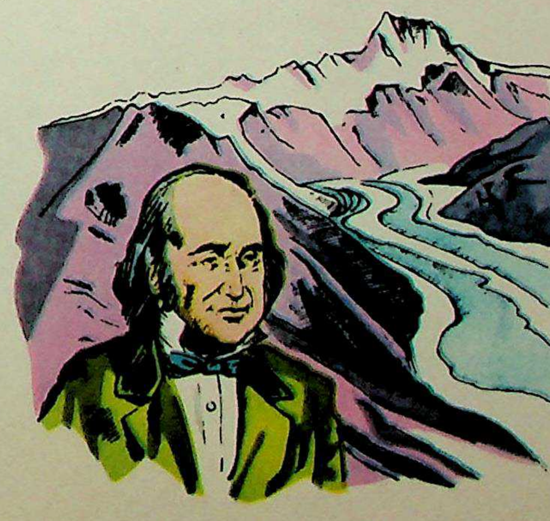

लुई अगासी ने हिमनदों का गहरा अध्ययन किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विज्ञान की ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे विश्वविद्यालय में पढ़ाने लगे। पढ़ाने में उन्हें बड़ा आनन्द आता था। वे बच्चों की टोलियों को देहातों में ले जाते और उन्हें पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं, पशु-पक्षियों आदि के बारे में बड़ी रोचक और उपयोगी बातें बताया करते।

स्विट्ज़रलैंड पहाड़ों का देश है। हिमनदों या ग्लेशियरों की वहां बहुतायत है। लुई अगासी ने हिमनदों का गहरा अध्ययन किया और उसके आधार पर सिद्ध किया कि किसी ज़माने में यूरोप का अधिकांश भाग बर्फ से ढका हुआ था।

उन्तालीस वर्ष की आयु के बाद लुई अगासी अमरीका में बस गए और हार्वर्ड विश्वविद्यालय में पढ़ाने लगे। वे प्रकृतिविज्ञान के एक महान आचार्य माने जाते हैं।

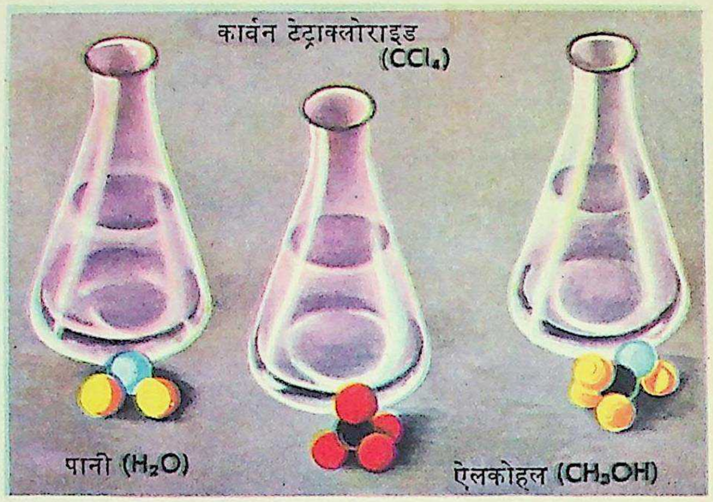

अणु (MOLECULES) : एक कटोरी-भर पानी नन्हे-नन्हे करोड़ों जलकणों से बनता है, जिनके बीच-बीच में अवकाश या खाली स्थान रहता है। इन कणों को अणु कहते है। एक अणु अनेक परमाणुओं से बना होता है।

कटोरी के पानी में अणु निरन्तर गतिमान हैं। जब पानी ठंडा होता है तो अणुओं की गति मन्द होती है। बहुत ठंडा कर दें तो पानी ठोस बर्फ बन जाता है। तब भी अणु गतिमान रहते हैं। यदि जल को गरम करें तो अणु अधिक तेज़ी से और एक-दूसरे से अलग अधिक दूरी पर गति करने लगते हैं। तब पानी अधिक जगह घेरता है। अधिक गरम करने पर अणु इतने दूर-दूर और अलग-अलग रहकर गति करने लगते हैं कि पानी अदृश्य गैस बन जाता है। यदि कटोरी के पानी में थोड़ी चीनी डाल दें तो वह अणुओं के मध्य जगह बना लेती है और अदृश्य हो जाती है। हम कहते हैं 'चीनी घुल गई'।

किसीने पानी का अणु कभी नहीं देखा। पानी का अणु इतना अधिक सूक्ष्म होता है कि हमारा अच्छे से अच्छा माइक्रोस्कोप भी उसे देखने में असमर्थ है। किन्तु पानी की गतिविधि से वैज्ञानिकों को विश्वास है कि पानी अणुओं से बना है। इस बात का और कोई जवाब नहीं कि पानी क्यों ठोस, तरल या गैस बन सकता है। इस बात का भी और कोई उत्तर नहीं कि चीनी जैसी वस्तुएं पानी में कैसे घुल जाती हैं, और न इस बात का कि एक कटोरी-भर पानी कम या अधिक कैसे बन सकता है।

अन्य सहस्रों पदार्थ भी अणुओं से बनते हैं, किन्तु सब अणु एक समान नहीं होते। चीनी, चीनी के अणुओं से बनती है; ऑक्सीजन, ऑक्सीजन के अणुओं से और हवा, ऑक्सीजन तथा अन्य प्रकार के अणुओं से बनती है। यह क्रम चलता रहता है। अणु निरन्तर गति करते रहते हैं और उनके बीच-बीच में निरन्तर अवकाश रहता है। यहां तक कि मेज़ की ठोस लकड़ी और दीवार के पलस्तर में भी अणु गतिमान हैं।

बहुत-से अणु इतने छोटे होते हैं कि वे दिखाई भी नहीं देते। किन्तु कुछ प्रकार के अणुओं को शक्तिशाली इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से देखा जा चुका है।

अणु अपने से भी अधिक सूक्ष्म कणों से बनते हैं, जिन्हें परमाणु (Atoms) कहते हैं। अणु में परमाणु एक समान भी हो सकते हैं और नहीं भी। पानी का एक अणु दो उद्जन परमाणुओं तथा एक ऑक्सीजन परमाणु से बनता

संसार की सभी वस्तुएं गतिशील अणुओं से बनी हैं, जिनके बीच-बीच में खाली स्थान रहता है।

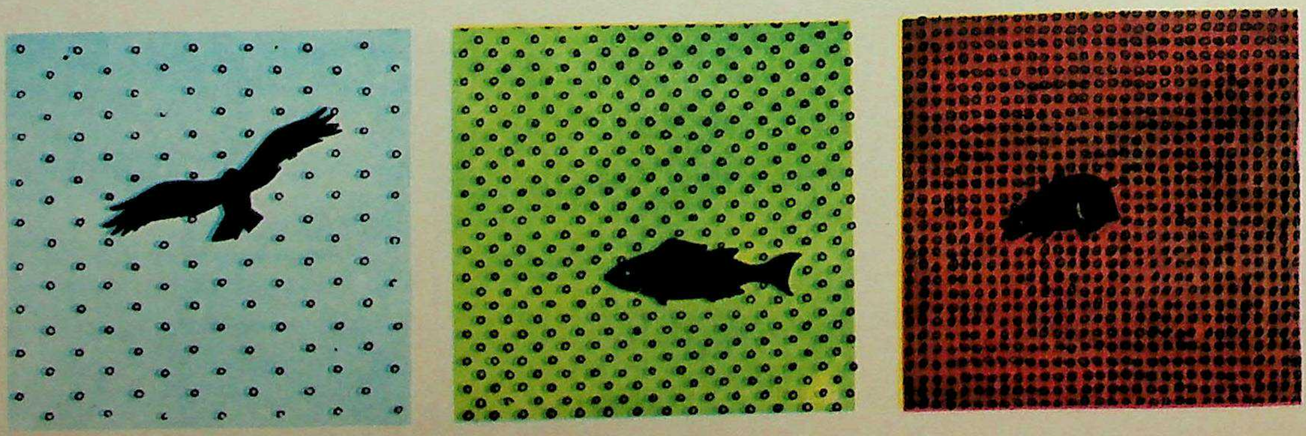

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। ऑक्सीजन का एक अणु ऑक्सीजन के दो परमाणुओं से बनता है। चित्र में तीन प्रकार के अणुओं के मॉडल दिखाए गए हैं। मॉडल यह प्रकट नहीं करते कि अणु देखने में कैसे हैं। इनका उद्देश्य तो केवल यह बताना है कि प्रत्येक अणु कितने तथा कितने प्रकार के परमाणुओं से बनता है।

आजकल वैज्ञानिक विभिन्न परमाणुओं को विविध प्रकार से जोड़-तोड़कर नित नई वस्तुओं का आविष्कार करने में लगे हैं। (देखें : परमाणु)

अपकेन्द्री बल (CENTRIFUGAL FORCE) : जब कोई पहिया कीचड़ में तेज़ी से चक्कर काटता है, तो उसपर

पत्थर गिरता क्यों नहीं ?

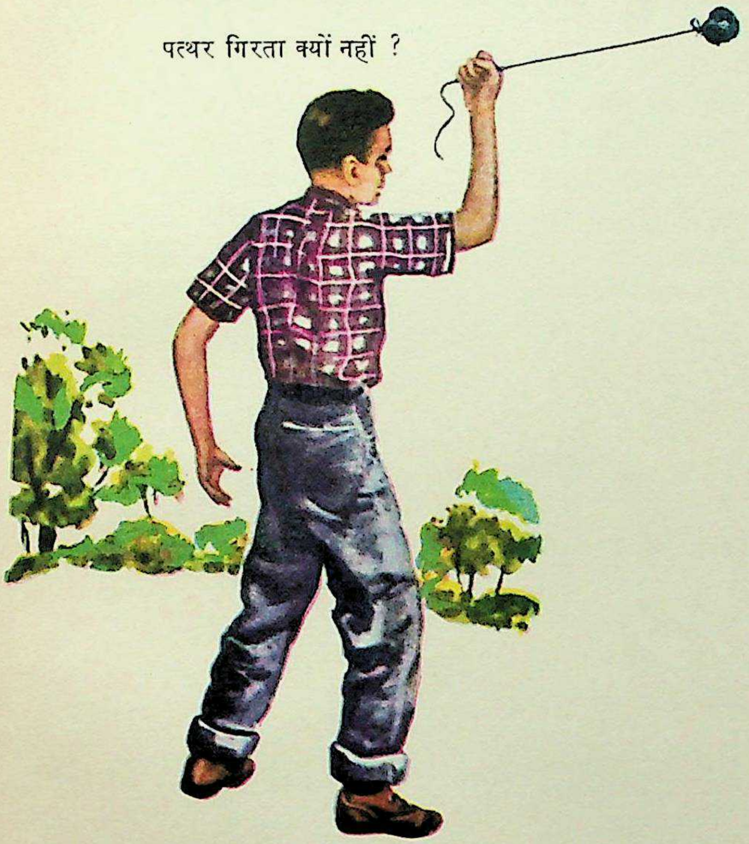

लगा हुआ कीचड़ इधर-उधर छिटकता रहता है। जिस बल से यह कीचड़ छिटकता है, उसे अपकेन्द्री बल कहते हैं।

अगर आपने 'हैमर थ्रो' का खेल देखा है, तो आप अपकेन्द्री बल को अधिक आसानी से समझ सकते हैं। हैमर की पतली मूठ के सिरे पर वज़न लगा रहता है। खिलाड़ी मूठ को पकड़कर उसे ज़ोर से घुमाता है। वह जितनी ही तेज़ी से उसे घुमाता है, अपकेन्द्री बल उतना ही बढ़ता जाता है। अन्त में खिलाड़ी हैमर को छोड़ देता है, और वह दूर छिटक जाती है।

यह एक अच्छी बात है कि गुरुत्वाकर्षण नाम का एक दूसरा बल हमें खींचे हुए है। अगर यह बल नहीं होता तो धरती के चक्कर काटने के कारण हम लोग अपकेन्द्री बल के द्वारा अंतरिक्ष में छिटक जाते।

अबाध गति (PERPETUAL MOTION) : सदियों से आदमी ऐसी मशीन बनाने की बात सोचता रहा है जो एक बार चलने के बाद चलती ही रहे, रुके नहीं। इस पर बहुत रुपया खर्च किया जा चुका है। लेकिन कोई ऐसी मशीन बनाने में अब तक सफल नहीं हुआ है। वैज्ञानिकों का कहना है कि ऐसी मशीन कोई बना भी नहीं सकता।

किसी मशीन का अबाध गति से चलना असंभव है, क्योंकि हर मशीन के चलने से कुछ न कुछ घर्षण अवश्य होता है। हर मशीन, यदि उसे ऊर्जा या शक्ति न मिले तो धीरे-धीरे रुक जाएगी। अबाध गति से चलनेवाली मशीन को अपनी ऊर्जा स्वयं तैयार करनी पड़ती है। यह काम कोई मशीन नहीं कर सकती।

कुछ संगीतज्ञ ऐसे वाद्य के बनाने में रुचि रखते हैं जो निरन्तर बजता रहे। ऐसी बहुत-सी संगीत-रचनाएं हैं जो 'अबाध गति' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

अम्ल और समाक्षार (ACIDS AND BASES) : नींबू खट्टा क्यों होता है? इसलिए कि उसमें एक अम्ल (Acid) या तेज़ाब होता है। अम्ल कई तरह के होते हैं और सभी अम्ल खट्टे होते हैं। सिरका एक अम्ल ही है। चकोतरा, संतरा और सेब में भी अम्ल होते हैं। कई अन्य फलों में भी अम्ल होते हैं। फटा हुआ दूध भी इसलिए खट्टा होता है कि उसमें एक अम्ल पैदा हो जाता है। हमारे आमाशय में भी एक अम्ल होता है, जो भोजन पचाने में हमारी सहायता करता है।

खाने की चीज़ों में जो अम्ल होते हैं, वे सभी हलके अम्ल हैं। उनका खट्टा स्वाद हमें अच्छा लगता है। लेकिन अम्ल बहुत तीखे या तेज़ भी हो सकते हैं। वे इतने तेज़ हो सकते हैं कि उनका इस्तेमाल करना भी खतरनाक हो सकता है। तेज़ अम्ल आदमी की खाल को काट सकते हैं और उसपर घाव पैदा कर सकते हैं। वे कपड़ों को काटकर उनमें छेद कर सकते हैं। वे धातुओं तक को अपने में घुला लेते हैं।

तेज़ अम्लों का कई तरह की चीज़ें बनाने में उपयोग किया जाता है, जैसे रासायनिक खादें, रंग, दवाइयां, आदि। गंधक का तेज़ाब या सल्फ्यूरिक एसिड, नमक का तेज़ाब या हाइड्रोक्लोरिक एसिड और शोरे का तेज़ाब या नाइट्रिक एसिड तेज़ अम्लों के ही तीन उदाहरण हैं।

हमारे आमाशय में भोजन के पाचन में सहायता करनेवाला अम्ल नमक का तेज़ाब है, मगर वहां वह पानी के मेल से हलका हुआ होता है।

इस बात का पता लगाने के कई तरीके हैं कि किसी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

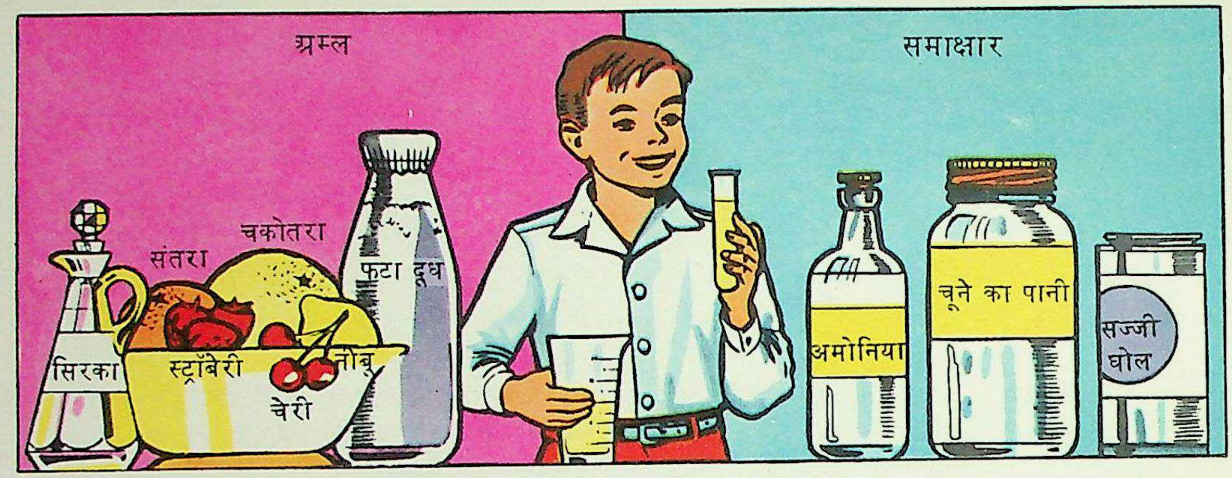

चीज़ में कोई अम्ल है या नहीं। एक तरीका लिटमस कागज़ का इस्तेमाल है—अम्ल नीले लिटमस कागज़ को गुलाबी कर देता है।

रासायनिक पदार्थों का एक पूरा समूह अम्लों का ही है। रासायनिक पदार्थों का एक अन्य समूह समाक्षारों (Bases) का है। समाक्षार गुलाबी लिटमस कागज़ को नीला कर देते हैं। समाक्षारों को क्षार (Alkalies) या खार भी कहते हैं।

चूने का पानी हलके समाक्षार की एक मिसाल है। कुछ समाक्षार बहुत तेज़ होते हैं। तेज़ अम्लों की ही तरह उनका इस्तेमाल भी खतरनाक होता है। कास्टिक सोडा एक ऐसा ही समाक्षार है। अमोनिया भी एक तेज़ समाक्षार है। समाक्षार कई चीज़ें बनाने के काम आते हैं। साबुन समाक्षारों से बननेवाली चीज़ों की एक मिसाल है।

अम्लों और समाक्षारों को प्रायः विपरीत प्रकार के रासायनिक पदार्थ कहा जाता है। अम्ल के उपयोग से समाक्षार से होनेवाली हानि को रोका जा सकता है, और समाक्षारों से अम्लों के असर को कम किया जा सकता है। अम्ल और समाक्षार के मेल से एक और ही तरह का रासायनिक पदार्थ बन जाता है, जिसे 'लवण' (Salt) कहते हैं।

अवरक्त किरणें (INFRARED RAYS) : सूरज की रोशनी में वे तमाम रंग रहते हैं जिन्हें हम इन्द्रधनुष में देखते हैं। ये सभी सूरज की किरणों के रूप में हमारे पास तक आते हैं। सूरज और भी कुछ किरणें छोड़ता है जिन्हें हम देख नहीं सकते। इन 'अदृश्य किरणों' में से कुछ को अवरक्त विकिरण (Infrared Radiation) कहते हैं।

अवरक्त किरणें हर गर्म चीज़ से निकलती हैं। एक विशेष प्रकार की फिल्म का उपयोग करके अंधेरे कमरे में भी बिजली की गर्म इस्तरी का 'चित्र' लिया जा सकता है। हवाई फोटोग्राफी में अवरक्त किरणें बहुत सहायक होती हैं। वे बादलों और धुंध को दृश्य किरणों से अधिक आसानी से भेद सकती हैं। सुदूर नक्षत्रों का चित्र लेने के लिए भी अवरक्त किरण वाले कैमरों का प्रयोग किया जाता है।

अवरक्त किरणें किसी भी प्रकार के पदार्थ का स्पर्श पाकर गर्मी उत्पन्न करती हैं। धूप से हमें जो गर्मी मिलती है उसमें कुछ तो दृश्य किरणों द्वारा प्राप्त होती है, लेकिन उसका अधिकतर भाग अवरक्त विकिरण से मिलता है। डाक्टर लोग कुछ विशेष बीमारियों की चिकित्सा में

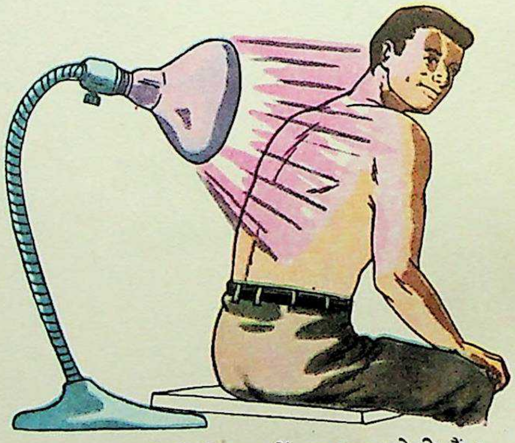

अवरक्त किरणें चिकित्सा में सहायक होती हैं।

अवरक्त किरणों की गर्मी का प्रयोग करते हैं। भुने हुए खाद्य-पदार्थ मुख्य रूप से आग से निकलनेवाली अवरक्त किरणों द्वारा ही पकते हैं।

आइन्स्टाइन, ऐल्बर्ट (ALBERT EINSTEIN 1879–1955) : महान वैज्ञानिक और गणितज्ञ आइन्स्टाइन के अनेक विचार बहुत कठिन हैं और उन्हें समझने के लिए समय चाहिए। उन्होंने समूचे ब्रह्माण्ड की व्याख्या करने की कोशिश की है। दुनिया के तमाम वैज्ञानिक आज भी उनके विचारों के समर्थन में अनेक प्रमाण पाते जा रहे हैं। आइन्स्टाइन के सिद्धान्तों के फलस्वरूप ही परमाणु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शक्ति और टेलीविज़न जैसे बड़े-बड़े आविष्कार संभव हो सके।

आइन्स्टाइन का जन्म जर्मनी के उल्म नामक स्थान में हुआ था। जब वे एक वर्ष के थे तभी उनका परिवार वहां से हटकर म्यूनिख चला आया। बाद में आइन्स्टाइन वहीं के स्कूल में भर्ती हुए। पढ़ाई में वे गणित में तो बहुत

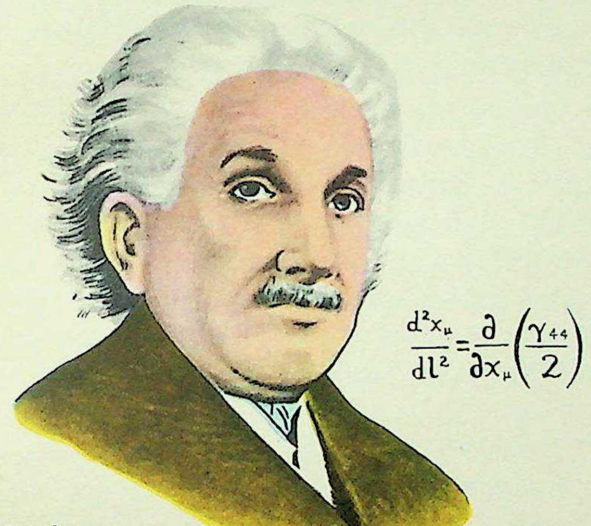

ऐल्बर्ट आइन्सटाइन

तेज़ थे, लेकिन दूसरे विषयों में नहीं। 15 वर्ष की आयु में स्विट्ज़रलैंड के ज्यूरिख विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने के लिए वे एक परीक्षा में बैठे लेकिन फेल हो गए। साल-भर और पढ़ने के बाद ही कहीं वे उस परीक्षा में पास हुए।

सन् 1905 में जब आइन्स्टाइन केवल 26 वर्ष के थे तभी जर्मनी की एक वैज्ञानिक पत्रिका में उनके तीन लेख प्रकाशित हुए। इन लेखों में उनके कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट हुए थे। इनमें से एक सापेक्षता का सिद्धान्त (Theory of Relativity) है। इन लेखों ने आइन्स्टाइन को एक वैज्ञानिक और गणितज्ञ के रूप में बहुत प्रसिद्ध कर दिया।

आइन्स्टाइन स्वतंत्रता के एक बहुत बड़े समर्थक होने के नाते भी बहुत प्रसिद्ध हुए। सन् 1933 में जब जर्मनी की बागडोर हिटलर के हाथों में आई तब वे अमरीका चले गए। वहां पर उन्होंने अपने अध्ययन और चिन्तन को जारी रखा।

आइन्स्टाइन की दयालुता के संबंध में अनेक कथाएं प्रचलित हैं। 1952 में एक लड़की ने उनसे गणित का एक प्रश्न हल करने की प्रार्थना की। आइन्स्टाइन ने अपने व्यस्त जीवन में से समय निकालकर उसे उत्तर भेजने का कष्ट किया।

ऑक्सीजन (OXYGEN) : कोई भी जीव बिना ऑक्सीजन के कुछ मिनटों से अधिक जीवित नहीं रह सकता। हालांकि हमारे जीवित रहने के लिए भोजन और पानी की भी आवश्यकता होती है, लेकिन इनके बिना हम काफी अरसे तक जीवित रह सकते हैं।

हम जब हवा में सांस लेते हैं तो हमें ऑक्सीजन मिलती है। ऑक्सीजन हवा में पाई जानेवाली गैसों में से एक है। समूची हवा का पांचवां भाग ऑक्सीजन है।

ऑक्सीजन एक तरह की गैस है, लेकिन यह कई ऐसे पदार्थों में भी पाई जाती है जो गैसें नहीं हैं। यह उन मूलतत्त्वों में से एक है जिनसे दुनिया की सभी चीज़ें बनी हैं। वैज्ञानिक जिन रसायनों को प्रयोग में लाते हैं, उनमें से कई में ऑक्सीजन मिली रहती है। यह हमारे चारों ओर पाई जानेवाली तमाम चीज़ों में मौजूद है। यह मक्खन, चीनी और पानी में भी है। इसी तरह यह रूई, चाकलेट और खड़िया मिट्टी में भी मिली होती है। यह गैस उन सभी चट्टानों में भी पाई जाती है जिनसे धरती की पपड़ी बनी है।

जिन चीज़ों में ऑक्सीजन पाई जाती है, उनकी संख्या बहुत लम्बी है। यहां तक कि स्वयं हमारे शरीर में भी कुछ मात्रा में ऑक्सीजन मौजूद है। यही बात दूसरे जीवों और पेड़-पौधों के बारे में भी सच है।

सभी जीवों को श्वास लेने के लिए ऑक्सीजन की ज़रूरत होती है। दुनिया के सभी जीव रोज़ बहुत अधिक ऑक्सीजन खर्च करते हैं। जब आग जलती है, तब उसे भी ऑक्सीजन की ज़रूरत पड़ती है। इस तरह दुनिया में आग जलाने के लिए ही बहुत अधिक ऑक्सीजन की ज़रूरत पड़ती है। फिर दुनिया की सारी ऑक्सीजन खत्म क्यों नहीं हो जाती? अगर हरे पौधे नहीं रहे होते, तो अब तक सारी ऑक्सीजन सचमुच खत्म हो गई होती। दिन में पेड़ ऑक्सीजन छोड़ते हैं, और रात में वे भी हमारी ही तरह ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। लेकिन जितनी ऑक्सीजन वे रात में खर्च करते हैं, उससे कई गुना ऑक्सीजन दिन में तैयार करते हैं। इस तरह हवा में ऑक्सीजन की मात्रा जैसी की तैसी बनी रहती है।

धरती से काफी ऊंचाई पर हवा बहुत पतली है। उस हवा में सांस लेकर कोई व्यक्ति अपनी आवश्यकता-भर की ऑक्सीजन नहीं पा सकता। पतली हवा में उड़ते हुए विमान-चालक अपने साथ ऑक्सीजन की टंकियां लिए रहते हैं। सौभाग्य की बात यह है कि वैज्ञानिकों ने हवा और दूसरे ऐसे पदार्थों से, जिनमें ऑक्सीजन मिली रहती है, ऑक्सीजन को प्राप्त करना सीख लिया है।

ऑक्सीजन को द्रव रूप में भी बदला जा सकता है। धरती से काफी ऊंचाई पर जानेवाले रॉकेट ईंधन के अतिरिक्त अपने साथ द्रव ऑक्सीजन भी लेकर उड़ते हैं।

आग (FIRE) : हमारे गुफावासी पूर्वज आग पर खाना पकाते थे, आग तापते थे और उसकी मदद से जंगली जानवरों को अपनी गुफाओं के पास नहीं फटकने देते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

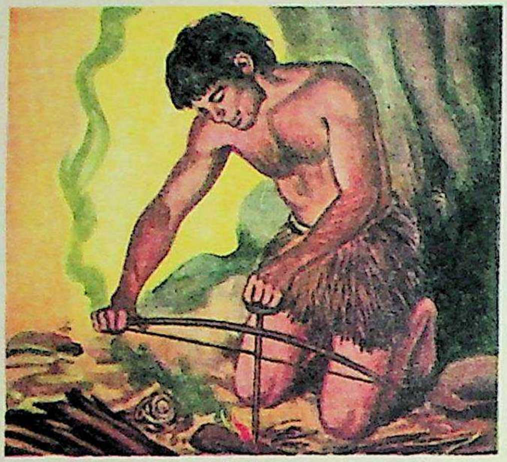

आदिम मनुष्य बरमे से आग जलाता था ।

प्रागैतिहासिक मनुष्यों ने आग बनाना सीखने के बहुत पहले ही उसका उपयोग करना शुरू कर दिया होगा, क्योंकि बिजली गिरने से जंगल में आग लग जाती होगी और उन्हें जली-जलाई आग मिल जाती होगी। अनुमान किया जाता है कि गुफावासी मनुष्य इस आग में से जलती हुई लकड़ियां अपने घर ले आते होंगे तथा उस आग में और लकड़ियां वगैरह डालकर उसे अधिक से अधिक दिनों तक बनाए रखते होंगे ।

लेकिन एक दिन किसीने आग जलाने की तरकीब खोज निकाली होगी । जहां तक हमें ज्ञात है, आग जलाने का सबसे पुराना तरीका दो सूखी लकड़ियों को आपस में रगड़ना है । इसके बाद लोगों ने पत्थर पर पत्थर वगैरह मारकर उससे निकलनेवाली चिनगारी से, और इसके सैकड़ों साल बाद आतशी शीशे से आग जलाने की तरकीबें निकालीं । आज हम माचिस जलाकर या बिजली का बटन दबाकर बड़ी आसानी से आग जला सकते हैं ।

वैज्ञानिकों का कहना है कि जब कोई पदार्थ जलता है तो उसके साथ ऑक्सीजन गैस भी जलती है । जब पदार्थ जल चुकता है तो उसके स्थान पर कुछ न कुछ अवश्य रह जाता है । लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि हमें यह 'कुछ' दिखाई ही पड़े । मिसाल के तौर पर जब लकड़ी जलती है तो जलने के बाद वह गायब हो जाती है । कुछ राख अवश्य बच जाती है, लेकिन लकड़ी का अधिकांश हिस्सा जलकर पानी की भाप और कार्बन डाइऑक्साइड में बदल चुका होता है ।

मान लीजिए आपको कच्चा अन्न खाना पड़े, बिना आग के सर्द मकानों में रहना पड़े, रेलगाड़ियों, मोटर-कारों और हवाई जहाज़ों के बिना जीवन बिताना पड़े, तो कैसा हो ? अब आप समझ सकते हैं कि आग के बिना जीवित रहना कितना कठिन है । लेकिन काबू के बाहर होने पर आग एक भयानक शत्रु भी साबित हो सकती है। हर वर्ष आग लगने से करोड़ों रुपये की हानि होती है और हज़ारों जानें चली जाती हैं ।

आनुवंशिकता (HEREDITY) : कोई भी व्यक्ति जंगली बेर के बीज बोकर उनसे गुलाब के फूलों की आशा नहीं कर सकता । गौरैया के अण्डों को सेकर उनमें से मोर के बच्चे कौन निकाल सकता है ? लेकिन जिन पौधों के बीज बोए जाते हैं, उनसे उन्हीं जैसे पौधे क्यों उगते हैं ? चूहे से चूहा और बिल्ली से बिल्ली ही क्यों पैदा होती है ? इसका उत्तर है : आनुवंशिकता, अर्थात् नियमित वंश-परम्परा, जिसके कारण ही ऐसा होता है । जो वस्तु जिस वंश की होगी, उसका बीज डाले जाने पर वैसा ही फल होगा । आनुवंशिकता में काम करने का ढंग भी शामिल है, और चीज़ों का कद तथा रंग भी । उदाहरण के लिए

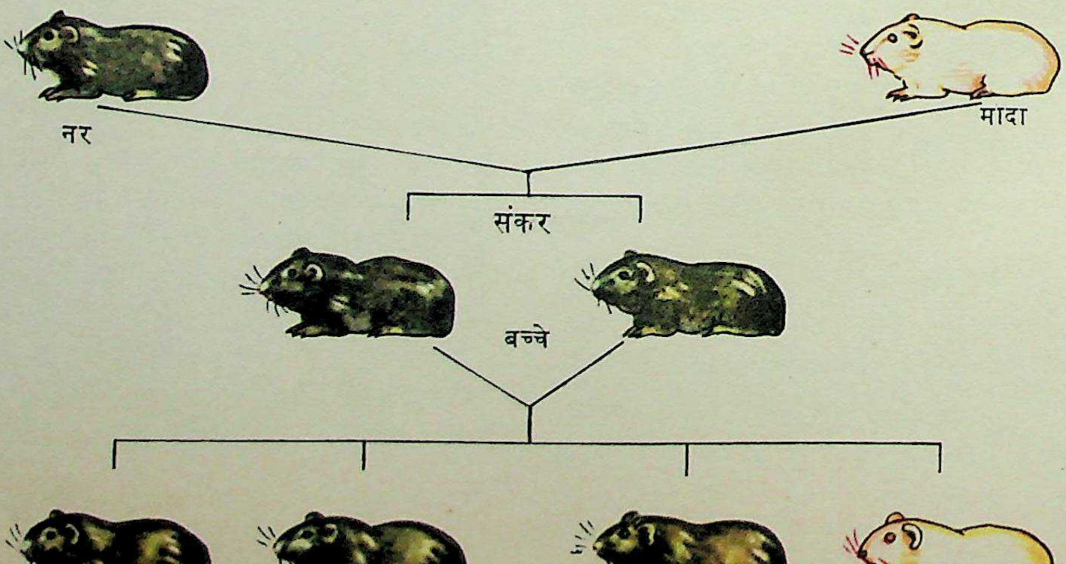

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बया पक्षी को बढ़िया लटकनेवाला घोंसला बनाना किसी-को सिखाना नहीं पड़ता है।

आनुवंशिकता अपने पूर्वजों से मिलनेवाली विशेषताओं का ही दूसरा नाम है। वैज्ञानिक जानते हैं कि जीवों में जो विशेषताएं होती हैं, वे उन्हें अपने माता-पिता से अत्यन्त सूक्ष्म कणों के रूप में मिलती हैं। इन सूक्ष्म कणों को 'जीन' (Genes) कहा जाता है। हमारा शरीर बहुत-सी कोशिकाओं से मिलकर बना है। जीन कोशिका का ही एक भाग है। अगर किसी सेब के पेड़ की शाखा को कहीं उसके अनुकूल स्थान में ले जाकर बो दिया जाए तो वह भी मूल पेड़ की तरह ही फलने-फूलने लगेगी। उसकी कोशिकाओं के जीन अपने पहले के पेड़ की ही भांति होंगे। ठीक उसी तरह जिस तरह किसी स्पंज के टुकड़े में वैसे ही छिद्र होते हैं जैसे उस स्पंज में थे जिसमें से कि टुकड़े को तोड़ा गया है।

अधिकांश पौधों और जीवों की उत्पत्ति नर और मादा से होती है। कुछ 'जीन' नर से और कुछ मादा से मिलते हैं। झरबेरी झाड़ी के बीज गुलाब तो नहीं, लेकिन ऐसा पौधा अवश्य उगा सकते हैं जिसमें एक की बजाय दो तरह के फूल हों। काली बिल्ली का बच्चा एकदम सफेद हो सकता है।

आनुवंशिकता का अध्ययन करनेवाले वैज्ञानिकों ने भिन्न प्रकार के पौधों की कलमें लगाने और इसी प्रकार भिन्न प्रकार के जीवों के मेल से संकर जीव पैदा करने के बहुत-से प्रयोग किए हैं। वे अपने मूल से बिलकुल भिन्न होते हैं। इस प्रकार के प्रयोग सबसे पहले आस्ट्रिया के एक ईसाई पादरी ग्रेगर मेंडेल ने किए थे। उसने पौधों के बारे में अपने मठ में प्रयोग करके बहुत-सी ज्ञानवर्धक बातों का संग्रह किया। उसने आनुवंशिकता के सिद्धान्त स्थिर किए। इनको 'मेंडेल नियम' कहा जाता है।

साथ के चार्ट को देखने से पता लगता है कि जब खुरदरे बालों वाले सफेद गिनीपिग और चिकने बालों वाले काले गिनीपिग के नर-मादा सन्तति पैदा करते हैं, तो बच्चा कैसा होता है। इनके सारे बच्चे काले और खुरदरे बालों वाले होंगे। इनको खुरदरे सफेद बाल और चिकने काले बाल दोनों ही के जीन मिलते हैं। लेकिन खुरदरे बालों वाले और काले रंग के जीन अधिक सशक्त होते हैं। परंतु ये नये गिनीपिग सफेद रंग और चिकने बालों के जीन अपने कुछ बच्चों को देते हैं। इसलिए तीसरी पीढ़ी के बच्चे अपने माता-पिता की अपेक्षा अपने दादा-दादी में से किसीके अधिक समान होंगे।

यदि कोई पौधा या जानवर दो तरह की विशेषता के जीन आनुवंशिकता द्वारा प्राप्त करता है, और दोनों का प्रभाव बराबर रहता है, तो दोनों के मिलने से तीसरी विशेषता उत्पन्न होती है। अगर लाल गाय और सफेद रंग का सांड हो, तो उनका बछड़ा न तो सफेद होगा और न लाल। वह भूरा, यानी दोनों के बीच के रंग का होगा।

आनुवंशिकता के इस ज्ञान के कारण वैज्ञानिक ऐसे पौधे और जानवर पैदा करने में समर्थ हुए हैं जो हमारी ज़रूरतों को अधिक अच्छी तरह पूरा करते हैं। उदाहरण के लिए मक्का को ले लीजिए। वैज्ञानिकों ने संकर-मक्का के बीज उगाने में जो सफलता प्राप्त की है, उससे फसल भी अच्छी होती है और उस मक्का में पौष्टिक तत्त्व भी अधिक होते हैं। ऐसी बात पहले किसी मक्का में नहीं थी।

कभी-कभी किसी पौधे या जानवर में कुछ परिवर्तन हो जाते हैं। उनके पहले के पौधों और जानवरों का

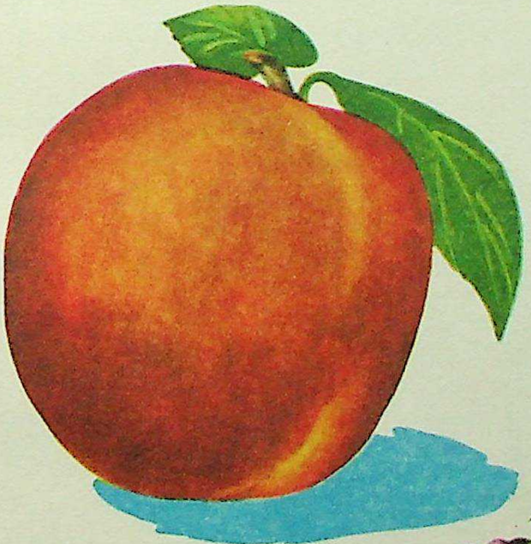

शफतालू आड़ू का उत्परिवर्ती फल है।

लोगनबेरी को जंगली ब्लैकबेरी का उत्परिवर्ती समझा जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कितना भी अध्ययन किया जाए, पर परिवर्तनों का कारण समझ में नहीं आता। एक लता का बीज बोया गया। लेकिन लता की जगह बौनी-सी झाड़ी उग आई। यह बौनापन उसके बीजों द्वारा बाद की और लताओं में भी पहुंचता गया। जो पौधे ऐसे परिवर्तित हो जाते हैं, उन्हें उत्परिवर्ती (Mutants) कहते हैं। वैज्ञानिकों का मत है कि ऐसा तब होता है जब किसी कारण जीन की रचना में कोई परिवर्तन हो जाता है।

अधिकांश उत्परिवर्तियों में हमारी इच्छा के अनुसार परिवर्तन नहीं होते। लेकिन कुछ में होते हैं। अगर वैज्ञानिक किसी प्रकार यह जान लेते कि जीन की रचना में कैसे परिवर्तन किया जा सकता है, तो बड़ा लाभ होता। वे पौधों और जानवरों को शीघ्रता से उन्नत किस्म का बना लेते। आजकल वे बहुत-से प्रयोग कर रहे हैं। इन प्रयोगों में वे परमाणु ऊर्जा का भी उपयोग कर रहे हैं।

आनुवंशिकता मानव के लिए भी उतने ही महत्त्व की चीज़ है जितनी अन्य जीवों के लिए। वैज्ञानिकों को मानव की आनुवंशिकता के बारे में उतना ज्ञान नहीं है, जितना अन्य जीवों के बारे में है। इसका कारण यह है कि उन्हें इस क्षेत्र में प्रयोगों का अवसर नहीं मिलता। लेकिन वे इस बात का अधिकाधिक पता लगा रहे हैं कि वंशानुगत क्रम से कौन-से गुण मिल सकते हैं, और कौन-से नहीं।

उदाहरण के लिए मान लीजिए कि एक बढ़ई है। वह अपने काम में बड़ा होशियार है। लेकिन वह अपने काम की दक्षता बच्चों में जन्मजात रूप से नहीं उत्पन्न कर सकता। यह बात वैज्ञानिक जानते हैं। बच्चों को यदि बढ़ई बनाना है, तो उन्हें बढ़ईगीरी का काम सिखाना पड़ेगा। लेकिन बढ़ई के बच्चों के हाथ ऐसे हो सकते हैं जिनके द्वारा वे औज़ारों को ज़्यादा अच्छी तरह से काम में ला सकें। ज्योतिष विद्या के प्रोफेसर का बालक सिर्फ इस कारण अपने-आप नक्षत्रों का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता कि उसका पिता नक्षत्रों के बारे में बहुत-कुछ जानता है। किन्तु वह मेधावी हो सकता है। और यह मेधा उसे नक्षत्र-जगत् के सारे ज्ञान को प्राप्त करने में बहुत सहायक हो सकती है। आनुवंशिकता से किसी बच्चे को क्षय रोग नहीं होता, लेकिन यदि उसके माता-पिता में से दोनों को या किसी एक को क्षय हो तो बच्चे के शरीर में ऐसी स्वाभाविक वृत्ति हो सकती है कि रोगों के कीटाणु शरीर में पहुंचते ही जड़ पकड़ लें!

आनुवंशिकता के बारे में ऐसे बहुत-से रहस्य हैं जिन्हें अभी कोई नहीं जान पाया है। आज पहले से भी अधिक संख्या में वैज्ञानिक इन पहेलियों को सुलझाने में लगे हैं।

आर्कराइट, सर रिचार्ड (SIR RICHARD ARKWRIGHT 1732-1792) : इन्हें आधुनिक कपड़ा उद्योग का जन्मदाता कहा जाता है। बचपन में आर्कराइट एक नाई की दूकान पर काम करते थे। तीस वर्ष की उम्र में हारग्रीव्स नामक एक आविष्कारक से उनकी भेंट हुई, जिसने सूत कातने की मशीन 'स्पिनिंग जेनी' बनाई थी। आर्कराइट ने हारग्रीव्स की मशीन में सुधार किए और कपड़ा बुनने का पहला कारखाना स्थापित किया। इस कारखाने के कारण उन्हें बुनकरों के प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा, पर मशीन की होड़ के सामने बेचारे बुनकरों की कुछ भी न चली।

आर्कराइट के कारखाने के बाद तो कपड़ा उद्योग में एक क्रांति-सी आ गई। इसीलिए आर्कराइट को औद्योगिक क्रांति के जनकों में भी माना जाता है।

आर्किमीडीज़ (ARCHIMEDES 287 ?-212 ई० पू०) : ये यूनान के सिराक्यूज़ नगर के रहनेवाले थे। सिराक्यूज़ के राजा हिएरो ने एक सुनार को मुकुट बनाने के लिए कुछ सोना दिया। सुनार जब कुछ ही दिनों में मुकुट तैयार कर लाया तो राजा को शक हुआ कि सुनार ने

आर्किमीडीज़ अपनी प्रयोगशाला में

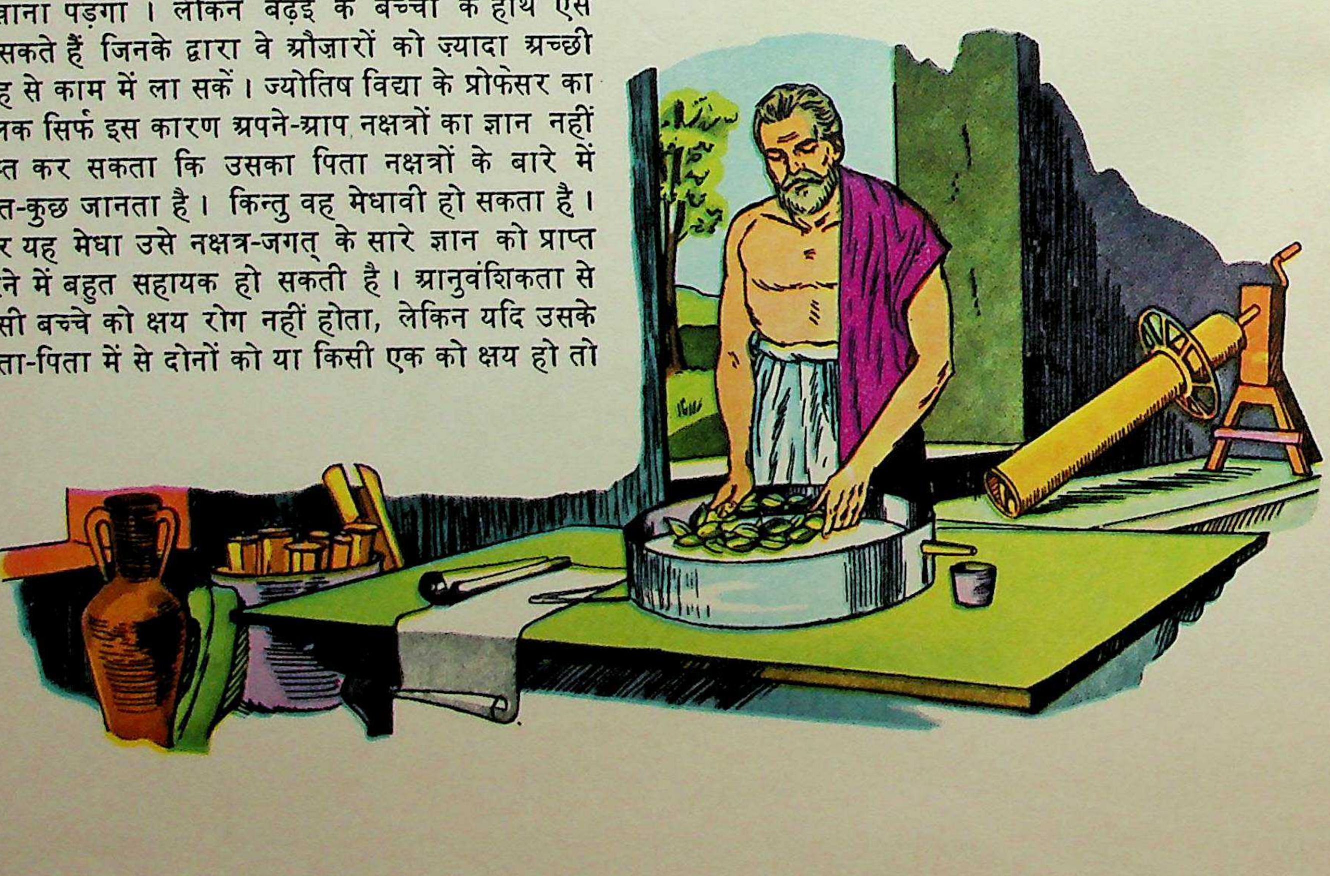

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोने में कुछ मिलावट की है। उसने अपने नगर के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आर्किमीडीज़ से कहा कि मुकुट को क्षति पहुंचाए बिना इस बात की जांच की जाए।

शुरू में तो आर्किमीडीज़ कुछ चकराए। लेकिन एक दिन इसका हल अचानक ही मिल गया। वे पानी-भरे टब में नहाने के लिए उतरे, तो उन्होंने देखा कि उसमें से कुछ पानी नीचे गिरा है। वे टब से बाहर निकले तो उन्होंने देखा कि उसमें पानी कम हो गया है। बस, वे खुशी के मारे चिल्ला पड़े, 'यूरेका !' ('पता लग गया !') इससे उन्हें अपनी समस्या को हल करने का तरीका सूझ गया।

उन्होंने एक बर्तन को ऊपर तक पानी से भर दिया और फिर उसमें मुकुट को डुबा दिया। बर्तन से गिरे पानी को उन्होंने नाप लिया। फिर उन्होंने मुकुट निकाल-कर और बर्तन को खाली करके पानी से फिर भरा और उसमें मुकुट के वज़न जितना ही सोना डुबाया। गिरे हुए पानी को नापकर उन्होंने देखा कि यह पहले जितना नहीं है। इससे साबित हो गया कि सुनार ने मिलावट की है।

आर्किमीडीज़ ने कितनी ही नई खोजें कीं। ज्यामिति में एक सिद्धांत उन्हींके नाम पर है, क्योंकि यह उन्हींका निकाला हुआ है। जब रोमन लोगों ने सिराक्यूज़ पर हमला किया, तो आर्किमीडीज़ अपने काम में इतने लीन थे कि उन्होंने रोमन सैनिकों को देखा ही नहीं। रोमन सिपाहियों ने प्रयोगशाला में ही उन्हें मार डाला।

इलेक्ट्रॉनिकी (ELECTRONICS) : सन् 1913 में अमरीका के न्यूयार्क नगर में एक वैज्ञानिक पर मुकदमा चल रहा था। उसपर यह अभियोग लगाया गया था कि वह एक व्यर्थ के आविष्कार के शेयर बेचकर धन कमाने की कोशिश कर रहा है। जूरी के सदस्यों ने उसे निर्दोष घोषित किया, लेकिन न्यायाधीश ने उसे बहुत जली-कटी सुनाई। उसने आविष्कर्ता से कहा कि वह "मामूली माली वगैरह का कोई काम कर ले और उसीमें लगा रहे।" उस आविष्कर्ता का नाम ली द फारेस्ट था। यह आविष्कार ऑडियन वाल्व (Audion Valve) का था जो बीसवीं सदी के महानतम आविष्कारों में एक सिद्ध हुआ। अधिकांश आविष्कारों की तरह ही यह भी अपने पहले के अनेक आविष्कारों और खोजों पर आधारित था। लेकिन इन आविष्कारों और खोजों में ली द फारेस्ट ने अपने निजी महत्त्वपूर्ण विचारों को भी जोड़ा था। रेडियो में लगनेवाले नये वाल्व के प्रयोग के साथ ही हमारे वर्तमान इलेक्ट्रॉनिक युग का आरम्भ होता है।

इलेक्ट्रॉन वाल्व, जो थोड़े-बहुत फारेस्ट के ऑडियन वाल्व से मिलते-जुलते हैं, आज सिर्फ रेडियो में ही काम में नहीं आते, टेलीविज़न, रेडार और अधिक दूरी के टेलीफोन में भी इनका प्रयोग होता है। हिसाब की बड़ी-बड़ी मशीनों में, जिन्हें 'इलेक्ट्रॉनिक मस्तिष्क' कहते हैं, तथा इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप में भी ये लगे रहते हैं। इनसे बोलते हुए चलचित्र, तथा रिकार्ड बनाने में भी सहायता मिलती है। डाक्टरों को रोगों का निदान और चिकित्सा करने में भी इलेक्ट्रॉन वाल्व से सहायता मिलती है। इन्हींकी बदौलत आज हम नियंत्रित मिसाइल भेजने में भी समर्थ हो सके हैं। मिलों और कारखानों में इन्हें कई तरह से काम में लाते हैं।

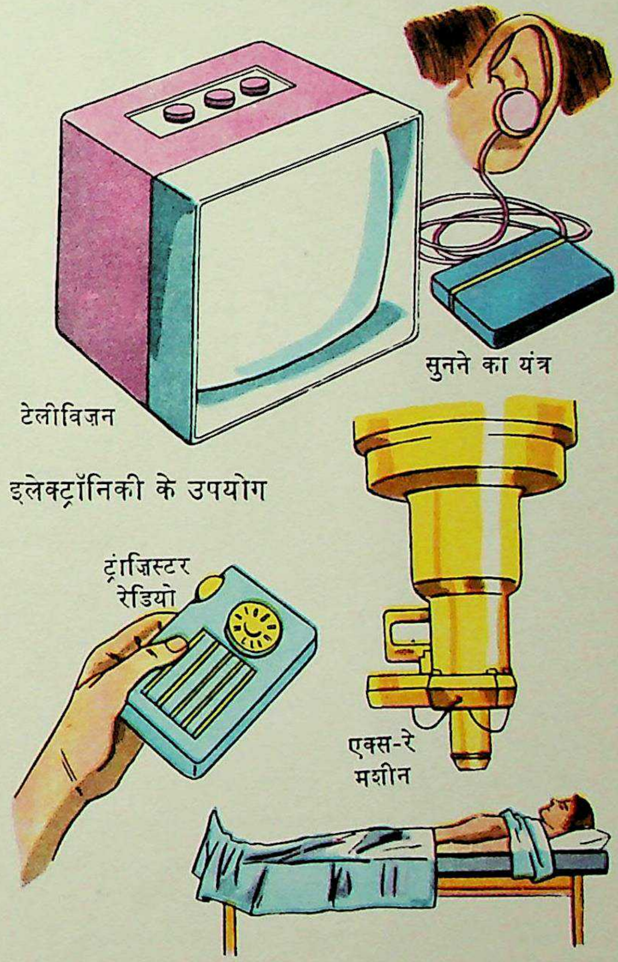

इलेक्ट्रॉनिकी के उपयोग

इलेक्ट्रॉनिकी के युग के पहले बिजली से भी बहुत अद्भुत काम किए जा रहे थे। तार और टेलीफोन के द्वारा बिजली के करेंट की सहायता से खबरें एक जगह से दूसरी जगह भेजी जा रही थीं। सड़कों और मकानों में रोशनी करने के लिए, तरह-तरह की मशीनों को चलाने के लिए, सस्ती धातुओं पर बहुमूल्य धातुओं की कलई चढ़ाने के लिए, भारी चीज़ों को उठानेवाली चुम्बक मशीनों को चलाने के लिए, चीज़ों को गरम करने तथा जीवन को दूसरे कई रूपों में अधिक सुगम बनाने के लिए बिजली से काम लिया जा रहा था। ऐसा मालूम होता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इलेक्ट्रॉनिकी के अन्य उपयोग

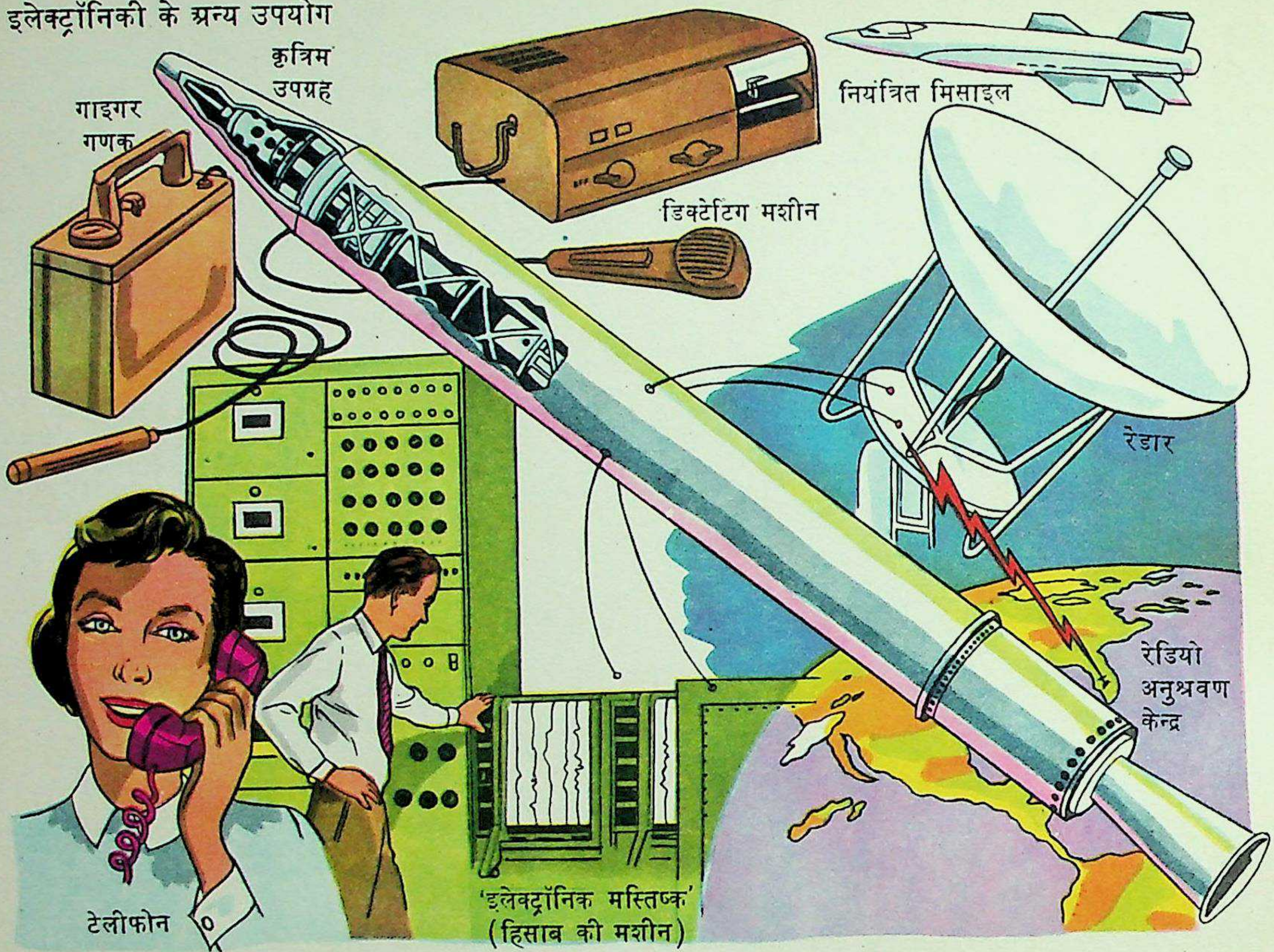

था कि अब बिजली द्वारा करने के लिए विशेष कोई चीज़ नहीं छूटी है। इसी बीच इलेक्ट्रॉनिकी का एकदम नया क्षेत्र खुल गया।

इलेक्ट्रॉनिकी या इलेक्ट्रॉनिक्स इलेक्ट्रॉन से निकला है। इलेक्ट्रॉन बिजली के सूक्ष्म कण होते हैं। हर पदार्थ का प्रत्येक परमाणु अंशतः इलेक्ट्रॉन से बना हुआ है। बिजली के करेंट में इलेक्ट्रॉन द्रव और ठोस पदार्थों में से होकर दौड़ते हैं। ये एक परमाणु से दूसरे परमाणु पर उछलते चलते हैं। इलेक्ट्रॉन वाल्व में इलेक्ट्रॉन एक दुर्लभ गैस या शून्य में से होकर गुज़रते हैं। इलेक्ट्रॉन कुछ धातुओं में से बाहर निकल जाते हैं। क्योंकि इस दशा में ये परमाणु से अलग हो जाते हैं, इसलिए इन्हें 'स्वतन्त्र इलेक्ट्रॉन' कहते हैं।

इलेक्ट्रॉन को किसी वस्तु से अलग निकालने के कई उपाय हैं। रेडियो वाल्व में इसके लिए ताप से काम लिया जाता है। रेडियो सेट में लगी 'बिजली की आंख' में धातु की एक बहुत नाज़ुक प्लेट लगी रहती है। जब इसपर रोशनी की किरणें पड़ती हैं तो इलेक्ट्रॉन इससे बाहर निकलते हैं। टेलीविज़न सेट की चित्र नली में उच्च विद्युत् दाब (Voltage) द्वारा इलेक्ट्रॉन अलग किए जाते हैं।

कुछ इलेक्ट्रॉन वाल्व मटर के दाने से भी छोटे होते हैं। लेकिन टेलीविज़न सेट में चित्र नली की लम्बाई दो फुट से भी अधिक हो सकती है।

आजकल इलेक्ट्रॉनिक वाल्व के स्थान पर कहीं-कहीं ट्रांज़िस्टरों को प्रयोग में लाया जा रहा है। ट्रांज़िस्टर जर्मेनियम के क्रिस्टलों से बनता है।

इलेक्ट्रॉनिकी द्वारा क्या-क्या किया जा सकता है, इसे बता पाना कठिन है। इसके द्वारा अनेक रहस्यों के खुलने की संभावना है। इसकी सहायता से दूरबीन द्वारा उन सुदूर चीज़ों को भी देखा जा सकता है जो आज हमारी दृष्टि से परे हैं। इसकी सहायता से वस्तुओं की ऐसी खोट भी पकड़ी जा सकेगी जो सामान्यतया छिपी रह जाती है, तथा गहरे समुद्र में उतरे बिना ही समुद्र तल की खोजबीन की जा सकेगी। इलेक्ट्रॉनिकी की सहायता से हम अंतरिक्ष में स्थित अपने कृत्रिम उपग्रहों द्वारा भेजे गए संकेत सुन सकते हैं। इलेक्ट्रॉनिकी के क्षेत्र में अभी और अधिक प्रगति की संभावना है।

ईंधन (FUELS) : मक्खन में जलने का गुण है। लेकिन वह ईंधन नहीं है। घर पर आग जलाने के लिए या अपनी कार चलाने के लिए मक्खन कोई नहीं खरीदता। सैटिन और अखरोट की लकड़ी भी मज़े में जलती है। लेकिन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक पौंड ईंधन से प्राप्त होनेवाली गर्मी

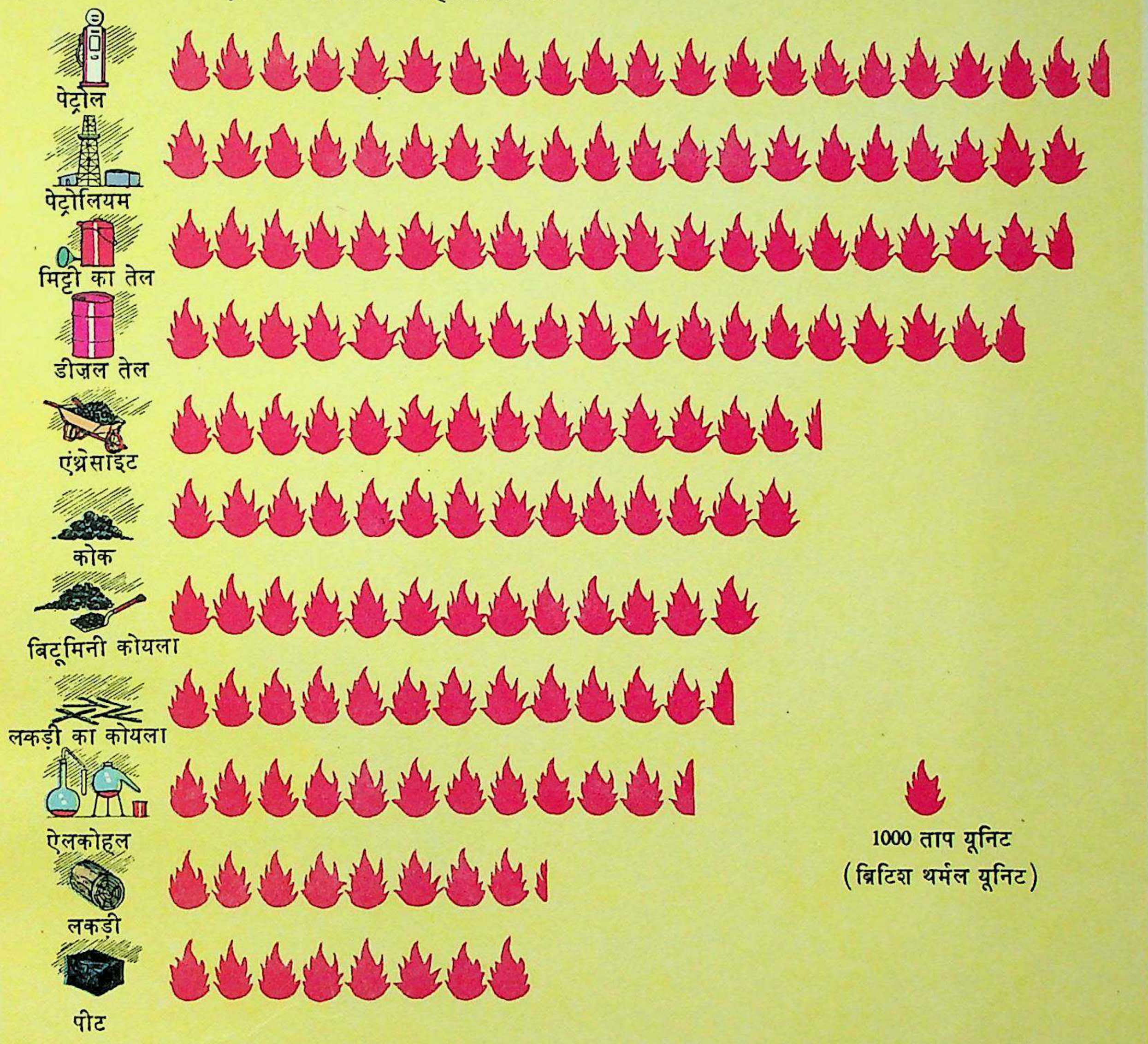

एक घनफुट गैस-ईंधन से प्राप्त होनेवाली गर्मी

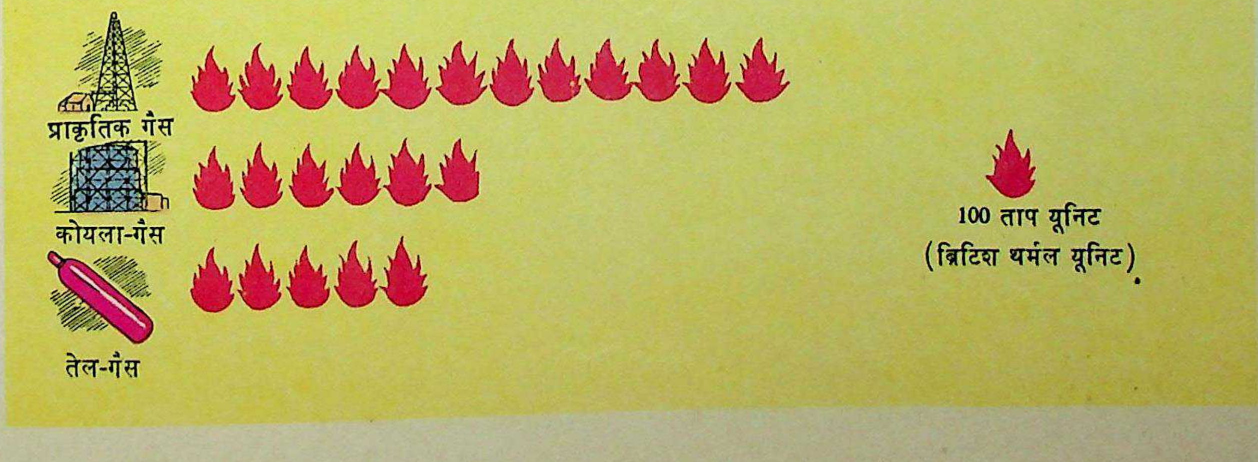

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्हें कीमती वस्तु माना जाता है, ईंधन नहीं। ईंधन कहलानेवाले पदार्थ में जलने का गुण तो होना ही चाहिए, साथ ही उसे सस्ता भी होना चाहिए। मक्खन, सैटिन और अखरोट की लकड़ी इतनी महंगी हैं कि स्टोवों, अंगीठियों और इंजनों में उनका प्रयोग नहीं किया जा सकता। इसके अलावा ईंधन के लिए यह भी ज़रूरी है कि वह जलने पर काफी गर्मी उत्पन्न करे। रद्दी अखबारों से आग बनाना बहुत आसान है, लेकिन वे कुछ ही देर जलकर बुझ जाते हैं और उनसे बहुत कम गर्मी मिलती है।

आजकल आम तौर पर इन बारह पदार्थों का प्रयोग ईंधन के रूप में होता है :

पेट्रोल	लकड़ी का कोयला
डीज़ल तेल	ऐलकोहल
मिट्टी का तेल	*लकड़ी
*पक्का कोयला	*पीट
*कच्चा कोयला	*प्राकृतिक गैस
कोक	कोयला-गैस

इस सूची से पता चल जाता है कि ईंधन—गैस, द्रव या ठोस—किसी भी रूप में हो सकता है। ठोस ईंधन के मुकाबले गैस और द्रव ईंधन इस माने में अच्छा होता है कि उसमें राख नहीं बचती, लेकिन उसमें से ठोस ईंधन के मुकाबले धुआं अधिक उठता है।

सूची में दिए गए सभी पदार्थ जलने पर इतनी गर्मी देते हैं कि ईंधन कहला सकें, लेकिन इनमें से कुछ दूसरों से कहीं अच्छे हैं। मिसाल के तौर पर एक टन पक्के कोयले से हमें एक टन पीट के मुकाबले दोगुनी गर्मी मिलती है।

सूची में दिए गए कुछ ईंधनों पर तारे (*) का निशान लगा हुआ है। ये प्राकृतिक ईंधन हैं। हम इन्हें उसी रूप में जलाते हैं जिस रूप में ये पाए जाते हैं। बाकी ईंधन मनुष्य के बनाए हुए हैं। पेट्रोल, डीज़ल और मिट्टी का तेल पेट्रोलियम से बनाए जाते हैं। कोक और कोयला-गैस कोयले से तैयार होती है। लकड़ी का कोयला और ईंधन के रूप में काम आनेवाला अधिकतर ऐलकोहल लकड़ी से प्राप्त होता है।

प्राकृतिक गैस और कोयला-गैस गैस के चूल्हों के लिए अच्छी रहती हैं, क्योंकि उनमें राख या कालिख वगैरह का झंझट भी नहीं रहता। यदि हमारे गुहावासी पूर्वज—जिनके पास ईंधन के नाम पर सिर्फ लकड़ी थी जिसका धुआं आग बनाते समय बराबर उनकी गुफा में भरा रहता था—आज के लोगों को पाइप में से निकलती हुई एक अदृश्य चीज़ पर खाना पकाते देख पाते, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहता।

ऊर्जा (ENERGY) : जब हम किसी बच्चे को उछलते-कूदते देखते हैं तो उसे सराहते हुए कहते हैं, "वाह, इसमें कितनी शक्ति है!" इसी तरह जब हम किसी मज़दूर को भारी बोझा लादे सीढ़ियों पर चढ़ते देखते हैं तो सहानुभूति प्रकट करते हुए कहते हैं, "बेचारे को कितनी शक्ति लगानी पड़ रही है।" खेल हो चाहे काम, सबमें शक्ति खर्च होती है। इस शक्ति को, जिसके बिना कोई चीज़ हिल नहीं सकती, ऊर्जा कहते हैं।

हरे पौधे अपना भोजन आप बनाते हैं। इसके लिए उनमें ऊर्जा होनी चाहिए। वह उन्हें सूर्य से मिलती है। जब धूप, जो स्वयं एक ऊर्जा है, पौधों पर पड़ती है, तो वे पानी और कार्बन डाइऑक्साइड को मिलाकर शर्करा तैयार करते हैं। मनुष्य और पशु भी अपनी ऊर्जा सूर्य से ग्रहण करते हैं, पर परोक्ष रूप में। वे पौधों को खाते

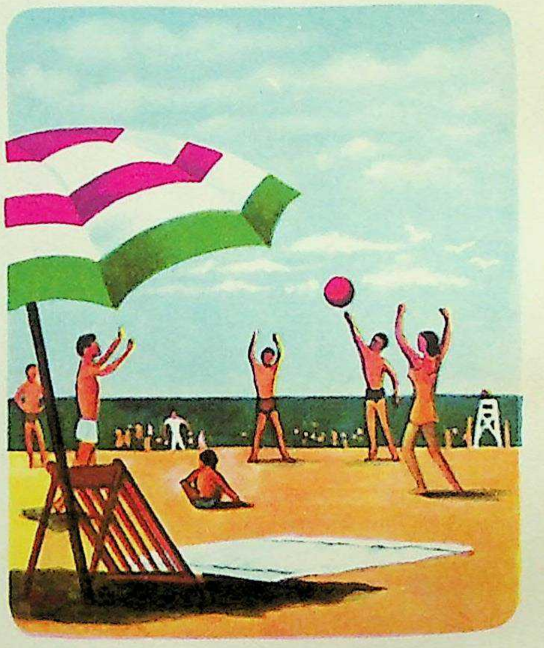

खेल हो चाहे काम, सबमें ऊर्जा खर्च होती है।

हैं या फिर उन पशुओं को खाते हैं जो खुद पौधों को खाते हैं। पशु जो खूराक खाते हैं, वह उनके शरीर में धीरे-धीरे 'जलती है' और मांसपेशीय ऊर्जा तथा ताप पैदा करती है। यह ताप भी एक प्रकार की ऊर्जा ही है।

बांध पर पछाड़ें खाता जल एक बड़ी पनचक्की को चला सकता है। उसमें ऊर्जा उसकी तेज़ रफ्तार के कारण है। बारूद के एक पलीते से एक पूरी इमारत उड़ाई जा सकती है। उसमें रासायनिक ऊर्जा है। विद्युत्, चुम्बक शक्ति, ध्वनि, ये सब ऊर्जा के विभिन्न रूप हैं।

आजकल एक नई ऊर्जा को नियंत्रित करने के प्रयास चल रहे हैं। वह है परमाणु शक्ति। शीघ्र ही वह समय आनेवाला है जब संसार के अधिकतर काम इसी ऊर्जा से हुआ करेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

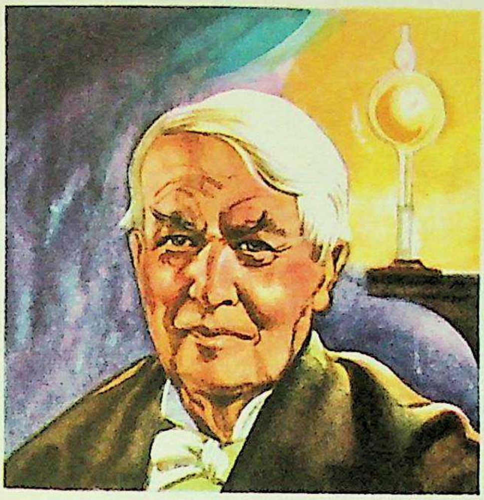

बिजली के बल्ब के आविष्कारक, टॉमस एडिसन

एडिसन, टॉमस अल्वा (THOMAS ALVA EDISON 1847–1931) : 'मेनलो पार्क के जादूगर' के नाम से मशहूर, टॉमस अल्वा एडिसन को विश्व का सबसे महान आविष्कारक कहा जा सकता है। उन्होंने हज़ार से भी अधिक चीज़ें ईजाद कीं, जिनमें से कितनी ही तो बहुत ही अद्भुत हैं।

उनकी सबसे मशहूर ईजाद बिजली का बल्ब है। इससे पहले जितनी भी तरह के लैम्प थे उन सबमें रोशनी के लिए कोई न कोई चीज़—मिट्टी का तेल, मोम या गैस—जलानी पड़ती थी। कोई भी लैम्प ऐसा न था जिसमें किसी चीज़ को जलाने की बजाय, उसे तपाकर इतना दहकाया जा सके कि वह रोशनी देने लगे।

1879 में बहुत-से वैज्ञानिक ऐसा लैम्प ईजाद करने की कोशिश में लगे थे। इसके लिए तीन बातें ज़रूरी थीं। एक तो, तपाने का ऐसा तरीका जिससे तपनेवाली चीज़ दहकने और रोशनी देने लगे। दूसरे, हवा को उससे दूर रखना जिससे कि वह चीज़ जलने न पाए। तीसरे, ऐसी चीज़ जो बहुत देर तक तपती और दहकती रहे। तपनेवाली चीज़ यदि एक महीन तार या रेशे की तरह की, यानी फिलामेंट हो तो तपाने के लिए बिजली सबसे अच्छी थी। हवा की समस्या एडिसन ने बिजली की एक कुप्पी बनाकर सुलझा ली। उसमें से तमाम हवा निकालकर उसे अच्छी तरह बंद कर दिया गया था। एकमात्र और सबसे बड़ी समस्या अब यही रह गई कि फिलामेंट किस चीज़ का बनाया जाए कि वह देर तक दहकता और रोशनी देता रहे।

फिलामेंट के लिए एडिसन ने हज़ारों चीज़ें आज़माईं। मेनलो पार्क की उनकी प्रयोगशाला में निरन्तर परीक्षण चल रहे थे। अंत में एक खास किस्म के बांस के रेशे को जलाकर कार्बन का फिलामेंट बनाया गया। 21 अक्तूबर, 1879 को एडिसन अपने इस नये लैम्प को आज़माने के लिए तैयार हुए। स्विच खोल दिया गया। लैम्प चमका और मधुर प्रकाश देने लगा। सभीकी निगाहें उसपर जमी थीं कि देखें यह कितनी देर रोशन रहता है। पूरे दो दिन और दो रात लोग प्रयोगशाला में जागते रहे और लैम्प को देखते रहे। आखिर प्रयोग सफल रहा। बाद में दूसरे लोगों ने इस लैम्प में कई सुधार किए।

एडिसन का जन्म मिलान (ओहायो, अमरीका) में हुआ था। उन्हें स्कूल की अपेक्षा घर पर मां से पढ़ना-लिखना सीखना ज़्यादा अच्छा लगता था। वे स्वयं बहुत-कुछ पढ़ते रहते थे और तरह-तरह के प्रयोग करते रहते थे। बचपन में ही अपने मकान के तहखाने में उन्होंने अपने लिए एक छोटी-सी प्रयोगशाला बना ली थी।

अपने प्रयोगों के लिए उन्हें तरह-तरह की चीज़ें खरीदनी पड़ती थीं। इसलिए एडिसन छोटी उम्र से ही कमाने लगे। वे पूरे पंद्रह के भी नहीं हुए थे जब 'वीकली हेरल्ड' नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकालने लगे। उसका छापाखाना मालगाड़ी के एक डिब्बे में जमाया गया था, जहां कि वे काम किया करते थे।

एक दिन एडिसन की वजह से एक बच्चे की जान बच गई। इसपर उस बच्चे के बाप ने खुश होकर उन्हें टेलीग्राफ का काम सिखा दिया। बाद में एडिसन ने टेलीग्राफ में कई महत्त्वपूर्ण सुधार किए।

बिजली के बल्ब के अलावा, एडिसन ने चलचित्र, फोनोग्राफ, बहुविध टेलीग्राफ, कार्बन टेलीफोन ट्रांसमीटर, माइक्रोफोन आदि कितनी ही उपयोगी और महत्त्वपूर्ण चीज़ें ईजाद कीं।

ऐलकोहल (ALCOHOL) : ऐलकोहल की कितनी ही किस्में हैं, जिनमें से दो प्रमुख किस्में धान्य ऐलकोहल और काष्ठ ऐलकोहल हैं।

धान्य ऐलकोहल को यह नाम इसलिए मिला कि यह अनाजों, जैसे गेहूं, चना, मक्का, जौ आदि से बनाया जा सकता है। धान्य ऐलकोहल शीरे, आलू, तथा फलों से भी बनाया जा सकता है। ऐलकोहल बनाने के लिए खमीर नामक सूक्ष्म पौधों का उपयोग किया जाता है।

सभी तरह की शराबों में धान्य ऐलकोहल होता है। अत्यधिक धान्य ऐलकोहल पीने से नशा हो जाता है और नशे में लोग तरह-तरह की अजीब हरकतें करने लगते हैं—बड़बड़ाना, लड़खड़ाना, होश में न रहना, बेबात हंसना, रोना, चीखना-चिल्लाना आदि। नशेबाज़ आदमी कोई काम ठीक तरह नहीं कर सकता—खासकर नशे की हालत में।

काष्ठ ऐलकोहल लकड़ी से तैयार किया जाता है और यह ज़हरीला होता है।

ऐलकोहल तरह-तरह की चीज़ें बनाने के काम में आता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। इसलिए इसका बड़ी मात्रा में उत्पादन किया जाता है। ऐलकोहल में कई ऐसी चीज़ें घुल जाती हैं जो पानी में नहीं घुल सकतीं। ऐलकोहल से बननेवाली कुछ खास चीज़ें हैं: नकली पेट्रोल, नकली रबर, दवाइयां, रंग-रोगन, सुगंधियां, रासायनिक पदार्थ आदि। बहुत ठंडे देशों में थर्मामीटरों में भी इसका उपयोग किया जाता है, क्योंकि यह बिना जमे बहुत अधिक ठंड सह लेता है। इसका ईंधन के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है—यह धुआं नहीं देता और इसकी लौ बहुत गर्मी देती है।

भारत में ऐलकोहल बनाने के कई कारखाने हैं और कई नये कारखाने बनाए जा रहे हैं।

कंपास, चुम्बकीय (MAGNETIC COMPASS) : मनुष्य ने नावें बना लीं। पर वह सैकड़ों वर्ष तक समुद्र में दूर जाने का साहस न करता था। दिशाएं सूर्य और तारों से

रोमवासी कंपास के बिना समुद्र-यात्रा करते थे।

जानी जाती थीं। जब बादल होते थे तो उनका पता न चलता था।

लगभग 500 वर्ष पूर्व दिशा जानने की एक युक्ति बनी। यह कंपास, कुतुबनुमा या दिक्सूचक का आविष्कार था। इसमें एक छोटा चुम्बक कील पर इस प्रकार सधा होता था कि सरलता से घूम सकता था। अब मनुष्य समुद्र में दूर-दूर की यात्राएं करने लगा।

चुम्बकीय कंपास दिशा इसलिए बताता है कि पृथ्वी एक विशाल चुम्बक की भांति काम करती है। उसका चुम्बकीय बल कंपास की सुई को खींचकर उत्तर-दक्षिण स्थिति में ले आता है।

सबसे पहला दिक्सूचक शायद चीन या इटली में बनाया गया था। पानी के कटोरे में लकड़ी या कार्क के छोटे टुकड़े तिराए जाते थे और उनपर चुम्बकीय पत्थर—मैगनेटाइट—के टुकड़े रखे जाते थे। मनुष्य ने जब इस्पात के चुम्बक बनाना जान लिया तो बढ़िया कंपास बनाए जाने लगे।

चित्र में एक जेबी कंपास दिखाया गया है। जहाज़ों

कंपास अमरीका की खोज में सहायक सिद्ध हुआ।

का कंपास बड़ा और जटिल होता है। उसमें एक चपटी चकती—कंपास कार्ड—पर कई चुम्बक लगे होते हैं। यह कार्ड एक कीली पर घूमता है। कार्ड और कीली कांच की एक ढकी प्याली में होते हैं। कार्ड एक द्रव पर तिरता है। इससे वह जहाज़ के हिलने से प्रभावित नहीं होता। चुम्बक कार्ड को घुमाते हैं और दिशा बताते हैं।

कंपास की सहायता से ठीक दिशाएं बताना आसान नहीं है। अधिकतर स्थानों पर दिक्सूचक की सुई ठीक उत्तर की ओर संकेत नहीं करती। वह चुम्बकीय उत्तरी ध्रुव की ओर संकेत करती है, और यह ध्रुव सच्चे उत्तरी ध्रुव से कई सौ मील दूर है। इस अशुद्धि को दूर करने के लिए चार्ट बनाए गए हैं। उनकी सहायता से उत्तर दिशा मालूम की जाती है।

बहुत-से बड़े जहाज़ों में आजकल एक दूसरे प्रकार का दिक्सूचक इस्तेमाल किया जाता है। इसको जाइरो कंपास कहते हैं। हवाई जहाज़ों में भी जाइरो कंपास इस्तेमाल किया जाता है। (देखें : चुम्बक)

एक जेबी कंपास

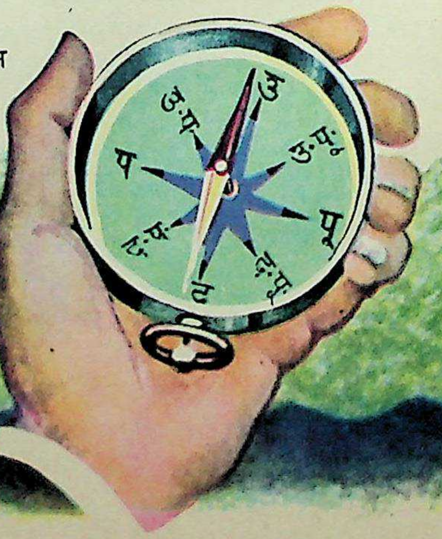

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कार्बन (CARBON) : दुनिया का निर्माण जिन तत्त्वों से हुआ है, उनमें कार्बन एक बहुत महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। रसायन-विज्ञान की एक पूरी शाखा सिर्फ कार्बन के हज़ारों प्रकार के यौगिकों के बारे में ही अध्ययन करती है।

कोई सजीव पदार्थ बिना कार्बन का नहीं हो सकता। पौधों और जीवों का एक भाग कार्बन ही होता है। हम खुद भी अंशतः कार्बन से बने हैं।

हमारे सामान्य ईंधनों का एक भाग भी कार्बन ही होता है। लकड़ी, कोयला, कोक, लकड़ी का कोयला, ईंधन के काम आनेवाले तेल, पेट्रोल और कोयले की गैस सभीमें कार्बन होता है।

हमारे खाद्य-पदार्थों में से लगभग सबमें कार्बन होता है। सच पूछिए तो हमारे खाने और पीने की चीज़ों में सिर्फ नमक और पानी ही दो ऐसी वस्तुएं हैं, जिनमें कार्बन नहीं होता।

काजल, कोक और लकड़ी का कोयला, इन सबको लगभग शुद्ध कार्बन कहा जा सकता है। इन्हें देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शुद्ध कार्बन का रंग बिलकुल काला होता है, पर बात ऐसी नहीं है। हमारी पेंसिल के भीतर की सींक ग्रैफाइट की होती है, जो एक प्रकार का कार्बन है। ग्रैफाइट भूरे लोहे के से रंग का एक चमकीला पदार्थ है। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि कार्बन का रंग सफेद और चमकीला भी हो सकता है। आखिर हीरा भी तो कार्बन ही है।

सिरका, वैसलिन और रेशम में भी कार्बन होता है। लेकिन देखने में ये एक-दूसरे से कितने भिन्न हैं! जिन पदार्थों में कार्बन होता है, उनमें यह किसी दूसरे तत्त्व के साथ मिलकर यौगिक रूप में होता है। यौगिक में कोई तत्त्व बिलकुल छिपा हुआ रह सकता है। कभी-कभी यौगिकों में से एक तत्त्व का रूप प्रकट हो जाता है। मान लीजिए कोई मिठाई तैयार कर रहा है, और मिठाई जल जाती है। अब कड़ाही में जो काला पदार्थ बच रहता है, वह कार्बन ही है, जो इसके पहले चीनी में छिपा हुआ था।

कार्बन डाइऑक्साइड (CARBON DIOXIDE) : जब हम सोडा या लेमनेड को गिलास में डालते हैं, तो उससे झाग उठते हैं। यही बात हर प्रकार के सोडा-मिश्रित पेय पदार्थों के साथ होती है। इन सभी पेय पदार्थों में झाग कार्बन डाइऑक्साइड नामक गैस के नन्हे बुलबुलों के कारण पैदा होते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड मिली होने के कारण, ये पेय बहुत ताज़गी देनेवाले हो जाते हैं।

रसायनशास्त्री कार्बन डाइऑक्साइड के स्थान पर CO_2 लिखते हैं। 'C' का अर्थ होता है कार्बन, और 'O' का अर्थ होता है ऑक्सीजन। जिस रूप में रसायनशास्त्री इस नाम को लिखते हैं, उसका अर्थ है कि कार्बन डाइऑक्साइड में कार्बन के हर परमाणु के साथ ऑक्सीजन के दो परमाणु रहते हैं।

कार्बन डाइऑक्साइड कई तरह से तैयार की जा सकती है। लगभग हर प्रकार की आग के जलने पर कार्बन डाइऑक्साइड निकलती है। इसे खानेवाले सोडे में सिरका मिलाकर भी तैयार किया जाता है। खानेवाले सोडे में पानी मिलाकर भी इसे पैदा किया जा सकता है। जब खमीर को आटे की लोई में मिलाकर रखते हैं, तब भी कार्बन डाइऑक्साइड के छोटे-छोटे बुलबुले खमीर में पैदा हो जाते हैं। हम लोग भी श्वास बाहर निकालते समय हमेशा कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। यह हमारे खाए हुए भोजन के धीरे-धीरे जलते रहने से पैदा होती है। दूसरे सभी जीव भी हमारी तरह ही कार्बन डाइ-

सांस की कार्बन डाइऑक्साइड चूने के पानी को दूधिया कर देती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऑक्साइड अपने श्वास से बाहर छोड़ते हैं। इसीलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि हवा में हमेशा कुछ कार्बन डाइ-ऑक्साइड मौजूद रहती है।

कार्बन डाइऑक्साइड गैस एक बहुत महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। यह गैस सिर्फ सोडे को स्वादिष्ट बनाने और डबल रोटियों को फुलाने के ही काम नहीं आती है। आग बुझाने के अनेक यंत्र कार्बन डाइऑक्साइड की सहायता से ही अपना काम करते हैं। अधिक महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि हरे पौधे अपने लिए चीनी तैयार करने में कार्बन डाइऑक्साइड का प्रयोग करते हैं। अगर वे चीनी बनाने के लिए कार्बन डाइऑक्साइड न पाएं, तो जीवित नहीं रह सकते। हम भी उस दशा में जीवित नहीं रह सकते, क्योंकि हमारे भोजन में नमक और पानी को छोड़कर शेष सभी तत्त्व हरे पौधों द्वारा तैयार की जाने-वाली चीनी से ही प्राप्त होते हैं।

कार्बन डाइऑक्साइड एक प्रकार की गैस अवश्य है, लेकिन यह जमने के बाद पत्थर की तरह सख्त हो जाती है। हम जमी हुई कार्बन डाइऑक्साइड को 'सूखी बर्फ' कहते हैं। सूखी बर्फ इतनी ठंडी होती है कि इसपर हाथ लगाना खतरे से खाली नहीं होता। आइसक्रीम और दूसरी जमी हुई चीज़ों को बक्स में बन्द करके जहाज़ से भेजने में इसे काम में लाते हैं। यह बर्फ की भांति पिघल-कर दूसरी चीज़ों को गीला नहीं कर सकती। पिघलने के स्थान पर सूखी बर्फ गैस में परिवर्तित हो जाती है।

कार्बन मोनोक्साइड (CARBON MONOXIDE) : जब ऐसी हवा में जहां ऑक्सीजन नहीं के बराबर होती है कार्बन जलती है, तो कार्बन मोनोक्साइड गैस तैयार होती है। उदाहरण के लिए, जब किसी मोटरकार का इंजन बंद गैरेज में चलता रहता है, तो कार्बन मोनोक्साइड गैस तैयार हो जाती है।

कार्बन मोनोक्साइड में कार्बन के हर परमाणु के साथ एक ऑक्सीजन का परमाणु होता है। रसायनशास्त्री इसे लिखने के लिए CO के संकेत का प्रयोग करते हैं। मौका मिलते ही यह अधिक ऑक्सीजन सोख लेती है। कार्बन मोनोक्साइड में सांस लेने से अनेक लोगों की मृत्यु हो जाती है। यह गैस बहुत खतरनाक होती है, क्योंकि यह रक्त को ऑक्सीजन लेकर प्रवाहित होने में बाधा पहुंचाती है और रक्त का प्रवाह रुक जाने पर कोई जीवित नहीं रह सकता।

लेकिन यह खतरनाक गैस लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है। इसका प्रयोग उन स्थानों से ऑक्सीजन अलग करने में किया जा सकता है जहां उसकी ज़रूरत नहीं होती। उदाहरण के लिए, कच्चे लोहे में ऑक्सीजन मिली रहती है। कार्बन मोनोक्साइड का प्रयोग इस ऑक्सीजन को अलग करने और लोहे को शुद्ध करने में किया जाता है। धमन भट्टियों में इसी प्रकार लोहे को साफ किया जाता है।

कार्बोरंडम (CARBORUNDUM) : हीरा दुनिया की हर चीज़ से अधिक कठोर माना जाता है। लेकिन कार्बोरंडम क्रिस्टल भी लगभग हीरे के समान ही कठोर होते हैं।

कार्बोरंडम के उपयोग

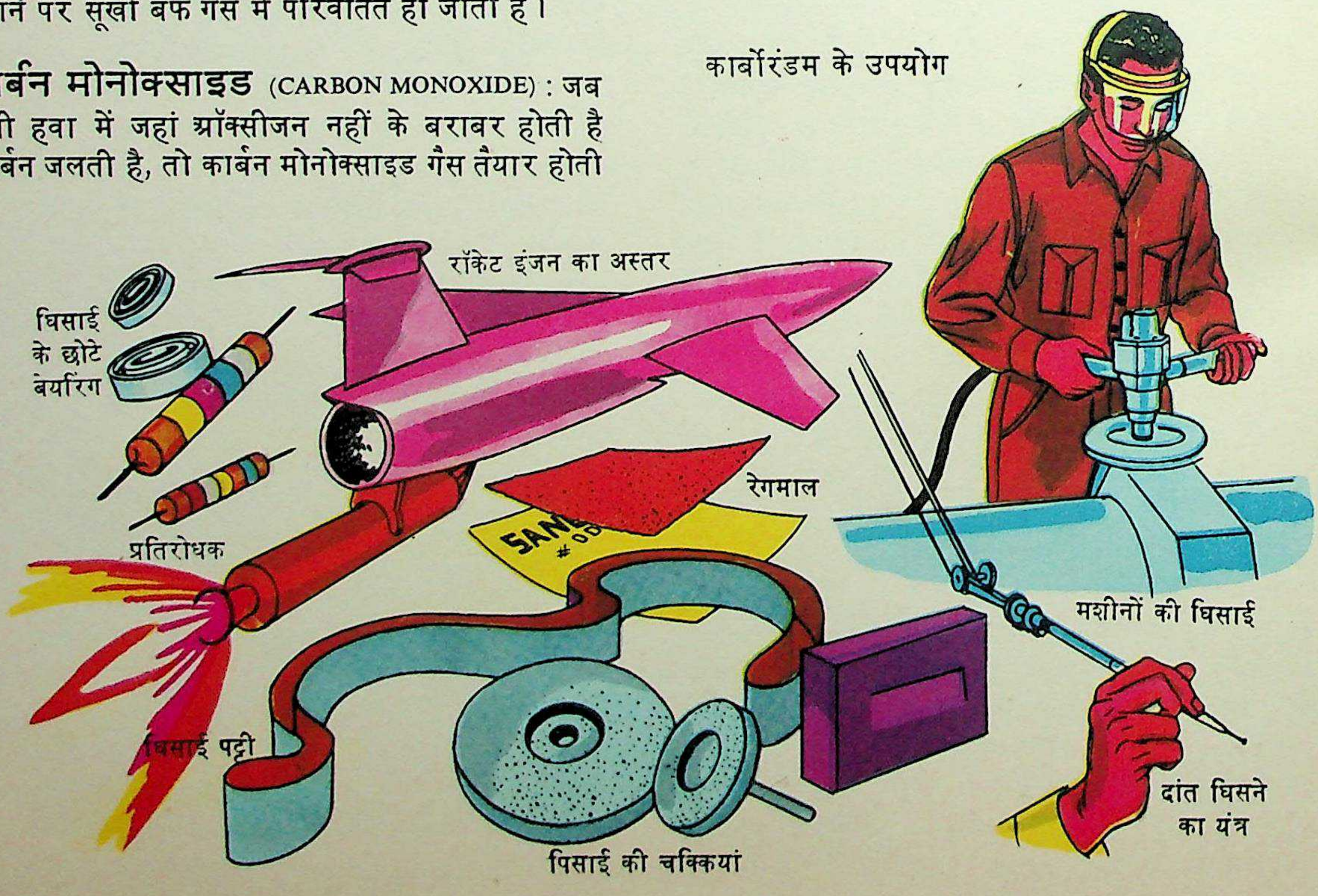

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

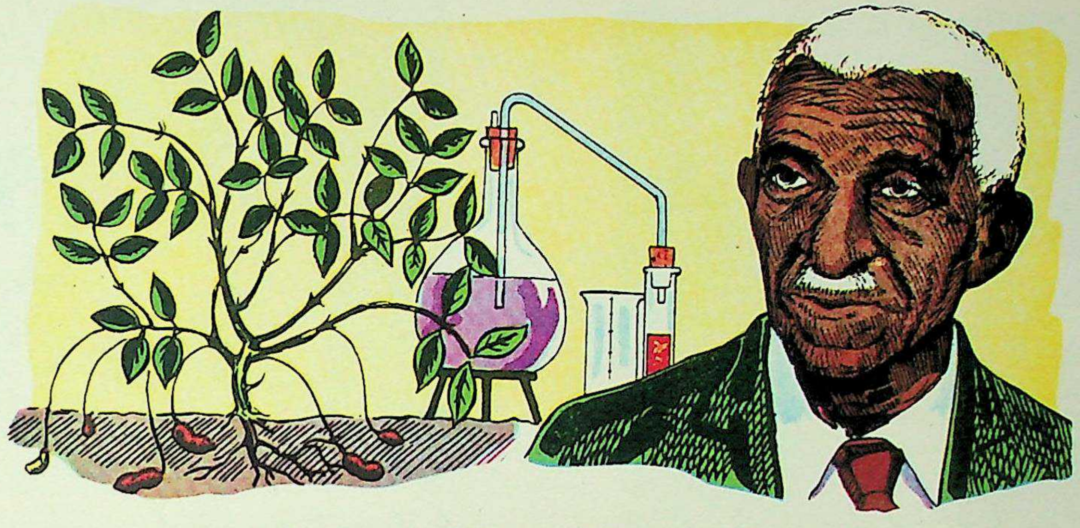

जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर ने वनस्पति-विज्ञान को आगे बढ़ाया ।

कार्बोरंडम एक व्यापारिक नाम है। इसका वैज्ञानिक नाम 'सिलिकॉन कार्बाइड' है ।

आजकल कार्बोरंडम के क्रिस्टल बिजली की भट्टियों में बालू और कोक मिलाकर तैयार किए जाते हैं। इस मिश्रण को बहुत अधिक गर्म किया जाता है। क्रिस्टल तैयार होने के लिए भट्टी को 3,500° फा० से भी अधिक तापमान पर रखना होता है।

अमरीका में नियागरा प्रपात के पास कार्बोरंडम बनाने का एक बहुत बड़ा कारखाना है। कार्बोरंडम दूसरे कठोर पदार्थों को रगड़ने और चिकना करने के काम आता है। उपयोग में लाए जाने के पहले इसको साफ-सुथरे क्रिस्टलों के रूप में काट लिया जाता है। पिसाई या पालिश करने के लिए इसकी ठोस चक्कियां भी बनाई जाती हैं।

कार्वर, जॉर्ज वाशिंगटन

(GEORGE WASHINGTON CARVER 1864-1943) : मूंगफली खाने में अच्छी होती है, पर इसके और भी बहुत-से उपयोग हैं। मूंगफली की फसल का एक बड़ा भाग तेल, आटा, पनीर, शेविंग क्रीम और प्लास्टिक बनाने के काम आता है। मूंगफली की इस भारी खपत का श्रेय बहुत-कुछ जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर को है। इन्होंने इसके 300 से भी अधिक उपयोग मालूम किए। इन्होंने शकरकन्द और सोयाबीन के भी नये-नये उपयोगों का पता लगाया।

जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर का जन्म अमरीकी राज्यों के गृहयुद्ध के दिनों में जोपलिन के निकट हुआ था। इनकी मां मोसेस कार्वर की एक गुलाम थी। बाल्यावस्था में एक बार जब सैनिक वाशिंगटन को उड़ाकर ले गए तो उस बालक के लिए मालिक को सैनिकों को घुड़दौड़ का एक कीमती घोड़ा देना पड़ा। युवा होने पर इन्होंने पारिवारिक नाम के लिए अपने मालिक का ही नाम चुना।

गृहयुद्ध के बाद बालक कार्वर स्वतंत्र हो गया। पर फिर भी कई साल वह अपने मालिक के पास ही रहा। उसकी बागबानी में इतनी रुचि थी कि उसने उच्च शिक्षा प्राप्त करने और वनस्पतिशास्त्री बनने का संकल्प कर लिया।

अपनी गहरी लगन और सूझबूझ के कारण कार्वर शिक्षाकाल में ही प्रसिद्ध हो चले थे। शिक्षा पूरी हो जाने पर इन्हें अलाबामा की टस्केगी इंस्टीट्यूट में, जो एक नीग्रो विश्वविद्यालय था, बुलाया गया। अपना शेष जीवन इन्होंने वहीं बिताया।

कार्वर ने फसलों के नये-नये उपयोगों का ही पता नहीं लगाया। इन्होंने मिट्टी के सुधार की दिशा में भी बहुत काम किया। अपने जीवन में इन्हें काफी कीर्ति और प्रतिष्ठा मिली।

कीमियागरी

(ALCHEMY) : पहले रसायन को कीमियागरी ही कहा जाता था। कीमियागरी की आज के रसायन विज्ञान (Chemistry) से तुलना नहीं की जा सकती, क्योंकि कीमियागरों को किसी भी तरह अच्छे वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। उनके पास न आधुनिक वैज्ञानिकों जैसे उपकरण और यंत्र थे, और न ही उनके काम का ढंग वैज्ञानिकों-जैसा था। उनमें से ज़्यादातर लोग जादू और मंत्रों के ज़ोर से अपने सपने सफल करना चाहते थे।

कीमियागरों की प्रयोगशालाएं भी बड़ी गंदी और अंधेरी हुआ करती थीं और उनमें बदबू भरी होती थी। वे भांति-भांति की बोतलों और बर्तनों से अटी होती थीं। उनमें आज की प्रयोगशालाओं जैसी सफाई और व्यवस्था नहीं होती थी।

सभी कीमियागरों की एक बड़ी साध पारस पत्थर बनाने की थी। उनका ख्याल था कि पारस पत्थर के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

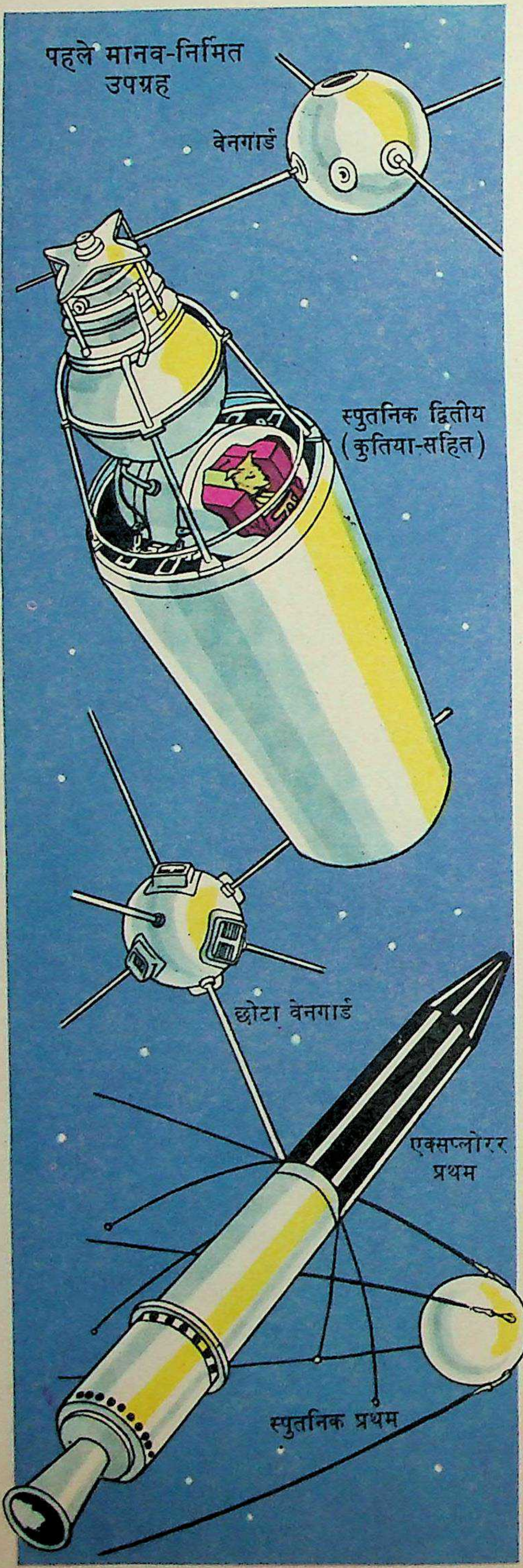

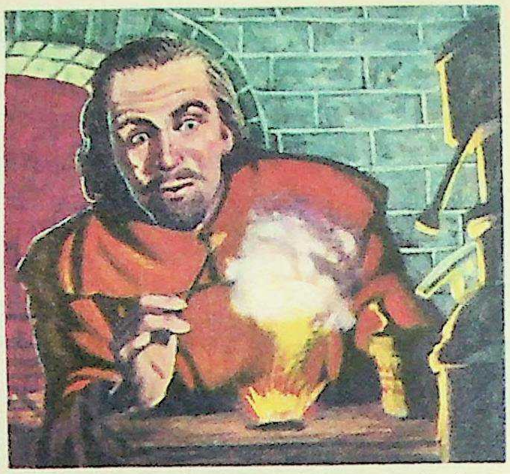

कीमियागरों को सोना बनाने की धुन रहती थी।

स्पर्श से लोहा तथा अन्य सस्ती धातुएं सोने में बदली जा सकती हैं। उनकी दूसरी बड़ी साध अमृत और संजीवनी बूटी बनाने की थी, जिससे सभी बीमारियों को दूर किया जा सके और मौत को भी जीता जा सके।

सस्ते सोने, अमृत और संजीवनी बूटी के लोभ में पुराने ज़माने के राजा-महाराजा और पैसेवाले लोग कीमियागरों पर खूब रुपया लुटाया करते थे। पर यह सारा धन बेकार ही जाता था, क्योंकि इनमें से कोई भी काम उन बेचारे कीमियागरों के बस का न था। हां, अपने मालिकों को बहकाने के लिए वे भांति-भांति के दिखावे अवश्य करते रहते थे।

फिर भी, कीमियागरों ने—अटकलपच्चू ही सही—कुछ मार्के का काम भी किया। उन्होंने कई नई धातुओं की खोज की। उन्होंने कई नये रसायनों का भी पता लगाया। भारत के प्राचीन कीमियागरों ने एक ऐसा तरीका ढूंढ़ निकाला कि जिससे लोहे पर ज़ंग नहीं लगता। औषधि-विज्ञान में भी उन्होंने कई बड़ी खोजें कीं।

कृत्रिम उपग्रह (SATELLITES) : चन्द्रमा पृथ्वी का उपग्रह है। चन्द्रमा पृथ्वी की ठीक उसी तरह परिक्रमा करता है जिस तरह पृथ्वी और अन्य ग्रह सूर्य की। सौर-परिवार के कई ग्रहों के एक से अधिक उपग्रह हैं।

हमारे चन्द्रमा का एक निश्चित पथ है। इसे कक्षा भी कह सकते हैं। चन्द्रमा की तरह अन्य उपग्रहों की भी कक्षा होती है। चन्द्रमा पृथ्वी की बड़ी द्रुत गति से परिक्रमा कर रहा है। वह 2,300 मील प्रति घण्टे की गति से पृथ्वी के चारों ओर घूम रहा है। इतनी गति के होते हुए भी वह पृथ्वी से दूर नहीं भाग सकता, क्योंकि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति चन्द्रमा को अपनी ओर खींचे रहती है। लेकिन वह इतनी तेज़ी से अपनी कक्षा पर घूम रहा है कि पृथ्वी के आकर्षण के बावजूद नीचे नहीं गिर सकता।

जब वैज्ञानिकों को पता लगा कि रॉकेटों को सैकड़ों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मील ऊपर आसमान में भेजा जा सकता है, तो उनके दिमाग में यह बात आई कि क्यों न कृत्रिम उपग्रह बनाया जाए।

अनेक वैज्ञानिकों ने अनेक तरह की योजनाएं बनाईं। लेकिन उन सबमें एक समानता थी। एक पोली गेंद या नली-सी बनाई गई। उसके एक हिस्से में वैज्ञानिक यंत्र और उपकरण रखे गए। एक ऐसा रॉकेट बनाया गया जो 'बहुक्रमीय' था। रॉकेट को इस उपग्रह को सौ या डेढ़ सौ मील ऊपर आकाश में ले जाना था। पहले तो रॉकेट सीधा ऊपर जाता, और फिर थोड़ा-सा घूमकर पृथ्वी का चक्कर काटने लगता।

पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के घेरे से निकलने के लिए उपग्रह को 18,000 मील प्रति घण्टे की रफ्तार से चलना चाहिए। उसे असली चन्द्रमा से अधिक गति से यात्रा करनी चाहिए, क्योंकि वह पृथ्वी के अधिक निकट है। अगर ऐसा नहीं होगा तो वह गिर पड़ेगा। उसकी रफ्तार बहुत तेज़ भी नहीं होनी चाहिए, वरना वह पृथ्वी से दूर चला जाएगा।

कृत्रिम उपग्रह रेडियो द्वारा पृथ्वी के अपने केन्द्र पर विभिन्न संदेश भेजता है। ये संदेश कॉस्मिक किरणों, तापमान, वायुमण्डल की विरलता, सूर्य किरणों, उल्काओं आदि के बारे में होते हैं। जहां कृत्रिम उपग्रह उड़ता है, वहां वायुमण्डल बड़ा क्षीण होता है। लेकिन, फिर भी वह उपग्रह की गति को कुछ न कुछ कम कर देता है। अन्त में उपग्रह पृथ्वी की तरफ गिरने लगता है। गिरते समय वायुमण्डल के घर्षण के कारण उसमें आग लग जाती है और वह जल जाता है।

4 अक्तूबर, 1957 को दुनिया में तब बड़ी सनसनी फैल गई जब सोवियत संघ अपना पहला उपग्रह 'स्पुतनिक' अंतरिक्ष में भेजने में सफल हो गया। स्पुतनिक प्रथम

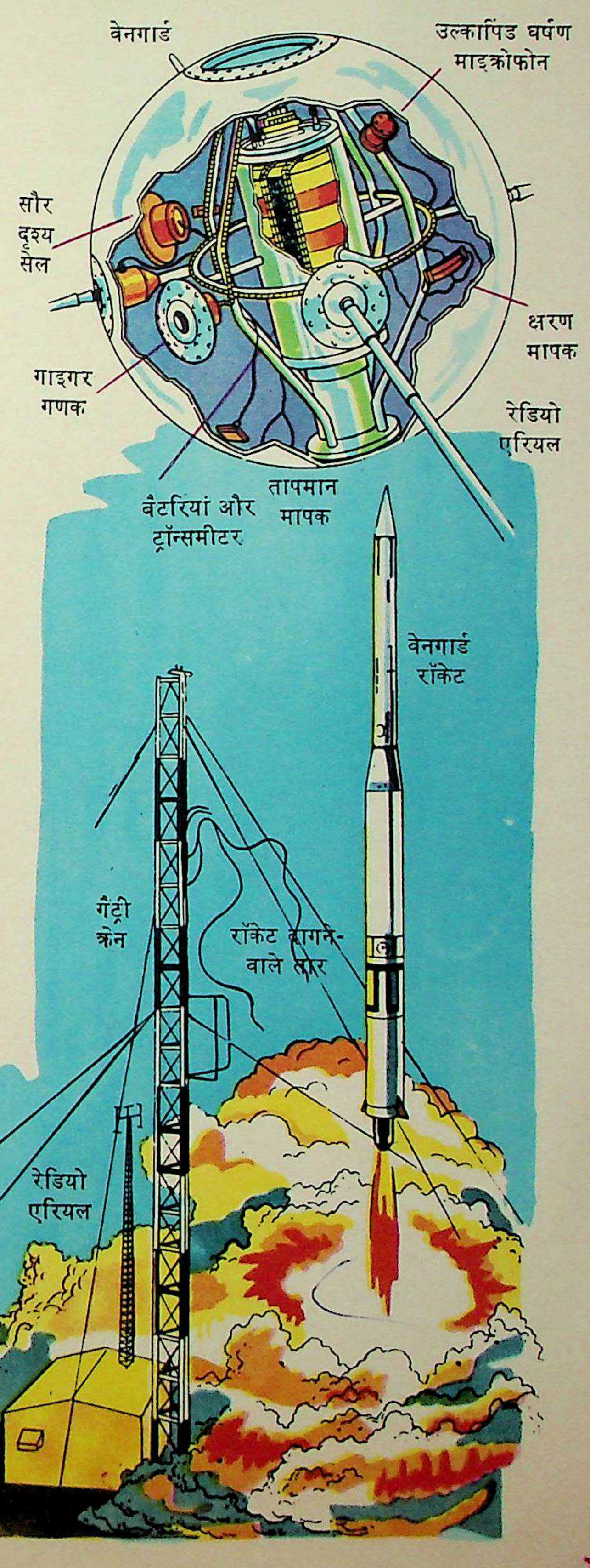

उपग्रह द्वारा पृथ्वी की परिक्रमा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का वज़न 183 पौण्ड था। वह पृथ्वी की एक परिक्रमा 96 मिनट में लगाता था। उसका परिक्रमा-पथ वृत्ताकार न होकर अण्डाकार था। वह जब पृथ्वी के सबसे अधिक निकट होता तो उसकी दूरी 156 मील होती थी, और जब सबसे अधिक दूर होता तो दूरी 560 मील होती थी।

इसके कोई एक मास बाद स्पुतनिक द्वितीय छोड़ा गया। इसमें अंतरिक्ष यात्रा करनेवाला पहला जीव—लाइका नाम की कुतिया थी।

31 जनवरी, 1958 को अमरीका ने पहला कृत्रिम उपग्रह 'एक्सप्लोरर' छोड़ा। इसका वज़न कोई 30 या 31 पौण्ड था। इसकी कक्षा की अधिकतम ऊंचाई पृथ्वी की सतह से कोई 1,500 मील ऊपर थी।

इसके बाद अगले छः मास में सोवियत संघ और अमरीका ने कई उपग्रह छोड़े। इन कृत्रिम उपग्रहों से वैज्ञानिकों को बहुत-सी सूचनाएं मिलीं।

इन सूचनाओं के आधार पर मनुष्य को अंतरिक्ष में भेजने की योजनाएं बनाई गईं। अप्रैल, 1961 में सोवियत संघ ने 27 वर्षीय यूरी गगारिन को रॉकेट द्वारा अंतरिक्ष यात्रा के लिए भेजा। वे 108 मिनट बाद लौट आए। जी० टिटोव अगस्त, 1961 में अंतरिक्ष यात्रा के लिए गए। उन्होंने वोस्टोक द्वितीय का अंतरिक्ष में संचालन भी किया। अगस्त, 1962 में पावेल निकोलेयेव और पोपोविच ने क्रमशः पृथ्वी की 64 और 48 परिक्रमाएं कीं। जून, 1963 में वेलेरी वाइकोवस्की और वेलेण्टीना तेरेश्कोवा ने अंतरिक्ष यात्रा की। तेरेश्कोवा अंतरिक्ष में जानेवाली पहली महिला थीं। वाइकोवस्की ने 81 और तेरेश्कोवा ने 48 परिक्रमाएं कीं।

इस बीच अमरीकी वैज्ञानिक भी प्रयत्नशील थे। सबसे पहले अमरीकी अंतरिक्ष-यात्री एलन शेपर्ड थे। इसके बाद वाल्टर शीरा, स्कॉट कारपेण्टर और जॉन ग्लेन अंतरिक्ष यात्रा के लिए गए। मई, 1963 में गॉर्डन कूपर ने अंतरिक्ष यात्रा की। इन सबसे अमूल्य सूचनाएं उपलब्ध हुईं। अब वैज्ञानिक चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहों पर आदमी भेजने की दिशा में प्रयत्नशील हैं।

(देखें : अंतरिक्ष यात्रा; रॉकेट)

कृष्णन्, डा० करियमाणिक्यम श्रीनिवास (DR. K.S. KRISHNAN 1898–1961) : डाक्टर के० एस० कृष्णन् का जन्म तमिलनाड के रामनाड ज़िले में हुआ था। उनके पिता तमिल और संस्कृत धर्म साहित्य के बड़े विद्वान थे। कृष्णन् गांव के वातावरण में बड़े हुए। हाई स्कूल से निकलने के बाद उन्होंने मदुरा के अमरीकी कालेज और फिर मद्रास के क्रिश्चियन कालेज में शिक्षा पाई, जहां वे कुछ वर्ष रसायन के डिमोन्स्ट्रेटर रहे।

कृष्णन् अपना जीवन वैज्ञानिक अनुसंधान में लगाना चाहते थे। वे कलकत्ता गए और भौतिकी का अध्ययन करने

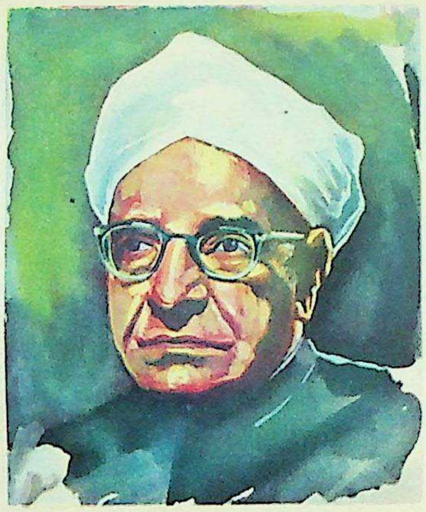

डाक्टर के० एस० कृष्णन्

के लिए यूनिवर्सिटी कालेज ऑव साइंस में एम० एस-सी० में दाखिल हो गए। उन दिनों डाक्टर सी० वी० रामन् इसी कालेज में पढ़ाते थे। उनके भाषणों का कृष्णन् पर बहुत प्रभाव पड़ा। 1923 से उन्होंने रामन् के साथ इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टीवेशन ऑव साइंस की प्रयोगशाला में काम करना आरम्भ किया। 1928 तक वे उसमें लगे रहे। उसी वर्ष वे भौतिकी के रीडर बनकर ढाका विश्वविद्यालय में चले गए। 1933 में वापस आए और फिर एसोसिएशन की प्रयोगशाला में अनुसंधान में लग गए।

इस बीच उन्होंने भौतिकी के क्षेत्र में जो अनुसंधान किए, उनसे वे काफी प्रसिद्ध हो गए। 1936 में वे इंग्लैंड निमंत्रित किए गए, और 1940 में रॉयल सोसाइटी के फैलो चुने गए। 1942 में वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रोफेसर बनाए गए। जब 1947 में नई दिल्ली में राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला का निर्माण हुआ तो वे उसके पहले डायरेक्टर बनाए गए।

डा० कृष्णन् 1955 में यूनेस्को की वैज्ञानिक सलाहकार समिति के अध्यक्ष रहे। वे 1956 में अमरीका की राष्ट्रीय अकादमी के विदेशी सदस्य चुने गए। 1951 और 1957 के बीच वे अंतर्राष्ट्रीय विशुद्ध और प्रायोगिक भौतिकी संघ के उपाध्यक्ष और सागर विज्ञान संघ में भारत के प्रतिनिधि थे। वे अंतर्राष्ट्रीय भूभौतिक वर्ष की भारतीय समिति के अध्यक्ष थे।

डा० कृष्णन् ने भौतिकी में जो अनुसंधान किए हैं, उनसे क्रिस्टलों, धातुओं, सेमीकण्डक्टरों और ठोस वस्तुओं के गुणों को समझने में बहुत सहायता मिली है। इसके लिए उन्हें 1946 में 'सर' बनाया गया, राष्ट्रपति ने पद्मभूषण की उपाधि दी, और कौंसिल ऑव साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रियल रिसर्च ने भटनागर पुरस्कार प्रदान किया। मृत्यु के समय डा० कृष्णन् राष्ट्रीय प्रोफेसर थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

केशिका-कर्षण (CAPILLARY ATTRACTION) : अगर शीशे की पतली नली को पानी के गिलास में रखें, तो नली के भीतर पानी गिलास के पानी की सतह से ऊपर चढ़ जाएगा। यह पानी नली की दीवारों द्वारा ऊपर खिंचता है। वैज्ञानिक लोग इसे केशिका-कर्षण कहते हैं।

तौलिये में भी पानी इसी केशिका-कर्षण द्वारा खिंचता है। अगर केशिका-कर्षण नहीं होता, तो तौलिये से हाथ सुखाना संभव न होता।

अगर केशिका-कर्षण नहीं होता तो सोख्ता कागज़ स्याही को नहीं सोख पाता, और बत्ती के सहारे तेल ऊपर की ओर नहीं चढ़ पाता। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पेड़ों की जड़ों द्वारा पानी ऊपर की ओर नहीं चढ़ पाता।

तौलिया, पेड़ों की जड़ें, लालटेन की बत्ती—ये सब केशिका-कर्षण द्वारा ही अपना काम करते हैं।

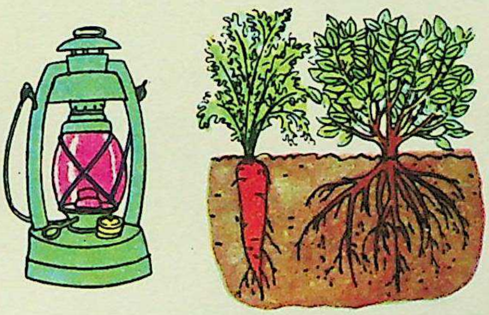

अगर केशिका-कर्षण समाप्त हो जाए, तो दुनिया के अधिकांश पेड़ पानी के अभाव में सूख जाएंगे।

कैलेंडर और पंचांग (CALENDAR) : आज कौन-सा दिन है? होली किस दिन पड़ेगी? दशहरे की छुट्टियां कब प्रारंभ होंगी? इन सवालों का जवाब देने के लिए हम कैलेंडर की ओर देखते हैं।

देखने में कैलेंडर या पंचांग बहुत साधारण दिखाई पड़ते हैं। लेकिन समय-चक्र के इस निर्धारण में बहुत अधिक समय लगा है। कैलेंडर और पंचांग की कहानी उस समय से पूर्व ही प्रारंभ हुई होगी जब लोगों ने लिखना-पढ़ना सीखा।

संभवतः पहले दिनों की गणना की प्रथा रही होगी। आज भी कुछ आदिम जातियां सूर्य की गणना करके समय का अनुमान लगाती हैं। आज हमारे कैलेंडर का

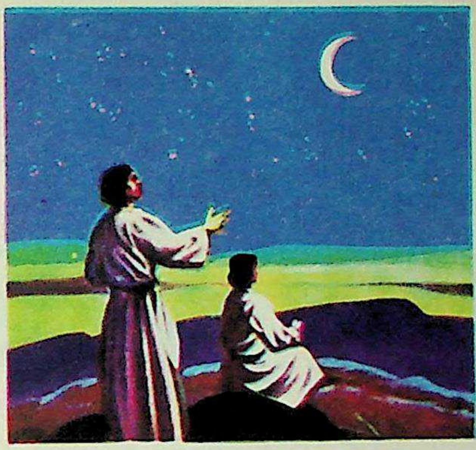

प्राचीन काल में लोग चन्द्रमा से तिथि-गणना करते थे।

एक दिन, दिन और रात को मिलाकर होता है। लेकिन पहले लोग दिनों का हिसाब इस तरह नहीं लगाते थे।

लोगों ने जब दिन और रात की गणना शुरू की होगी, तो उन्होंने चन्द्रमा के घटने-बढ़ने पर भी ध्यान दिया होगा। पूरा चांद छोटा होते-होते एकदम गायब हो जाता है। फिर वह निकलता है, और धीरे-धीरे बढ़ता हुआ पूरा गोल हो जाता है। पूर्णिमा से पूर्णिमा तक समय को मापने का एक अच्छा साधन रहा होगा।

भारतीय महीनों का निर्धारण चन्द्रमा के ऊपर ही रखा गया है, जिसे दो उप-विभागों—शुक्लपक्ष और कृष्ण-पक्ष में भी बांटा गया है। अंग्रेज़ी का 'मन्थ' (मास) शब्द भी 'मून' (चन्द्रमा) से निकला है। हिजरी सन्, जिसका प्रचलन मुसलमानों में है, वह भी चन्द्रमा पर आधारित है।

धीरे-धीरे मनुष्य ने क्रम से बदलती रहनेवाली ऋतुओं पर भी ध्यान दिया होगा। प्राचीन काल में भारतीय ज्योतिर्विदों ने वर्ष को छः ऋतुओं में बांट रखा था। ये ऋतुएं थीं—शरद, हेमन्त, शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म और वर्षा।

समय-निर्धारण के लिए आरंभ में धूप-घड़ियां बनीं।

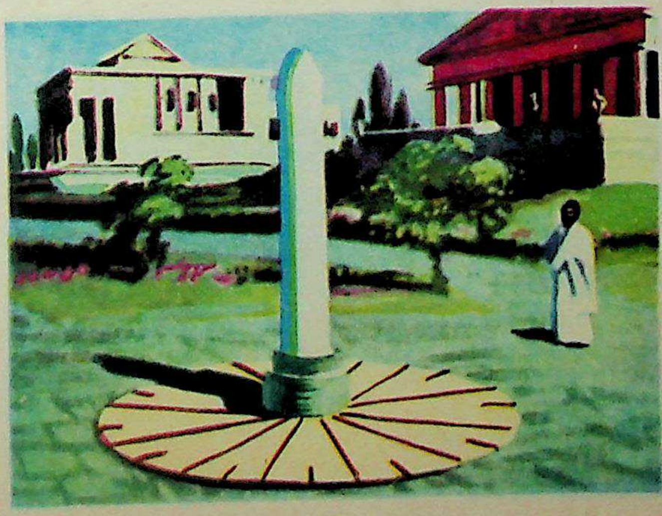

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूर्य, चन्द्रमा और ग्रहों की कक्षा दिखानेवाला प्राचीन चीनी गोलक

धरती के चक्कर काटने से दिन और रात होते हैं। चन्द्रमा के पृथ्वी की परिक्रमा करने से चन्द्रमा बढ़ता-घटता दीखता है। सूर्य के चारों ओर धरती की परिक्रमा से ऋतुएं आती हैं।

बहुत समय तक किसीने दिनों, महीनों और वर्षों में परस्पर तालमेल बैठाने की कोशिश नहीं की। जब उन्होंने इनको एक क्रम में बैठाना चाहा, तो उनके सामने कठिनाई उपस्थित हो गई। दिन महीनों में पूरे बैठते ही नहीं थे। पूर्णिमा से पूर्णिमा तक लगभग 29½ दिन का समय लगता है। दिन वर्षों में भी ठीक नहीं बैठते थे। सूर्य की एक परिक्रमा करने में धरती को लगभग 365¼ दिन लगते हैं। चन्द्रमा के आधार पर महीने वर्षों में ठीक बैठते ही नहीं थे।

भारत के ज्योतिर्विदों ने 30 दिन का एक मास निश्चित किया। चन्द्रमा की परिक्रमा में आधे दिन का समय कम लगता है। इसे गणना से ठीक करके उन्होंने 'उपरान्त' द्वारा स्थिर किया। उपरान्त में एक ही दिन में दो तिथियां पड़ जाती हैं, और लोगों को लगता है कि एक दिन कम हो गया। बेबीलोनिया में कुछ महीनों को 30 दिन और कुछ को 29 दिन का निर्धारित किया गया था। लेकिन इस तरह कुछ ही दिनों बाद महीनों का क्रम वर्ष की ऋतुओं से काफी पीछे खिसक गया। इस क्रम को ठीक करने के लिए प्राचीन ज्योतिर्विदों ने कुछ वर्षों बाद एक अतिरिक्त महीना लगाना प्रारंभ किया। भारतीय ज्योतिर्विदों ने इसे 'मल मास' की संज्ञा दी।

आगस्टस सीज़र

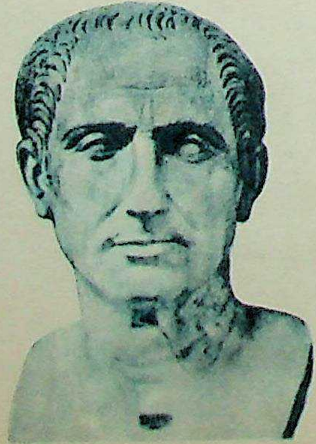

जूलियस सीज़र

प्राचीन यूनानी कैलेंडर भारतीय और बेबीलोनिया के कैलेंडर जैसे ही थे। यही हालत प्राचीन रोम की भी थी। लेकिन रोम में कैलेंडरों का प्रभाव वहां की राजनीति पर भी पड़ा। जब पुजारी लोग किसी ऐसे शासक को, जो एक निश्चित कार्यकाल के लिए चुना जाता था, पसन्द नहीं करते थे, तो वे उसके शासनकाल में अतिरिक्त महीनों की ज़रूरत पड़ने पर भी, उन्हें नहीं जोड़ते थे। इसी तरह जब वे किसी शासक को चाहते थे, तो उसके शासनकाल में बिना ज़रूरत के भी अतिरिक्त महीने जोड़ देते थे, ताकि वह अधिक समय तक शासन कर सके।

जब जूलियस सीज़र रोम साम्राज्य का शासक बना, तब कैलेंडर में बहुत धांधली चल रही थी। सीज़र ने चन्द्रमास को हटाकर नया कैलेंडर चलाने का निश्चय किया। उसने कुछ ज्योतिर्विदों से सहायता मांगी। नये कैलेंडर को बनाने के लिए उन्होंने मिस्र की पद्धति की नकल की। मिस्रवासियों ने लुब्धक तारे को ध्यान में रखकर अपना कैलेंडर बनाया था। जब पूर्व के आकाश में लुब्धक अरुणोदय के समय निकलता दिखाई पड़ता था, तो उनका वर्ष प्रारंभ होता था। इसमें एक वर्ष में 365 दिन होते थे।

सीज़र के ज्योतिर्विदों ने निश्चय किया कि एक वर्ष 365¼ दिन का होना चाहिए। उन्होंने हर वर्ष को 365 दिन का निश्चित किया, और हर चौथे वर्ष को 366 दिन का,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिसे ग्रौंध साल या 'लीप इयर' कहते हैं।

क्योंकि उन्होंने चन्द्रमा के ग्रनुसार महीनों को न रखने का निश्चय किया था, इसलिए वे ग्रपने महीनों को मन-चाहा लम्बा रख सकते थे। वे पांच महीनों को 31 दिन का ग्रौर सात महीनों को 30 दिन का रख सकते थे। लेकिन रोमवासी विषम ग्रंक को शुभ ग्रंक मानते थे।

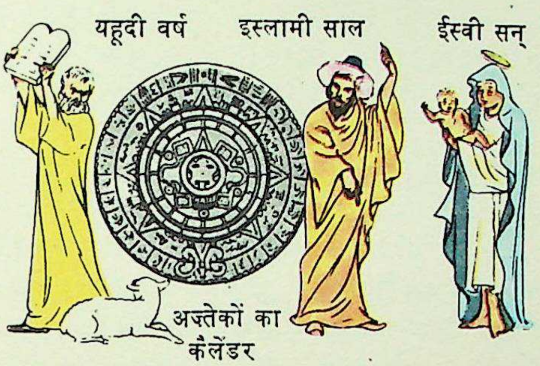

31 दिनों का एक ग्रौर महीना बनाने के लिए उन्होंने फरवरी के 30 दिनों में से एक दिन निकाल लिया।

जुलाई मास का नाम जूलियस सीज़र ने ग्रपने नाम पर रखा। इसे 31 दिनों का तो होना ही था। बाद में जब ग्रागस्टस सीज़र सम्राट बना, तब उसने भी ग्रपने नाम पर एक महीने का नामकरण करवाया। उसने भी इस मास को 31 दिनों का बनाने के लिए फरवरी महीने से 1 दिन निकाला। इस तरह ग्रागस्टस के नाम पर पड़े ग्रगस्त महीने में भी 31 दिन हो गए, ग्रौर फरवरी 28 दिनों का ही रह गया।

तब से ग्रंग्रेज़ी वर्ष इसी क्रम के ग्रनुसार चलते रहे। ग्रंग्रेज़ी महीनों के नाम प्रसिद्ध रोमनों के नाम पर रखे हुए हैं।

1,600 वर्षों तक ग्रौंध साल का क्रम जूलियस सीज़र के ग्रनुसार ही चलता रहा। लेकिन तब तक महीने ऋतुग्रों से कुछ दिन पीछे खिसक गए थे। कठिनाई यही थी कि एक वर्ष पूरे $365\frac{1}{4}$ दिनों का नहीं होता है। सीज़र के समय में निर्धारित कैलेंडर में ग्रौंध साल कुछ ग्रधिक लग जाते थे। पोप ग्रेगॉरी ने कैलेंडर की भूलों को ठीक करने का निश्चय किया। सन् 1582 में उसने इटली के एक ज्योतिर्विद से ग्रौंध सालों का क्रम ग्रौर ठीक करने के लिए सहायता मांगी। ग्राज भी उसीका नियम चला ग्रा रहा है। यह नियम है कि ग्रगर वर्ष की संख्या में सौ का भाग नहीं लगता है, परन्तु चार का भाग लगता है, तो यह ग्रौंध साल होगा। ग्रगर वर्ष की संख्या में 100 का भाग लगने पर भी 400 का भाग लगता है, तो भी यह ग्रौंध साल होगा। इस तरह सन् 1900 में यद्यपि 4 का भाग लगता था, पर यह सौ से भी बंट सकता था, इसलिए यह ग्रौंध साल नहीं हुग्रा। पर सन् 2000 में यद्यपि 100 का भाग लगेगा, लेकिन इसके साथ ही इसमें 400 का भी भाग लगेगा, इसलिए यह ग्रौंध साल होगा।

पोप ग्रेगॉरी ने तिथियों का क्रम ठीक करने के लिए तिथियों को 10 दिन ग्रागे बढ़ा दिया। उस वर्ष का 5 ग्रक्तूबर 15 ग्रक्तूबर हो गया।

भारत सरकार ने सार्वजनिक प्रयोग के लिए राष्ट्रीय तिथि के रूप में, 22 मार्च, सन् 1957 के दिन, शक संवत् को स्वीकार किया। शक संवत् ईस्वी सन् से 78 वर्ष पीछे पड़ता है। यह संवत् चैत्र मास की प्रतिपदा को प्रारंभ होता है। इस तरह शक संवत् ग्रेगॉरी के द्वारा निर्धारित ईस्वी सन् से पूरी तरह मेल खाता है। सामान्य वर्षों में 1 चैत्र 22 मार्च को पड़ेगा, पर ग्रौंध साल में यह 21 मार्च को पड़ेगा। इसी तरह 1 वैशाख 21 ग्रप्रैल को, 1 ज्येष्ठ 22 मई को, 1 ग्राषाढ़ 22 जून को, 1 श्रावण 23 जुलाई को, 1 भाद्र 23 ग्रगस्त को, 1 ग्राश्विन 23 सितंबर को, 1 कार्तिक 23 ग्रक्तूबर को, 1 ग्रग्रहायन 23 नवंबर को, 1 पौष 22 दिसंबर को, 1 माघ 21 जनवरी को ग्रौर 1 फाल्गुन 20 फरवरी को पड़ेगा।

भारत में शक संवत् के ग्रतिरिक्त विक्रम संवत्, बुद्ध संवत्, फसली सन् (बंगाली सन्) ग्रादि भी प्रचलित हैं।

कोपेर्निकस (COPERNICUS 1473-1543) : इनका जन्म पोलैंड में हुग्रा था। इन्होंने ज्योतिष में जो कार्य किया है उसके लिए ये सदा याद रखे जाएंगे।

उन दिनों यह समझा जाता था कि पृथ्वी ब्रह्मांड का केन्द्र है। सूर्य ग्रौर तारे उसकी परिक्रमा लगाते हैं। कोपेर्निकस ने जब ज्योतिष का ग्रध्ययन ग्रारम्भ किया तो शीघ्र ही इन्हें ज्ञात हो गया कि यह धारणा ठीक नहीं

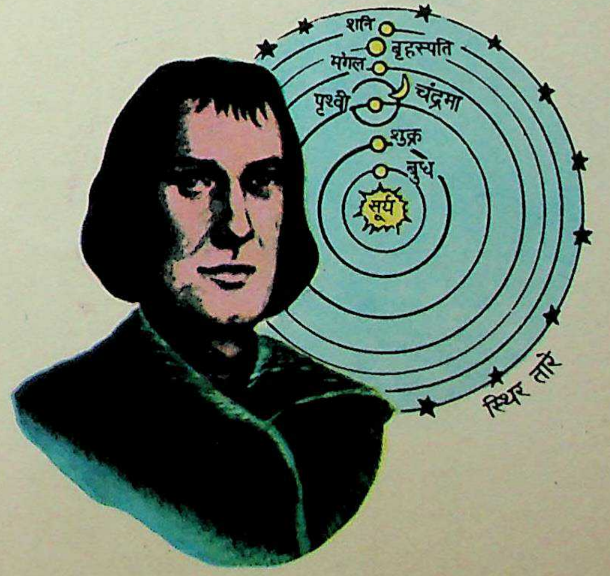

कोपेर्निकस ने कहा कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। इनके तीन विचार थे: पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा लगाती है, परिक्रमा लगाते समय वह अपनी धुरी पर घूमती है और पृथ्वी सूर्य का एक ग्रह-मात्र है।

दूसरे विद्वानों ने इन विचारों के बारे में सुना। उन्होंने चाहा कि कोपेर्निकस इनके विषय में एक पुस्तक लिखें। पर कोपेर्निकस यह नहीं करना चाहते थे। ये जानते थे कि ऐसी पुस्तक से चर्च के धर्मगुरु प्रसन्न नहीं होंगे।

वर्षों बाद कोपेर्निकस ने यह पुस्तक लिखी। वह 1543 में प्रकाशित हुई। उसकी एक प्रति इनके पास उस दिन पहुंची जिस दिन इनका शरीरांत हुआ। इनकी पुस्तक ने जो तूफान पैदा किया उसे देखने को ये जीवित नहीं रहे।

आज इनके विचार हमें इतने सरल दिखाई देते हैं कि हम यह नहीं समझ पाते कि लोग उनका विरोध क्यों करते थे।

क्यूरी, मेरी और पियरे (MARIE CURIE 1867–1934; PIERRE CURIE 1859–1908): क्यूरी दम्पति का नाम रेडियम के आविष्कर्ताओं के रूप में संसार-भर में प्रसिद्ध है।

मेरी पोलैंड में पैदा हुई थीं। वे पेरिस के सॉरबोन विश्वविद्यालय में अध्ययन कर चुकीं तो उनकी भेंट पियरे से हुई। दोनों वैज्ञानिक थे और अपना जीवन अनुसंधान में लगाना चाहते थे। उन्होंने विवाह कर लिया।

वे कुछ ऐसी चट्टानों पर अनुसंधान करने लगे जिनमें से विचित्र किरणें निकलती थीं। 4 वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद वे उस तत्त्व को अलग करने में समर्थ हुए जिसमें से वे किरणें निकलती थीं। इस काम में उन्होंने पिचब्लेंड नामक चट्टान का उपयोग किया और टनों चट्टान में से बहुत तनिक-सा रेडियम निकाला। उन्होंने देखा कि यह पदार्थ रात के अंधेरे में चमकता है।

अपनी प्रयोगशाला में मदाम क्यूरी

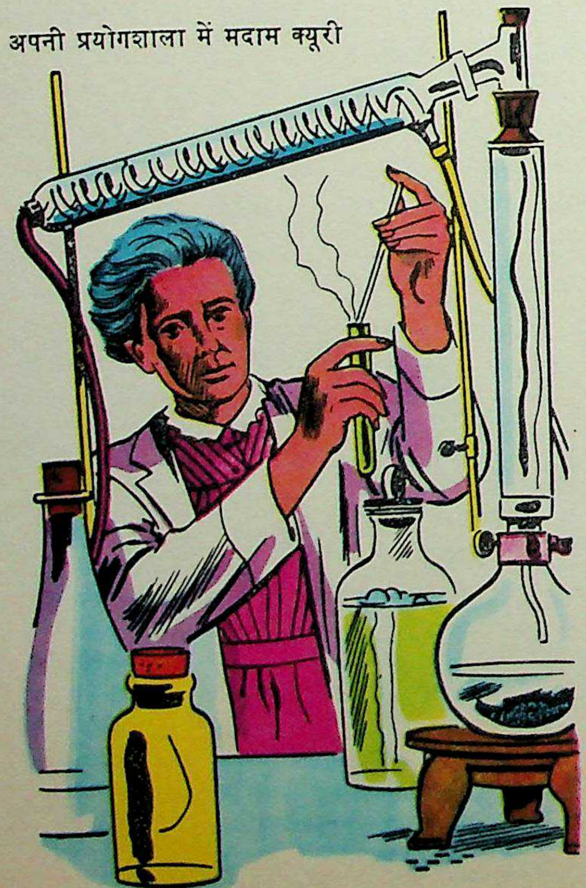

यह वह पदार्थ है जिसकी सहायता से डाक्टर पिछले वर्षों में कैंसर का इलाज करने लगे हैं। किन्तु यह भाग्य की विडंबना है कि मदाम क्यूरी की मृत्यु कैंसर से हुई जो रेडियम की किरणों के लगने से उत्पन्न हुआ था।

क्लोरीन (CHLORINE): कार्ल विल्हेल्म शीले नामक स्वीडन के एक वैज्ञानिक ने 1774 में कुछ रासायनिक पदार्थों को मिलाया और गर्म किया। मिश्रण में से एक हरापन लिए पीली गैस निकली। इसकी गंध से दम घुटता था। शीले ने समझा कि उसने एक ऐसी नई गैस तैयार की है जिसमें ऑक्सीजन है। वर्षों बाद एक दूसरे वैज्ञानिक ने यह प्रमाणित किया कि शीले ने क्लोरीन का आविष्कार किया था।

क्लोरीन उन सरल पदार्थों में से है जो मूलतत्त्व कहलाते हैं। प्रकृति में यह अकेली नहीं मिलती। सदा दूसरे तत्त्वों के साथ संयुक्त होती है। हम कहते हैं कि यह सदा यौगिकों में मिलती है। नमक क्लोरीन और सोडियम का एक यौगिक है। क्लोरीन गैस है। पर उसे द्रव बनाया जा सकता है। द्रव क्लोरीन बड़ी मात्रा में बिकती है।

क्लोरीन विषैली होती है। प्रथम विश्वयुद्ध में यह विष-गैस की भांति इस्तेमाल की गई थी। यह जीवाणुओं के लिए भी विषैली है। तैरने के हौज़ों में जीवाणुओं को मारने के लिए थोड़ी क्लोरीन मिलाई जाती है। बहुत-से बड़े नगर भी अपने पीने के पानी का शोधन क्लोरीन से करते हैं।

ब्लीचिंग घोलों में भी क्लोरीन इस्तेमाल की जाती है। ये घोल कपड़ों को सफेद रखते हैं।

कार्बन टैट्राक्लोराइड और क्लोरोफार्म के नामों से यह सरलता से पता लग सकता है कि उनमें क्लोरीन है। कार्बन टैट्राक्लोराइड आग बुझाने के काम में लाई जाती है। यह धोने के काम में भी आती है। क्लोरोफार्म कभी-कभी ऑपरेशन से पहले रोगी को बेहोश करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

आकाश-लेखन के लिए सफेद धूम उत्पन्न करने के लिए विशेष रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। ये पदार्थ क्लोरीन के यौगिक होते हैं।

गणित (MATHEMATICS): विद्यालय में बच्चे अंकगणित पढ़ते हैं। गिनना, जोड़ना, घटाना, गुणा और भाग उनकी पढ़ाई का एक हिस्सा है। अंकगणित का हमारे जीवन में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

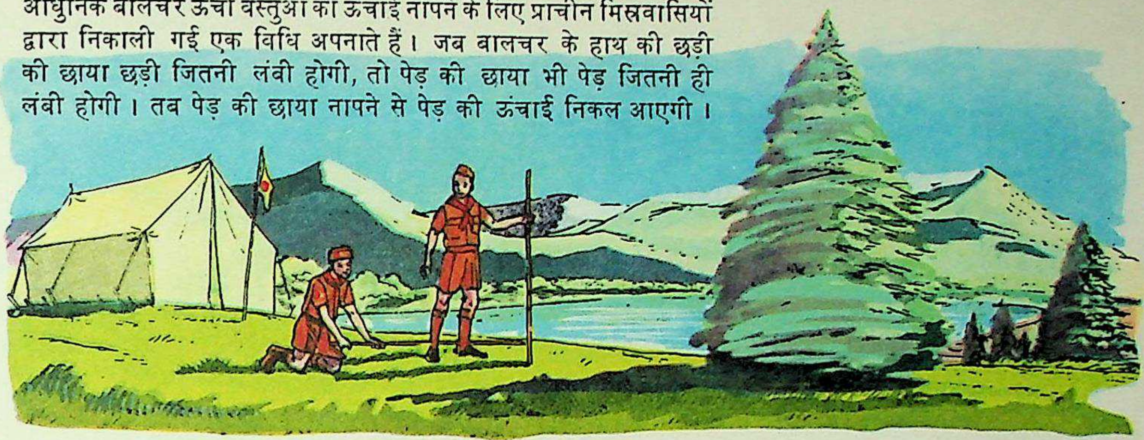

महत्त्वपूर्ण उपयोग है। अंकों के विषय में कुछ जाने बिना हम समय बताने, रेज़गारी देने, मकान बनाने, यहां तक कि किसी खेल का हिसाब रखने जैसा काम भी कैसे कर सकते हैं?

गणितशास्त्र की एक शाखा है अंकगणित। अन्य शाखाओं में रेखागणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति और कलनगणित सम्मिलित हैं। ज्यों-ज्यों गणित की आवश्यकता बढ़ती गई त्यों-त्यों उसका विकास होता गया।

शुरू-शुरू में जब मनुष्य एक-दूसरे के साथ व्यापार करने लगे तो उन्हें गिनने और नापने की विधियों की आवश्यकता पड़ी। उन्हें स्थिर करना था कि जानवरों की कितनी खालों से एक नये भाले का सौदा करना है। व्यापार के विकास के साथ-साथ उन्हें यह भी निश्चय करना पड़ा कि मसाले या रेशम की एक निश्चित मात्रा के लिए उन्हें कितनी चांदी देनी होगी। आगे चलकर जब व्यापारियों ने अपने लेन-देन का बहीखाता लिखना आरंभ किया तो उन्हें संख्याओं के बदले अंकों का आविष्कार करना पड़ा। प्राचीन काल में भारत, मिस्र, बेबीलोन, यूनान और रोम के लोगों में अंकों का प्रचलन था। किन्तु उनके लिए अंकों की अपेक्षा गिनतारे अर्थात् गिनती के चौखटे से जोड़ना या घटाना और गुणा या भाग करना कहीं अधिक सरल होता था।

जिन अंकों का आज संसार में प्रचलन है, उनका पूर्व रूप भारत में विकसित हुआ था। भारत के गणितशास्त्रियों ने शून्य का आविष्कार किया और भिन्न प्रणाली का भी विकास किया। अरब के लोगों ने मध्ययुग में भारत से ही अंकों की विधि सीखकर उसका यूरोप में प्रचार किया। अतः 'हिन्द' के नाम से आज भी अंकों को 'हिन्दसा' कहा जाता है। इस विधि ने गिनती को सुगम बना दिया।

रेखागणित या ज्यामिति का संबंध मुख्यतः आकार से है जैसे कोण, त्रिकोण, वृत्त, गोलाकार आदि। रेखागणित को अंग्रेज़ी में 'ज्योमेट्री' कहते हैं। यह शब्द यूनानी भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है, जिनके अर्थ हैं 'पृथ्वी' और 'नापना'। हम देखते हैं कि बहुत पहले रेखागणित का आरंभ उस युग में हुआ जब लोगों को पहले-पहल भूतल के खंडों को नापने की आवश्यकता प्रतीत हुई। प्राचीन काल में मिस्र की नील नदी का पानी हर साल किनारे तोड़कर नदी-घाटी में खड़े खेतों पर कीचड़ के ढेर के ढेर बिछा जाता था। जब पानी उतर जाता तो प्रत्येक किसान को अपने खेत के निशान फिर लगाने पड़ते थे। यह ठीक-ठीक जानने के लिए कि किसका खेत कितना था उन्होंने भूमि नापने की विधि ढूंढ निकाली।

शायद पहले-पहल मिस्रियों ने ही यह विधि निकाली कि वर्ग का क्षेत्रफल कैसे निकाला जाता है और फिर आयत (▭) का कैसे? वे चौड़ाई को ऊंचाई से गुणा करते थे। ये क्षेत्रफल कैसे निकाले जाते हैं यह जानकर उन्होंने त्रिभुज (△) का क्षेत्रफल ढूंढ़ने की विधि भी खोज निकाली। अपनी भूमि को नापने के लिए वे उसे त्रिभुजों में बांट लेते थे।

त्रिभुजों के विषय में मिस्रियों ने अन्य भी बहुत-सी जानकारी प्राप्त की। उन्होंने वृत्त का भी अध्ययन किया और यह पता लगाया कि वृत्त की परिधि उसके व्यास का लगभग $3\frac{1}{7}$ है। बेबीलोनवासी भी वृत्त की परिधि निकालना जानते थे।

किन्तु यूनानी युग से पहले रेखागणित के सिद्धान्तों का वैसा विधिवत् निर्धारण किसीने नहीं किया था जैसा 300 ई० पू० में यूनानी गणितज्ञ यूक्लिड ने कर दिखाया। उसने रेखागणित को प्रामाणिक नियमों के सांचे में ढाल दिया। 2000 वर्ष से भी अधिक समय तक उसके ग्रंथ चलते रहे। यूनानियों ने सर्वेक्षण, ज्योतिष, नौचालन और स्थापत्य कला में गणित को बहुत उपयोगी माना, जैसाकि आजकल हम लोग भी मानते हैं। 240 ई० पू० में यूनानी ज्योतिर्विद् इरेतोस्थेनीज़ ने रेखागणित के द्वारा हिसाब लगाया था कि पृथ्वी की गोलाई 24,000 मील है। यह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संख्या सर्वथा शुद्ध उत्तर के आसपास की है।

अरबवालों ने बीजगणित का विकास किया। यह गणित की एक प्रकार की आशुलिपि है। बीजगणित के प्रयोग से हम गणित की बहुत-सी बातें केवल कुछ अक्षरों या संकेतों में बता सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि हम कहना चाहते हैं कि किसी वृत्त में व्यास व्यासार्ध का दुगुना है तो इसे हम यों लिखेंगे : $D=2R$

धीरे-धीरे गणित की अन्य शाखाएं बनती चली गईं। आजकल गणित अन्य विज्ञानों में भी अत्यन्त सहायक सिद्ध हो रहा है।

किन्तु गणित साधनरूप से कहीं अधिक महत्त्व का विषय है। तथ्यों के ठोस परिणाम निकालने के लिए यह विचार की एक प्रक्रिया भी है।

गणित की आधुनिकतम प्रगतियों में से एक है, विशाल इलेक्ट्रॉनिक संगणकों, अर्थात् हिसाब की मशीनों का निर्माण। जिस सवाल को हल करने में मनुष्य को एक वर्ष तक लग सकता है, उसे संगणक कुछ क्षणों में हल कर सकता है। (देखें : अंक और संख्याएं ; शून्य)

गति (SPEED) : हमारे सबसे तेज़ दौड़नेवाले धावक चार मिनट से कम समय में एक मील दौड़ लेते हैं। लेकिन घुड़दौड़ के घोड़े की तुलना में यह गति धीमी है। घुड़दौड़ का घोड़ा कोई डेढ़ मिनट में एक मील दौड़ लेता है। लेकिन यह घोड़ा भी चीते के साथ दौड़ने में हार जाएगा। चीता पृथ्वी पर रहनेवाले जीवों में सबसे तेज़ दौड़ता है। एक मील दौड़ने में उसे एक मिनट भी नहीं लगेगा।

वैसे तेज़ पक्षियों की गति चीतों से भी अधिक होती है। उदाहरण के लिए बाज़ चीते के दौड़ने की गति से दुगुनी तीव्र गति से उड़ सकता है।

लेकिन मनुष्य की बनाई कुछ मशीनें सभी जीवों को पीछे छोड़ गई हैं। मोटरकारों की गति किसी भी जीव से तीव्र होती है। वायुयान उनसे भी आगे बढ़ गए हैं। कई वर्षों के प्रयत्न के बाद वायुयान बनानेवाले ध्वनि से भी तीव्र गति के, अर्थात् 750 मील प्रति घंटे से भी अधिक तीव्र गति के वायुयान बनाने में सफल हो गए हैं। कुछ जेट वायुयानों की गति ध्वनि से बहुत अधिक होती है।

रॉकेट मनुष्य के तीव्रतम यान हैं। पहला कृत्रिम उपग्रह प्रति घंटा 18,000 मील की गति से पृथ्वी के चक्कर लगाता रहा। चन्द्रमा पर जाने के लिए रॉकेट की गति 24,000 मील प्रति घंटा होनी आवश्यक है।

लेकिन तीव्रतम रॉकेट भी उस गति से बहुत पीछे हैं जिस गति से पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगाती रहती है। पृथ्वी प्रति मिनट 1,100 मील की यात्रा कर लेती है। किन्तु यह गति भी प्रकाश की गति की तुलना में कछुए की दौड़ जैसी लगती है। प्रकाश की गति कल्पनातीत है। प्रकाश एक सेकंड में 1,86,000 मील चला जाता है।

बीसवीं शताब्दी को 'गति का युग' कहा गया है। बहुत-सी आधुनिक मशीनें आज जितनी तेज़ चलती हैं, उसे पिछली शताब्दियों में लोग संभव भी नहीं मानते थे। आगे के आविष्कारों की गति शायद इससे भी तीव्र हो।

मील प्रति घंटा वायु में गति

10	कैंचीदुम फ्लाईकैचर
17	ब्लूबर्ड
36	रोबिन
45	पालतू कबूतर
68	स्विफ्ट
106	अबाबील
120	गोल्डेन ईगल या गरुड़
180	डक हॉक
346	सामान्य वायुयान
1,405	जेट वायुयान
23,450	चंद्र रॉकेट

मील प्रति घंटा पृथ्वी पर गति

1	गोफर सांप
9	मुर्गी
11	सूअर
22	पूरी रफ्तार से दौड़ता धावक
25	तेज़ स्केटर
30	श्वेत पूंछ का हिरन
36	ग्रे हाउंड (शिकारी कुत्ता)
40	घोड़ा
45	जैक खरगोश
60	गैज़ेल
70	चीता
205	रेलगाड़ी
210	मोटरसाइकिल
394	मोटरकार
632	रॉकेट स्लेड

मील प्रति घंटा पानी में गति

1	पाइक मछली
3	तैराक आदमी
7	सालमन मछली
35	उड़न मछली (उड़ने के ठीक पहले)
41	समुद्री जहाज़
60	सोर्डफिश और सेलफिश
248	जेट स्पीडबोट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुडईयर से अचानक जो काम हो गया, उसीसे टायर का रबर बनाने की आधुनिक विधि हाथ आई।

गुडईयर, चार्ल्स (CHARLES GOODYEAR 1800-1860) : आज लाखों आदमी टायरों पर चलनेवाली मोटरों, बसों आदि की सवारी करते हैं। इस सुविधा के लिए हम सबको चार्ल्स गुडईयर का कृतज्ञ होना चाहिए।

टायर रबर से बनते हैं। रबर गुडईयर के बहुत पहले ईजाद हो चुका था। लेकिन उसमें कई त्रुटियां थीं। सर्दियों में वह सख्त होकर फट जाता था और गर्मियों में पिघलकर बदबू देने लगता था।

रबर को सुधारने की बहुत-से लोगों ने कोशिश की। चार्ल्स गुडईयर भी इन्हींमें से एक था। उसने सैकड़ों प्रयोग किए। रबर में बहुत-से पदार्थ मिलाए और देखा कि उनका क्या असर होता है।

एक दिन प्रयोगशाला में काम करते-करते अचानक उसके हाथ से रबर का एक टुकड़ा छूटकर जलते स्टोव पर गिर पड़ा। इस रबर में गंधक मिली थी। रबर और गंधक आग पर गिरने से काले तो ज़रूर हो गए लेकिन जले नहीं। जब गुडईयर ने और परीक्षण किए तो उसे पता लगा कि गंधक-मिला रबर अन्य प्रकार के किसी भी रबर की तुलना में कहीं अधिक अच्छा था। गर्म होने पर वह पिघलकर चिपचिपा नहीं होता था और न बदबू देता था। ठंड से सिकुड़कर वह फटता नहीं था। गंधक और आग ने रबर को कुछ बदल दिया था।

गुडईयर के आविष्कार के अनुसार रबर तैयार करने की विधि को 'वलकनाइज़' करना कहते हैं। 'वलकन' यूनानी अग्नि देवता का नाम है।

गुडईयर का जन्म अमरीका के कनेक्टीकट राज्य के न्यू हेवन नगर में हुआ था। गुडईयर को अपने रबर के आविष्कार से बहुत लाभ नहीं हुआ। वास्तव में एक बार तो कर्ज़ की वजह से वह जेल में बन्द कर दिया गया था। मरते समय भी उसपर बड़ा कर्ज़ था। लेकिन गुडईयर को क्या पता था कि बाद में मोटर का आविष्कार होगा और उसमें अरबों किलोग्राम रबर काम में आएगा और वह सब रबर उसीकी रीति से तैयार किया जाएगा।

गूतेनबर्ग, जोहान (JOHANN GUTENBERG 1400 ?-1468) : जोहान गूतेनबर्ग जर्मन आविष्कारक था। उसने पीतल के ऐसे सांचे बनाए जिनसे सुन्दर और उपयोगी टाइप ढाला जा सकता था। इस टाइप से छपाई का अच्छा काम संभव हो सका।

'गूतेनबर्ग की बाइबिल' दुनिया की सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है। इसकी एक प्रति कोई तीस लाख रुपये में बिकी है। इसे गूतेनबर्ग ने छापा था, यह बात निश्चित रूप से नहीं कही जा सकती।

गूतेनबर्ग को छपाई का आविष्कारक माना जाता है। जब लोग छपाई की बात करते हैं तो उनका मतलब अलग-अलग अक्षरों के टाइप की छपाई से होता है। शायद गूतेनबर्ग इस प्रकार की छपाई या मुद्रण का आविष्कारक नहीं था, क्योंकि ख्याल है कि चीनियों ने बहुत पहले मिट्टी से अक्षर के टाइप ढालकर उनकी छपाई की थी। लेकिन यह आविष्कार कोई बहुत उपयोगी साबित नहीं हुआ।

गूतेनबर्ग ने टाइप ढालने का सांचा बनाया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुद्रण का तो यूरोप में नये सिरे से आविष्कार किया गया। लेकिन कोई नहीं जानता कि छपाई का यूरोप में किसने आविष्कार किया। इसका कारण यह हो सकता है कि आविष्कारक लोगों को इस धोखे में रखना चाहता होगा कि उसकी किताबें हस्तलिखित हैं। गूतेनबर्ग ने चाहे बाइबिल छापी हो या नहीं, मुद्रण का आविष्कार किया

छापने की मशीन का एक प्रारंभिक रूप

हो या न किया हो, परन्तु टाइप ढालने का सांचा बनाकर उसने दुनिया का बड़ा उपकार किया।

गेरिक, ओटो वॉन (OTTO VON GUERICKE 1602-1686): कोई तीन सौ बरस पहले एक जर्मन वैज्ञानिक ने अपने सम्राट के पास खबर भेजी कि वह उन्हें एक प्रयोग दिखाना चाहता है। यह वैज्ञानिक ओटो वॉन गेरिक था। यहां जो चित्र है वह ओटो वॉन गेरिक के एक प्रयोग-प्रदर्शन का है। जो बड़ी गेंद-सी दिखलाई पड़ रही है वह अन्दर से खाली थी। एक पम्प से गेरिक ने गेंद की करीब-करीब सारी हवा निकाल दी। बाहर की हवा के दबाव से गेंद के दोनों भाग एक-दूसरे से पूरे ज़ोर के साथ जुड़ गए। दोनों तरफ नौ-नौ घोड़े जोत दिए गए, लेकिन वे भी गेंद के दोनों भागों को अलग नहीं कर सके।

विज्ञान की कक्षाओं में आज भी यह प्रयोग बालक-बालिकाएं करते हैं। लेकिन उनकी गेंदें कुछ सेंटीमीटर व्यास की ही होती हैं। इन्हें 'मेगदेबर्ग के गोलार्द्ध' कहते हैं। यह नाम इसलिए है कि गेरिक मेगदेबर्ग का मेयर था।

वॉन गेरिक ने और भी कई प्रयोग किए। उसने बिजली से चिनगारियां पैदा करने की मशीन का आविष्कार किया। उसने हवा और मौसम-संबंधी प्रयोग किए, और जल-बैरोमीटर का आविष्कार किया।

जल-बैरोमीटर का कांच का ट्यूब कोई दस मीटर लम्बा था जो गेरिक के घर की छत में से ऊपर चला जाता था। ट्यूब करीब-करीब पूरा पानी से भरा रहता था। पानी के ऊपर एक लकड़ी का खिलौना तैरता था। जिस दिन मौसम साफ रहता, उस दिन पानी ऊपर आ जाता और वह लकड़ी का खिलौना गेरिक की छत के ऊपर रहता। जिस दिन मौसम बदली का होता, वह खिलौना पानी के सहारे ट्यूब में नीचे चला जाता और छत के ऊपर नहीं दिखलाई पड़ता। पड़ोसी बैरोमीटर का मतलब नहीं समझते थे। जब वे लकड़ी के खिलौने को कभी ऊपर और कभी नीचे देखते तो वे कहते—गेरिक शैतान के साथ मिलकर कुछ गड़बड़ कर रहा है। आज से तीन सदी पहले वैज्ञानिक होना कोई सरल बात नहीं थी।

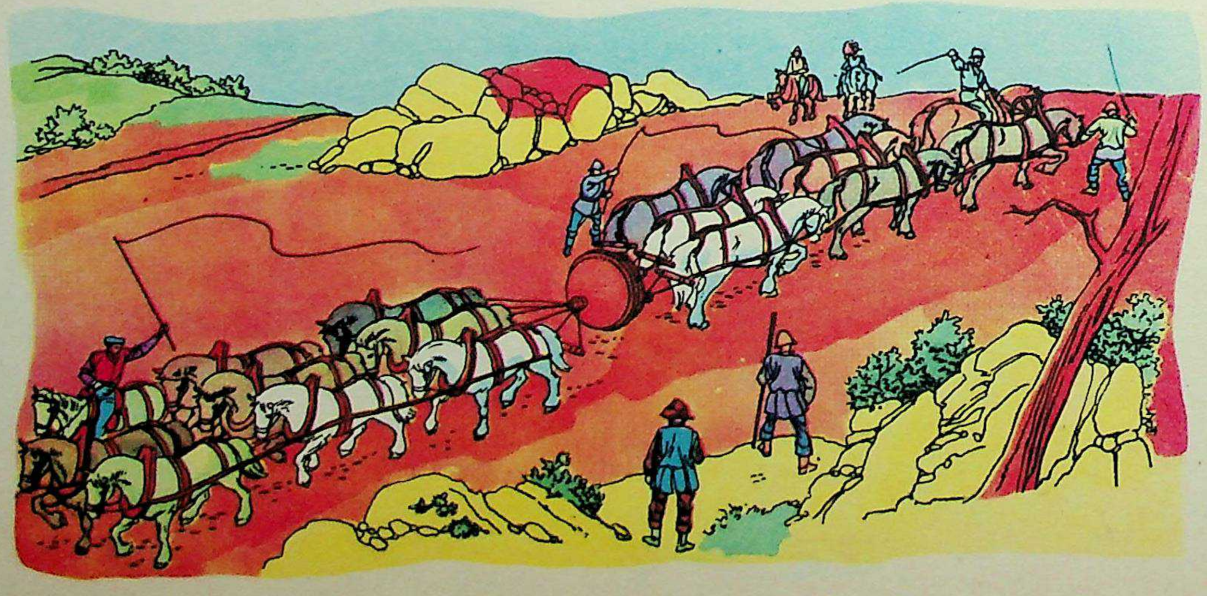

घोड़ों के दो मज़बूत दस्ते भी गेरिक के दो गोलार्धों को खींचकर अलग नहीं कर सके।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

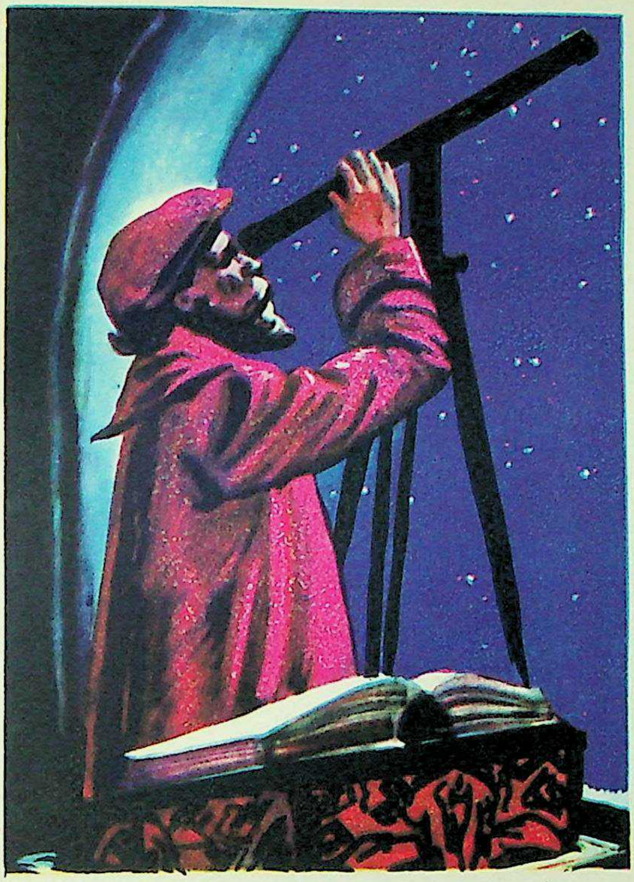

गैलिलियो ने ही पहले-पहल ग्रह-नक्षत्रों को दूरबीन से देखा।

गैलिलियो (GALILEO 1564–1642) : गैलिलियो गैलिली को विज्ञान का जनक कहा जाता है। आज से लगभग 350 वर्ष पूर्व वह महापुरुष इटली में रहता था। उन दिनों अधिकांश लोग शताब्दियों पहले लिखी गई पुस्तकों से ही विज्ञान का अध्ययन करते थे। गैलिलियो ने स्वयं सत्य का पता लगाने का निश्चय किया। उसने प्रयोग करने शुरू किए।

कहते हैं कि एक दिन 17 वर्षीय गैलिलियो अपने नगर पीसा के एक गिरजे में खड़ा था। उसके सिर पर ज़ंजीर के सहारे एक लैंप लटक रहा था जो आगे-पीछे झूल रहा था। लैंप के ये झोंटे कभी छोटे हो जाते, कभी बड़े। गैलिलियो का ध्यान इस बात पर गया कि झोंटे छोटे हों या बड़े, उनमें समय बराबर लगता है। उसने अपनी नब्ज़ गिनकर समय का निश्चय कर लिया। इस घटना ने उसे पेंडुलम का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया, क्योंकि ज़ंजीर के सहारे लटकता हुआ लैंप एक प्रकार का पेंडुलम ही है। इस दिशा में उसने जो काम किया उसीके आधार पर पहली बार अच्छी घड़ियों का निर्माण हुआ।

जिन दिनों गैलिलियो पेंडुआ विश्वविद्यालय में गणित का अध्यापक था उन दिनों उसने अपना अत्यधिक प्रसिद्ध प्रयोग किया। उसने दो विभिन्न भार वाले गोलों को एक ढलान पर लुढ़काया। दोनों गोले तली में एकसाथ पहुंचे। यह देखकर लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्योंकि प्राचीन मान्यता यह थी कि भारी पदार्थ हलके पदार्थों के मुकाबले तेज़ी से गिरते हैं।

ज्योंही गैलिलियो को पता चला कि दूरबीन का आविष्कार हो गया है, वह तुरन्त एक दूरबीन का निर्माण करने लगा। दूरबीन की मदद से उसने कई खोजें कीं। चन्द्रमा पर पर्वत और सूर्य पर धब्बे देखनेवाला वह पहला आदमी था। इस बात का पता भी उसीने लगाया कि बृहस्पति ग्रह के चारों ओर उसके चन्द्रमा घूमते हैं; कि शुक्र परिवर्तित होता-सा लगता है; कि आकाश-गंगा और कुछ नहीं अनेक दूरवर्ती तारों का प्रकाश है। यह सब देखकर उसे पूरा विश्वास हो गया कि महान वैज्ञानिक कोपेर्निकस का कहना बिलकुल ठीक है। कोपेर्निकस ने कहा था कि पृथ्वी इस ब्रह्मांड का केन्द्र नहीं है; पृथ्वी सूर्य के ग्रह-परिवार की एक सदस्य है और वह सूर्य के चारों ओर घूमती है। गैलिलियो ने अपने विचारों का प्रतिपादन कई पुस्तकों में किया।

प्राचीन काल के विद्वानों के मतों में शंका प्रकट करने के कारण वह बदनाम हो गया। उसे जेल की हवा खानी पड़ी और अपनी कुछ मान्यताओं के कारण उसे प्राणदंड की धमकी भी दी गई। लेकिन गैलिलियो ज्ञान प्राप्त कर चुका था। उसके आदर्श पर चलकर दूसरे वैज्ञानिकों ने प्राचीन मान्यताओं को आंख मूंदकर मानने के बजाय स्वयं प्रयोग करके सत्य को जानना आरम्भ कर दिया।

घर्षण (FRICTION) : काठ के किसी खुरदरे टुकड़े पर रेगमाल रगड़ने में कुछ ज़ोर लगाना पड़ता है। इसका कारण यह माना जाता है कि रेगमाल और काठ के टुकड़े के बीच बहुत अधिक घर्षण होता है। काठ के चिकने टुकड़े पर रेगमाल आसानी से चलता है, क्योंकि उस दशा में घर्षण कम होता है। कंक्रीट के फर्श पर कोयले से भरा बड़ा संदूक इधर से उधर घसीटकर रखने में मेहनत करनी पड़ती है, क्योंकि संदूक और फर्श के बीच में घर्षण की मात्रा बहुत अधिक रहती है। जब भी दो तल रगड़ खाते हैं तो घर्षण उत्पन्न होता है। चिकने तलों की अपेक्षा खुरदरे तलों के रगड़ खाने पर घर्षण अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है।

यदि जिस वस्तु को हटाया जा रहा है उसका भार अथवा दबाव अधिक हो तो घर्षण भी बढ़ जाता है। इस प्रकार फर्श पर माचिस को खिसकाना 50 पौंड वज़न वाली चीज को खिसकाने की अपेक्षा कहीं आसान है।

घर्षण से गर्मी उत्पन्न होती है। पेंसिल के अक्षरों को मिटाने के लिए जब हम उसपर रबर घिसते हैं तो रबर गर्म हो उठता है। यदि रेगमाल पर माचिस की तीली घिसी जाए तो इतनी अधिक गर्मी उत्पन्न होती है कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीली जल जाती है।

घर्षण को कम करने का एक उपाय यह है कि आपस में रगड़ खानेवाले तलों के बीच में तेल या ग्रीस लगा दिया जाए। बेलनों, पहियों या बाल-बेअरिंग के प्रयोग से भी घर्षण को कम किया जा सकता है।

चिकित्सा-विज्ञान (MEDICINE) : मां देखती है कि उसके बच्चे को तेज़ बुखार है। बच्चा इतना बेचैन है कि हर समय चिल्लाता है। किन्तु तभी डाक्टर या चिकित्सक आता है। कुछ ही मिनटों में वह समझ जाता है कि खराबी क्या है। वह बच्चे को थोड़ी दवाई देता है। देखते ही देखते बुखार उतर जाता है। दो-एक दिनों में बच्चा ठीक हो जाता है।

इस प्रकार की घटनाएं बहुत सामान्य हैं। प्रायः प्रत्येक के जीवन में डाक्टरों और चिकित्सकों का महत्त्व-पूर्ण स्थान है। जब हम बीमार पड़ते हैं तो डाक्टर देखता है कि खराबी क्या है। वह जानता है कि हमें ठीक कैसे किया जा सकता है।

हमारे रोग को दूर करने के अलावा भी डाक्टर हमारी बड़ी सहायता करते हैं। वे हमें बीमार पड़ने से रोकने के लिए बहुत कुछ करते हैं। इस प्रकार की चिकित्सा को निवारक चिकित्सा कहते हैं।

आजकल अधिकांश डाक्टर विशेषज्ञ होते हैं। वे विशेष प्रकार के रोगों का या शरीर के किन्हीं विशिष्ट अंगों का ही इलाज करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ डाक्टर आंखों के विशेषज्ञ, कुछ हृदय-रोगों के विशेषज्ञ और कुछ गुर्दे के रोगों के विशेषज्ञ होते हैं। कुछ डाक्टर निदान विशेषज्ञ होते हैं, अर्थात् वे यह देखते हैं कि बीमारी क्या है। कुछ शल्य-चिकित्सक होते हैं, जिनका काम है चीर-फाड़ करना। इस प्रकार विशेषज्ञों की सूची बहुत लंबी है।

डाक्टर बनने के लिए बरसों पढ़ना पड़ता है। भारत में तथा अमरीका आदि अन्य बहुत-से देशों में डाक्टरों को डाक्टरी करने से पहले परीक्षा पास करनी पड़ती है। जो डाक्टर भली प्रकार प्रशिक्षित नहीं है, वह बहुत हानि पहुंचा सकता है। इसीलिए 'नीम हकीम खतरे जान' का मुहावरा प्रसिद्ध है।

प्राचीन काल में मिस्र और बेबीलोनिया में वैद्यक और धर्म का परस्पर घनिष्ठ संबंध था। इलाज करनेवाले डाक्टर भी होते थे और साथ-साथ पुजारी भी। बेबीलोन की प्राचीन काल की मिट्टी की तख्तियां उपलब्ध हुई हैं जिनमें विभिन्न रोगों के लक्षण और औषधियों का प्रयोग बताया गया है। इन तख्तियों की समाप्ति देवाराधन से होती है। मिस्र के 3,000 वर्ष से भी पुराने एक ग्रंथ में एक वैद्य पुरोहित द्वारा लिखे गए 800 नुस्खों का संग्रह है। प्राचीन काल की कुछ औषधियां बड़ी विचित्र होती थीं। उदाहरणार्थ, मिस्रवासियों का विश्वास था कि पिसा हुआ पन्ना कई रोगों में बड़ा गुणकारी होता है।

यद्यपि चिकित्सा-विज्ञान का उदय हुए दो हज़ार वर्ष से भी अधिक समय व्यतीत हो चुका है, फिर भी मध्ययुग तक रोगों के उपचार की कई विचित्र विधियां प्रचलित रहीं। काफी अर्से तक जोंकें लगाकर रोगी का रक्त निकालना इतना प्रचलित हो गया था कि किसी समय चिकित्सक लोग भी 'जोंक' कहलाने लगे थे। घिनौने स्वाद वाले आसव बनाए जाते थे, क्योंकि लोगों की यह धारणा थी कि उत्तम औषधि वह है जिसका स्वाद बुरे से बुरा हो। एक समय था जबकि चीरफाड़ का काम नाइयों के हवाले था।

रोगियों की चिकित्सा योग्यतापूर्वक करने के लिए चिकित्सक को मानव-शरीर की अच्छी जानकारी होनी चाहिए। लेकिन लोगों को यह ज्ञान धीरे-धीरे ही प्राप्त हुआ कि हमारी शरीर-रचना किस प्रकार की है। उदाहरण के लिए, वैज्ञानिकों को मानव-शरीर में होनेवाले रक्त-संचार का ज्ञान बहुत बाद में हुआ।

यूनान के प्रसिद्ध चिकित्सक हिपोक्रेटीज़ से आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान का आरम्भ हुआ। वह पश्चिमी संसार में वैद्यक का जन्मदाता कहलाता है। हिपोक्रेटीज़ ने बताया कि प्रत्येक रोग का एक प्राकृतिक कारण होता है, भूत-प्रेत उसका कारण नहीं होते। उसने चिकित्सा को धर्म से अलग किया। उसके शिष्यों ने प्रण किया कि वे यथाशक्ति रोगियों की सहायता करेंगे और उनके रोगी उन्हें जो कुछ बताएंगे वे उसे गुप्त रखेंगे तथा जानबूझकर किसीको हानि नहीं पहुंचाएंगे। 'हिपोक्रेटीज़ की शपथ' का डाक्टर लोग अब भी पालन करते हैं।

भारतीय चिकित्सा-विज्ञान का मूल संसार के एक प्राचीनतम ग्रंथ 'ऋग्वेद' में मिलता है। ऋग्वेद का ही उप-वेद आयुर्वेद है। वैदिक युग के पश्चात् 'चरक संहिता' और 'सुश्रुत संहिता' सबसे प्राचीन पुस्तकें हैं, जिनके प्रणेता आयुर्वेदाचार्य चरक और सुश्रुत कनिष्क-काल और गुप्त-काल में हुए। सुश्रुत ने शल्य-चिकित्सा को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया। इसी काल में भारत का अद्वितीय रसाय-नज्ञ नागार्जुन भी हुआ। उसने 'लोहशास्त्र' लिखकर तथा पारे के नाना प्रकार के रासायनिक योग तैयार करने की विधियों का आविष्कार करके रसायन-विज्ञान में वृद्धि की। इसी काल के आसपास 'अष्टांग संग्रह' और 'अष्टांग हृदय' जैसी उच्चकोटि की पुस्तकें लिखी गईं। नाड़ी-परीक्षा द्वारा रोगों का निदान करना भारतीय चिकित्सा-पद्धति की एक अद्भुत सफलता है।

चिकित्साशास्त्र जो कुछ आज है, वह सैकड़ों-हज़ारों चिकित्साशास्त्रियों की देन है। साथ के चार्ट में आधुनिक चिकित्सकों में से कुछ के नाम दिए गए हैं। जैसाकि सूची से स्पष्ट है, विभिन्न देशों के चिकित्सकों और वैज्ञानिकों को चिकित्सा की विविध शाखाओं में प्रथम होने का श्रेय प्राप्त है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाम	काल	आविष्कार
हिपोक्रेटीज़ यूनान	460 ?–377 ? ई० पू०	चिकित्सा-विज्ञान के जन्मदाता हिपोक्रेटीज़ ने अनेक रोगों और उपचारों का वर्णन किया। आज भी डाक्टर लोग 'हिपोक्रेटीज़ की शपथ' का पालन करते हैं।
क्लाडियस गैलेन यूनान और रोम	130 ?–200 ?	गैलेन ने 500 पुस्तकें लिखीं जिनके बारे में सदियों तक यह समझा जाता रहा है कि औषधियों के विषय में जो कुछ भी ज्ञातव्य है वह सब उनमें निहित है।
राज़स अरब	850–923	राज़स ने 'चिकित्सा विश्वकोश' लिखा और सर्वप्रथम उसीने यह सिद्ध किया कि चेचक खसरा से भिन्न एक रोग है।
एविसिन्ना अरब	980–1037	एविसिन्ना के 'चिकित्सा-विधान' में उपचार-विधियों का उल्लेख था जोकि अगले 650 वर्षों तक पढ़ाया जाता रहा।
एण्ड्रियास वेसालियस बेल्जियम	1514–1564	वेसालियस ने अधिकतर अनुसंधान मानव-शरीर-रचना के विषय में किए। वह शरीर-रचना-विज्ञान का 'आधुनिक पिता' माना जाता है।
एम्ब्रौसे पेरी फ्रांस	1510–1590	पेरी एक महान शल्य-चिकित्सक था। उसने घाव को गर्म लोहे से दागने के बदले उसे सीकर भरना लोगों को सिखाया।
विलियम हार्वे ब्रिटेन	1578–1657	हार्वे ने रक्त-संचार की वास्तविक प्रक्रिया का पता लगाया। चिकित्साशास्त्र के सबसे बड़े आविष्कारकों में से यह एक था।
ऐंटन वान लेवेनहोक नीदरलैण्ड	1632–1723	लेवेनहोक वह पहला व्यक्ति था जिसने जीवाणुओं का पता लगाया और उनका उल्लेख किया। सूक्ष्मदर्शक यंत्र का वह पहला प्रयोग-कर्ता था।
जॉन हण्टर ब्रिटेन	1728–1793	शरीर कैसे बना है—इसके संबंध में हण्टर की खोज शल्य-चिकित्सा को चिकित्सा-विज्ञान की एक प्रमुख शाखा बनाने में सहायक सिद्ध हुई।
एडवर्ड जेनर ब्रिटेन	1749–1823	जेनर ने टीका लगाने की महत्त्वपूर्ण खोज की। उसने एक आठ-वर्षीय बालक के चेचक का टीका लगाने में सफलता प्राप्त की।
रेने थियोफिले लाएनेस फ्रांस	1781–1826	लाएनेस ने स्टेथस्कोप का आविष्कार किया जिसके द्वारा डाक्टर रोगी की श्वास-क्रिया और हृदय के स्पन्दन को सुनते हैं।
विलियम ब्यूमोंट अमरीका	1785–1853	ब्यूमोंट ने आहार के पचाने में आमाशय की प्रक्रिया तथा आमाशय-रस के संबंध में अनुसंधान किया।
विलियम टी० मॉर्टन अमरीका	1819–1868	मॉर्टन ने ईथर का प्रयोग बेहोश करनेवाली औषधि के रूप में कर दिखाया। इस खोज ने शल्यक्रिया को पीड़ारहित बना दिया।
लुई पास्चर फ्रांस	1822–1895	पास्चर ने यह सिद्ध करके कि अधिकतर रोग कीटाणुजन्य होते हैं, लोगों की रोग-विषयक धारणा में आमूल परिवर्तन ला दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिकित्सा-विज्ञान

नाम	काल	आविष्कार
जोज़ेफ लिस्टर ब्रिटेन	1827–1912	लिस्टर ने खोज की कि कुछ पदार्थ, जो अब 'कीटाणुनाशक' कहलाते हैं, रोगाणुओं को नष्ट कर सकते हैं। आजकल 'कीटाणुनाशकों' का प्रयोग सामान्य बात हो गई है।
राबर्ट कॉक जर्मनी	1843–1910	कॉक ने रोगाणुओं के विषय में अध्ययन किया और लोगों के क्षय-विषयक ज्ञान में वृद्धि की तथा गिल्टी रोग एवं एशियाई हैज़े के कारणों पर प्रकाश डाला।
रोएंत्जेन जर्मनी	1845–1923	रोएंत्जेन ने चिकित्सा-क्षेत्र में एक्स-रे के प्रयोग को व्यावहारिक बना दिया। एक्स-रे के द्वारा डाक्टर रोगी के शरीर के भीतर देख सकता है।
कार्लो फिन्ले क्यूबा वाल्टर रीड अमरीका	1822–1915 1851–1902	फिन्ले वह पहला व्यक्ति था जिसने बताया कि भयंकर पीतज्वर मच्छरों से फैलता है। जब रीड के परीक्षणों से भी यह सिद्ध हो गया कि यह विचार ठीक है, तो इस ज्वर को फैलानेवाले मच्छरों को नष्ट करके इस रोग के उन्मूलन का मार्ग प्रशस्त हो गया।
पाल एर्हलिख जर्मनी	1855–1915	एर्हलिख ने रोगाणुओं को नष्ट करने के लिए रक्त के प्रवाह में इंजेक्शन द्वारा रासायनिक पदार्थ प्रविष्ट करने की दिशा में प्राथमिक कार्य किया।
सिग्मण्ड फ्रायड आस्ट्रिया	1856–1939	फ्रायड ने मानसिक रोगों के कारण और उपचार की दिशा में अनुसंधान-कार्य किया। उसका कार्य आधुनिक मनोविकार-विज्ञान का आधार है।
फ्रेडरिक गोलैण्ड होप्किन्स ब्रिटेन	1861–1947	होप्किन्स ने कुछ खाद्य-पदार्थों के शरीर पर प्रभाव का अध्ययन किया। उसके निष्कर्षों ने विटामिनों की खोज का मार्ग खोल दिया।
फ्रेडरिक ग्रांट बेंटिंग कनाडा	1891–1941	इंसुलिन के आविष्कर्ताओं में बैंटिंग भी एक था। इंसुलिन मधुमेह के रोगियों के लिए गुणकारी है।
ऐलेक्ज़ैण्डर फ्लेमिंग ब्रिटेन हावर्ड वाल्टर फ्लोरे ब्रिटेन अर्न्स्ट बोरिस चेन जर्मनी	1881–1957 1898– 1906–	1928 में फ्लेमिंग ने पहली चमत्कारिक प्रतिजीवाणु औषधि 'पेनिसिलिन' का आविष्कार किया। उसके दस वर्ष पश्चात् फ्लोरे और चेन ने सिद्ध कर दिया कि कीटाणुओं से उत्पन्न होनेवाले विभिन्न रोगों के निवारण के लिए पेनिसिलिन अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है।
गेरहार्ड डोमैग जर्मनी	1895–	डोमैग को जब विदित हुआ कि प्रोण्टोसिल कीटाणुनाशक है तो उसने चिकित्सा-विज्ञान को 'सल्फा ड्रग्स' नामक औषधियों की एक नई श्रेणी दी।
जोनास साल्क अमरीका	1914–	पोलियो-निरोधक टीके का आविष्कार करके साल्क विश्वव्यापी यश का भागी बन गया। उसके आविष्कार की घोषणा 1955 में हुई थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चुम्बक (MAGNETS) : मछली और चुम्बक के खेल में एक शीशे के बर्तन में नकली मछलियां रखी होती हैं, जिनके सिर पर लोहे का एक छल्ला लगा होता है। एक छड़ी में रस्सी लगाकर उसके सिरे पर चुम्बक बांध देते हैं। चुम्बक के कारण मछलियों के सिर में लगा छल्ला खिंच आता है।

चुम्बक के अन्य अनेक प्रकार के खिलौने होते हैं। एक निशानेबाज़ी का खेल होता है जिसमें लोहे के रंगे हुए निशाने होते हैं और चुम्बक लगे हुए तीर फेंके जाते हैं जो निशाने पर चिपके रह जाते हैं। ऐसी गुड़ियां होती हैं जिनके हाथ में चुम्बक लगा होता है। इसी तरह और भी कई खेल होते हैं। चुम्बक से खेलना एक अच्छा तमाशा है।

लोगों को चुम्बक की जानकारी बहुत दिनों से है। कोई नहीं जानता कि इसका पता कैसे चला। कहा जाता है कि बहुत पहले एक यूनानी गड़रिये का लड़का अपनी भेड़ें चरा रहा था। उसका नाम मैग्नेस था। उस लड़के के हाथ में एक छड़ी थी जिसके सिरे पर लोहा लगा था। एक दिन उसने अपनी छड़ी एक चट्टान पर टिका दी। जब वह अपनी छड़ी को उठाने लगा तो चट्टान ने छड़ी को ज़ोर से पकड़ लिया। इससे पहले किसीको इस तरह की चट्टान का पता नहीं था। इस चट्टान के टुकड़ों का नाम उस गड़रिये के लड़के के नाम पर मैग्नेट पड़ा, जो आज भी यूरोप में प्रयोग में आता है।

चुम्बक की यह कहानी संभवतः सच नहीं है। लेकिन एक विशेष प्रकार की चट्टान होती है जो लोहे और इस्पात को अपनी ओर खींचती है। इसे 'मैग्नेटाइट' या 'लोड-स्टोन' कहते हैं। इसके टुकड़ों में प्राकृतिक चुम्बक होता है।

प्राकृतिक चुम्बक स्थायी होता है। 'स्थायी' का मतलब है 'टिकाऊ'। चुम्बक और मछली के खेल में लगे हुए घोड़े के नाल के आकार वाले चुम्बक भी स्थायी हैं। इसी तरह चित्र में दिए हुए लगभग सभी चुम्बक स्थायी हैं। ये सभी चुम्बक तैयार किए गए हैं। ज़्यादातर स्थायी चुम्बक चुम्बक के पत्थर से कहीं अधिक शक्तिशाली होते हैं। स्थायी चुम्बक इस्पात से, या इस्पात के साथ कुछ दूसरी धातुओं को मिलाकर तैयार किए जाते हैं।

चित्र में दिए हुए चुम्बकों में से एक ऐसा है जिसके दोनों सिरों पर 'उ' और 'द' अंकित हैं। चुम्बक के सिरों को इसका ध्रुव या 'पोल' कहा जाता है। हर चुम्बक में उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव होते हैं। अगर दो चुम्बकों के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव निकट आएंगे, तो दोनों एक-दूसरे को खींचेंगे। लेकिन अगर दोनों के उत्तरी या दोनों के दक्षिणी ध्रुव पास आएंगे, तो दोनों एक-दूसरे को दूर ठेलेंगे। चुम्बक के कुछ खिलौने चुम्बक की इसी क्रिया पर आधारित होते हैं।

स्थायी चुम्बक सिर्फ खिलौनों के ही काम नहीं आते हैं। कुतुबनुमा की सुई में भी स्थायी चुम्बक लगा रहता है। लोहे आदि के गोदामों में कीलें चुनने के लिए भी स्थायी चुम्बक का प्रयोग होता है। शल्य-क्रिया में लोहे के

जेबी कुतुबनुमा

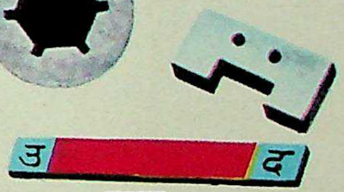

चुम्बक

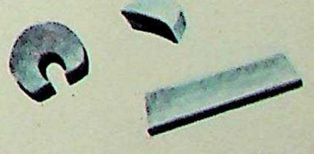

चुम्बक की छड़ें

नाल चुम्बक

चुम्बक और मछली का खेल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चुभे हुए टुकड़ों को निकालने के लिए भी स्थायी चुम्बक का प्रयोग होता है। चुम्बक की पेंसिलें और ऐशट्रे भी होती हैं। रेफ्रीजरेटर के दरवाज़ों में भी चुम्बक लगा होता है। स्थायी चुम्बक से और भी कई तरह की मशीनें तैयार होती हैं।

यहां दिए हुए चित्र में एक दूसरे प्रकार का चुम्बक दिखाया गया है। इसे विद्युत्-चुम्बक कहते हैं। विद्युत्-चुम्बक लोहे या इस्पात को तब तक अपनी ओर नहीं खींचता जब तक इसके तारों में बिजली की धारा न प्रवाहित हो रही हो। जैसे ही बिजली की धारा बन्द होगी इसकी चुम्बकीय शक्ति समाप्त हो जाएगी। चित्र में दिखाया हुआ चुम्बक-क्रेन लोहे के कबाड़ को हटाने के काम आ रहा है।

आज विद्युत्-चुम्बक स्थायी चुम्बक से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। बिजली के अनेक कामों में इनका प्रयोग

चुम्बकीय क्रेन

होता है। अगर आप चाहें तो अपने घर में ही दरवाज़े की घंटी, टेलीफोन के रिसीवर, रेडियो और टेलीविज़न में विद्युत्-चुम्बक की करामात देख सकते हैं। पावर मोटर से चलनेवाली विभिन्न मशीनों में भी हम विद्युत्-चुम्बक को पा सकते हैं। बिजली पैदा करनेवाले बड़े-बड़े जनित्रों में भी विद्युत्-चुम्बक लगा होता है। अगर विद्युत्-चुम्बक न रहे तो हमारे जीवन का ढांचा ही बदल जाएगा।

(देखें : कंपास)

जाइरोस्कोप (GYROSCOPE) : जाइरोस्कोप को घूर्णदर्शी भी कहते हैं। छोटा घूर्णदर्शी खिलौना लट्टू की तरह अपनी धुरी पर घूमता है। इस खिलौने में एक पहिया होता है जो एक चक्र के भीतर रहता है और इसके बीच से एक कील गुज़रती है जो धुरी कहलाती है। इसे चलाने के लिए धुरी में एक सुतली लपेटकर उसे ज़ोर से खींचते हैं। इससे कील, जिसका सिरा किसी ठोस सतह पर टिका दिया जाता है, चल पड़ती है और पहिया बड़ी देर तक

घूमता रहता है। धुरी की विशेषता यह है कि वह हमेशा एक ही दिशा की ओर इंगित करती रहती है। घूमते हुए यह खिलौना अपनी विभिन्न स्थितियों में बड़ा अद्भुत लगता है। भारी पहिये के तेज़ी से घूमते रहने के कारण यह गिरता नहीं।

लेकिन सभी घूर्णदर्शी खिलौने नहीं होते। कुछ कुतुबनुमा की तरह दिशा जानने के लिए जहाज़ों में काम आते हैं। कुछ का उपयोग जहाज़ों और हवाई जहाज़ों को अपने मार्ग पर सीधे चलाते रहने के लिए किया जाता है। इस यंत्र को घूर्णचालक (जाइरो पाइलट) कहते हैं। समुद्री लड़ाइयों में घूर्णदर्शियों का उपयोग टारपीडो को (एक तरह का बम जो पानी के नीचे से जहाज़ डुबाने के लिए छोड़ा जाता है) लक्ष्य-स्थान तक भेजने के लिए किया जाता है। कुछ जहाज़ों को घूर्णदर्शी द्वारा इधर-उधर झुकने से बचाया जाता है। ऐसा लोगों को समुद्री बीमारी से बचाने के लिए किया जाता है।

केवल घूर्णदर्शी खिलौने ही सुतली से चलाए जाते हैं। अन्य घूर्णदर्शी बिजली से चलते हैं।

जीव-विज्ञान (BIOLOGY) : सजीव वस्तुओं का अध्ययन जीव-विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। विज्ञान के इस क्षेत्र में काम करनेवाले वैज्ञानिक जीवशास्त्री या जीव-वैज्ञानिक कहलाते हैं। विज्ञान की यह शाखा इतनी बड़ी है कि अध्ययन की सुविधा के लिए इसे कई उपशाखाओं में विभाजित कर लिया गया है, जैसे वनस्पति-विज्ञान (Botany) में पौधों और वनस्पतियों का अध्ययन किया जाता है और प्राणि-विज्ञान (Zoology) में जीव-जंतुओं का। खुद इन उपशाखाओं को और भी छोटे-छोटे विभागों में विभक्त किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीवाणु-विज्ञान (BACTERIOLOGY) : यह वह विज्ञान है जिसमें जीवाणुओं का अध्ययन किया जाता है। यों तो जीवाणुओं का पता लगे काफी समय बीत चुका है-- सूक्ष्मदर्शी द्वारा उन्हें पहले-पहल कोई 300 वर्ष पहले देखा गया था। लेकिन उनके महत्त्व को अब से लगभग 200 वर्ष पहले ही समझा गया। तब वैज्ञानिकों ने इस बात का पता लगाना शुरू किया कि ये हमारे लिए कितने लाभदायी या हानिकारक हैं। इसके बाद तो जीवाणु-विज्ञान ने बड़ी तेज़ प्रगति की।

फ्रांसीसी वैज्ञानिक लुई पास्चर का जीवाणु-विज्ञान के विकास में बड़ा महत्त्वपूर्ण योग था। उन्हें इसके जन्मदाताओं में माना जाता है।

आरम्भ से ही जीवाणु-वैज्ञानिकों की रुचि रोग उत्पन्न करनेवाले जीवाणुओं में अधिक रही है। आधुनिक जीवाणु-वैज्ञानिक अपने विशेष अध्ययन के लिए मनचाहे प्रकार के जीवाणु उत्पन्न करके उनका वैज्ञानिक अध्ययन करते हैं।

(देखें : पास्चर; लेवेनहोक)

जीवाश्म-विज्ञान (PALAEONTOLOGY) : इस विज्ञान में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि प्राचीन काल में पेड़-पौधे तथा जीव-जन्तु कैसे थे और वे कैसे जीते थे। जीवाश्म का अर्थ होता है, फॉसिल या प्राचीन जीवों के अवशेष। जीवाश्म प्रायः चट्टानों में पाए जाते हैं और इनसे प्राचीन काल के जीवधारियों की कुछ झांकी मिलती है। वैज्ञानिक प्राचीन काल के जीवों के बारे में इन जीवाश्मों का ही अध्ययन करके पता लगाते हैं।

जेनर, एडवर्ड (EDWARD JENNER 1749-1823) : शताब्दियों तक चेचक सबसे भयानक बीमारियों में से एक रही। हर साल हज़ारों आदमी इससे मरते थे। अगर चेचक का मरीज़ इससे न भी मरे तो भी इसके घावों से उसके चेहरे पर स्थायी दाग पड़ जाते हैं। दो सौ साल से कुछ पहले तक हर दस मौतों में से एक चेचक द्वारा होती थी। चौथाई लोगों के चेहरों पर चेचक के निशान रहते थे। आज दुनिया के अधिकांश देशों में चेचक से बहुत कम लोग मरते हैं। चेचक के दाग भी बहुत कम लोगों के चेहरों पर नज़र आते हैं। एडवर्ड जेनर नाम के एक अंग्रेज़ डाक्टर ने चेचक को समाप्त करने का उपाय खोज निकाला।

बहुत पहले से चेचक को समाप्त करने का एक ढंग लोगों को मालूम था। इसे चेचक का टीका कहते थे। चेचक के टीके में ऐसे मरीज़ के शरीर से जिसे हलकी-सी चेचक हुई हो, थोड़ा-सा मवाद निकालकर स्वस्थ व्यक्ति के शरीर को कहीं खरोंचकर उसपर लगा दिया जाता था। इस टीके के कुछ ही दिन बाद उस व्यक्ति को मामूली-सी चेचक होती थी। एक बार चेचक हो जाने के बाद, वह आदमी हमेशा के लिए इस बीमारी से बच जाता था।

जेनर के समय तक यह टीका (Inoculation) काफी प्रचलित था। कुछ दृष्टियों से यह बहुत अच्छा नहीं था। लोग अब चेचक से उतना नहीं डरते थे जितना पहले डरा करते थे। वे इस बात की रोकथाम करने की चिन्ता भी नहीं करते थे कि यह बीमारी अधिक न फैलने पाए।

जेनर को पता चला कि गायों में भी चेचक से मिलता-जुलता एक रोग होता है। इसे गोमसूरी (Cowpox) कहते हैं। लोगों को अक्सर गायों के सम्पर्क से चेचक हो जाया करती थी, लेकिन इससे वे बहुत कम बीमार पड़ते थे। जेनर इस निश्चय पर पहुंचे कि अगर लोगों को गोमसूरी पैदा कर दी जाए तो वे चेचक से छुटकारा पा सकते हैं। परन्तु इसको व्यवहार में लाने के पहले जेनर ने इस समस्या का अच्छी तरह अध्ययन किया।

14 मई, 1796 को जेनर ने एक स्वस्थ बच्चे को गोमसूरी से पीड़ित महिला के घाव से मवाद लेकर टीका दिया। वह बच्चा बहुत हलका ही बीमार पड़ा। दो माह बाद जेनर ने उस लड़के को एक चेचक के रोगी के घाव से मवाद लेकर टीका लगाया। इस बार लड़का बिलकुल बीमार नहीं पड़ा। यह खोज चिकित्सा के इतिहास में उन्नीसवीं सदी की एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

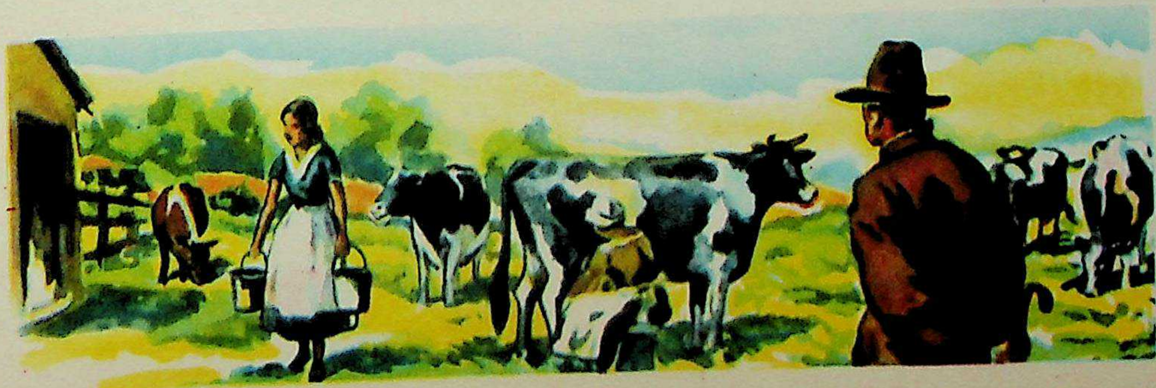

चेचक को रोकने की तरकीब जेनर को गोमसूरी से सूझी थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्योतिर्विज्ञान में सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्रों, ग्रहों, आदि का अध्ययन किया जाता है।

जेनर के टीके को वैक्सिनेशन (Vaccination) कहा जाता है। आजकल इस टीके में जिस दवा का प्रयोग होता है उसे गायों द्वारा प्राप्त किया जाता है। इस बात की पूरी सावधानी रखी जाती है कि टीके की दवा शुद्ध रहे। जेनर के बाद लोगों ने टीके की कुछ दूसरी ऐसी दवाएं भी खोज निकाली हैं जो दूसरी बीमारियों से हमें बचाती हैं।

ज्योतिर्विज्ञान (ASTRONOMY) : ज्योतिर्विज्ञान को लोग अक्सर फलित ज्योतिष (Astrology) के साथ ही जोड़ देते हैं, पर वास्तव में दोनों में ज़रा भी संबंध नहीं है।

ज्योतिर्विज्ञान में सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्रों, ग्रहों तथा अन्य आकाशीय पिंडों का अध्ययन किया जाता है। यह एक बहुत ही पुराना विज्ञान है—सदियों से मनुष्य सितारों का अध्ययन करता आ रहा है। प्राचीन काल में ज्योतिर्विज्ञान और फलित ज्योतिष आपस में काफी घुल-मिल गए थे—कुछ तो ज्ञान के अभाव के कारण और कुछ अन्य कारणों से। ज्ञान के अभाव के कारण इसलिए कि तब विज्ञान की अधिक जानकारी नहीं थी और यह मानना स्वाभाविक था कि सूर्य तथा अन्य नक्षत्र मनुष्य पर और पृथ्वी पर प्रभाव डालते होंगे। फिर ग्रहण, तिथि-निर्णय आदि का दैनिक जीवन में भी बड़ा महत्त्व था। इसके लिए नक्षत्रों का अध्ययन ज़रूरी था। जो लोग नक्षत्रों का वैज्ञानिक अध्ययन करते थे, वे जीविका के लिए भविष्यवाणियां भी किया करते थे। इस तरह दोनों आपस में खूब घुल-मिल गए। अब ऐसा नहीं है। ज्योतिर्विज्ञान का अब एक शुद्ध विज्ञान के रूप में अध्ययन किया जाता है।

ज्योतिर्विज्ञान का सारा ज्ञान मनुष्य ने थोड़ा-थोड़ा करके कितनी ही सदियों में प्राप्त किया है। इसमें सभी देशों और कालों के लोगों ने योग दिया है। हां, कुछ लोगों की खोजें इतनी महत्त्वपूर्ण थीं कि उनके नाम आज तक चले आते हैं।

विदेशी ज्योतिर्विदों में टोलेमी (100-161 ई०) का नाम बड़ा प्रसिद्ध है। वह यूनान का रहनेवाला था। उसने 48 तारामंडलों (Constellations) की सूची बनाई थी और कितनी ही और ज्योतिर्वैज्ञानिक खोजें भी की थीं। पर उसे यह पता नहीं था कि पृथ्वी गोल है और वह सूर्य की परिक्रमा करती है। और मज़े की बात यह है कि कोई हज़ार वर्ष तक टोलेमी की बात पर पूरा यूरोप आंख मींचकर विश्वास करता रहा। उसकी बात का विरोध करना अपनी मौत को बुलाना था।

पोलिश ज्योतिर्विद कोपर्निकस (1473-1543) ने टोलेमी की बात को गलत सिद्ध किया और बताया कि पृथ्वी गोल है और सूर्य की परिक्रमा करती है। उसने यह भी कहा कि अन्य ग्रह भी निश्चित पथों पर सूर्य के चारों ओर

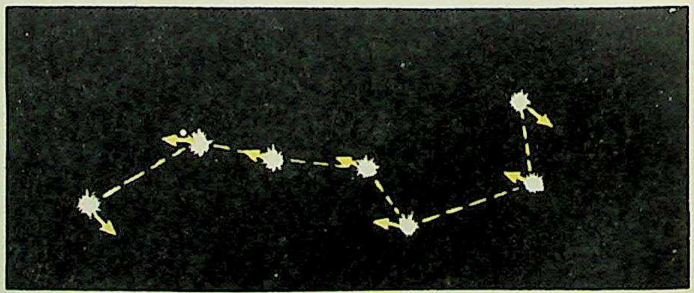

ज्योतिर्विदों का खयाल है कि सप्तर्षि-मंडल के तारे तीर की दिशा में सरक रहे हैं, और 1,00,000 ई० तक सप्तर्षि-मंडल का रूप नीचे के चित्र जैसा हो जाएगा।

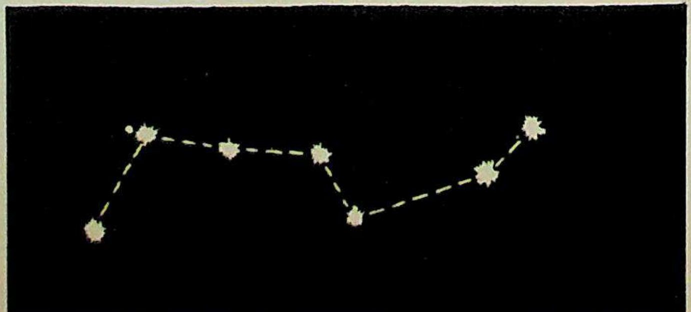

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

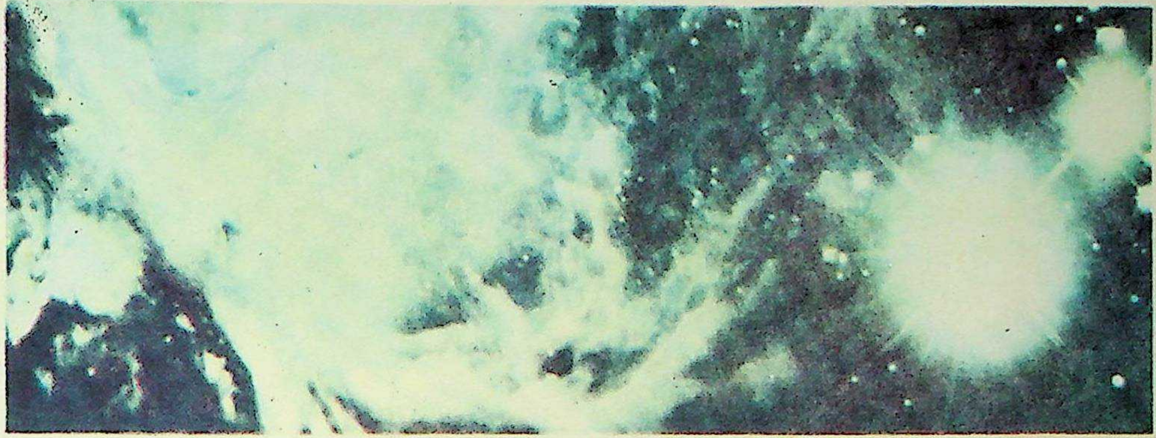

ज्योतिर्विज्ञान में नीहारिकाओं का भी अध्ययन किया जाता है, जो तारे की धूल या गैस की बनी होती हैं। दूरबीन से देखा गया एक गैसीय नीहारिका का दृश्य।

घूमते हैं। जर्मन ज्योतिर्विद कैपलर (1571-1630) ने ग्रहों की कक्षा (परिक्रमा-पथ) का अध्ययन किया और सिद्ध किया कि वे अंडाकार कक्षाओं पर घूमते हैं।

प्रसिद्ध इटालियन वैज्ञानिक गैलिलियो (1564-1642) ने दूरबीन की सहायता से आकाश का अध्ययन किया। उसने सूर्य-कलंकों, चन्द्रमा के पहाड़ों और बृहस्पति के चार चन्द्रमाओं का पता लगाया। हालैंडवासी ज्योतिर्विद क्रिश्चियन हॉयकेंस (1629-1695) ने शनि के वलयों का पता लगाया।

अंग्रेज़ वैज्ञानिक सर आइज़क न्यूटन (1642-1727) ने उन नियमों की खोज की जिनके अन्तर्गत सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, ग्रह तथा नक्षत्र अपनी-अपनी स्थिति में रहते हैं। गुरुत्वाकर्षण और गति के नियमों की खोज न्यूटन ने ही की।

एडमंड हेली (1656-1742) ने पुच्छल तारों का गहन अध्ययन किया। एक पुच्छल तारे का नाम इन्हींपर रखा गया है। हर्शेल, फॉनहोफ़ेर, एडिंग्टन, ये कुछ और प्रसिद्ध ज्योतिर्विद हुए हैं। इन सबने अनेक ज्योतिर्वैज्ञानिक तथ्यों का उद्घाटन किया है।

प्राचीन भारत में ज्योतिर्विज्ञान बड़ा उन्नत था। उज्जयिनी (अब उज्जैन) की वेधशाला का दूर-दूर तक नाम और सम्मान था। प्राचीन भारतीय ज्योतिर्विदों में आर्यभट्ट (जन्म 476 ई०) भास्कर, ब्रह्मगुप्त (जन्म 628 ई०) तथा भास्कर द्वितीय (1114 ई०) के नाम बहुत सम्मानित हैं। भारतीय ज्योतिर्विदों ने एक बड़ा शुद्ध पंचांग निकाला था। पृथ्वी के गोल होने और सूर्य की परिक्रमा करने की बात भी उन्हें ज्ञात थी। गुरुत्वाकर्षण के नियम से भी वे अपरिचित नहीं थे। औरंगज़ेब के शासन-काल में जयपुर के राजा सवाई जयसिंह ने कई वेधशालाएं बनवाईं—जयपुर और दिल्ली के जंतर-मंतर असल में उनकी वेधशालाएं ही थीं। भारतीय ज्योतिर्विदों की गणनाएं इतनी शुद्ध थीं कि उनके द्वारा निर्धारित तिथियों और ग्रहण आदि के समयों में आज भी विशेष अंतर नहीं आया है। (देखें : राशिचक्र)

सप्तर्षि-मंडल से ध्रुवतारे का पता चल जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टोलेमी (PTOLEMY) : महान यूनानी गणितज्ञ टोलेमी की जन्मतिथि या मृत्युतिथि के बारे में ठीक-ठीक किसी-को भी पता नहीं। लेकिन यह ज्ञात है कि उनकी मृत्यु सन् 160 तक नहीं हुई थी। टोलेमी बहुत बड़े ज्योतिर्विद और भूगोल और इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे। वे मिस्र के सिकन्दरिया नगर में रहते थे। भूगोल-संबंधी उनकी पुस्तक नक्शों की शायद सबसे पहली पुस्तक है। दुनिया का जो नक्शा टोलेमी ने बनाया था वह बाद में लगभग एक हज़ार साल तक नहीं बदला।

टोलेमी का अधिकांश ज्ञान पूर्ववर्ती विचारकों पर आधारित था। विशेष रूप से यूनानी विचारकों के ग्रंथों का उन्होंने गहरा अध्ययन किया था। टोलेमी ने उनके विचारों का संपादन भी किया और कई पाठ्य-पुस्तकें तैयार कीं।

टोलेमी ने कहा था कि सूर्य और ग्रह-नक्षत्र सहित सारा ब्रह्माण्ड पृथ्वी की परिक्रमा करता है। इस विचार का सैकड़ों वर्ष बाद सन् 1543 में पोलैण्ड के ज्योतिर्विद कोपर्निकस ने खण्डन किया।

डार्विन, चार्ल्स (CHARLES DARWIN 1809–1882) : प्राकृतिक इतिहास के महान ज्ञाता चार्ल्स डार्विन 1831 में संसार की पंच-वर्षीय यात्रा पर इंग्लैंड से 'बीगल' नामक जहाज़ पर रवाना हुए। विज्ञान के इतिहास में यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण यात्रा थी। इस यात्रा के कारण डार्विन संसार की एक सबसे अधिक प्रसिद्ध पुस्तक की रचना कर सके। पुस्तक का नाम है 'द ओरिजिन ऑव स्पीशीज़' (जातियों की उत्पत्ति)। इसमें अपनी खोज के आधार पर डार्विन ने बताया है कि किस प्रकार आज के सभी पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं का विकास अत्यन्त सरल बनावट के उन पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं से हुआ है जो इस पृथ्वी के सबसे पहले निवासी थे। इस पुस्तक ने बड़े गम्भीर विचार-विमर्श को जन्म दिया।

शुरू में डार्विन का इरादा वैज्ञानिक बनने का नहीं था। उन्होंने पहले तो डाक्टर बनने के इरादे से और फिर पादरी बनने के इरादे से शिक्षा ली। लेकिन इस बीच वे पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं में बराबर रुचि लेते रहे। उनके एक मित्र ने, जो प्रकृति में उनकी गहरी रुचि के बारे में जानता था, उन्हें 'बीगल' जहाज़ पर यात्रा के लिए आमंत्रित किया।

डार्विन ने अपनी इस यात्रा में आस्ट्रेलिया, तस्मानिया, न्यूज़ीलैंड तथा अन्य कई देशों की यात्रा की। वहां उन्होंने अनेक विचित्र प्रकार के पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं का अध्ययन किया। इस प्रकार उन्होंने अपनी पुस्तक के लिए मूल्यवान सामग्री एकत्र की।

डार्विन के विचारों को संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है : संसार में जितने पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं का रह सकना संभव है, उससे कहीं अधिक संख्या में वे उत्पन्न होते हैं। कोई भी दो पौधे या दो जीव, चाहे वे एक ही प्रकार के क्यों न हों, कभी भी ठीक एक जैसे नहीं होते। कोई

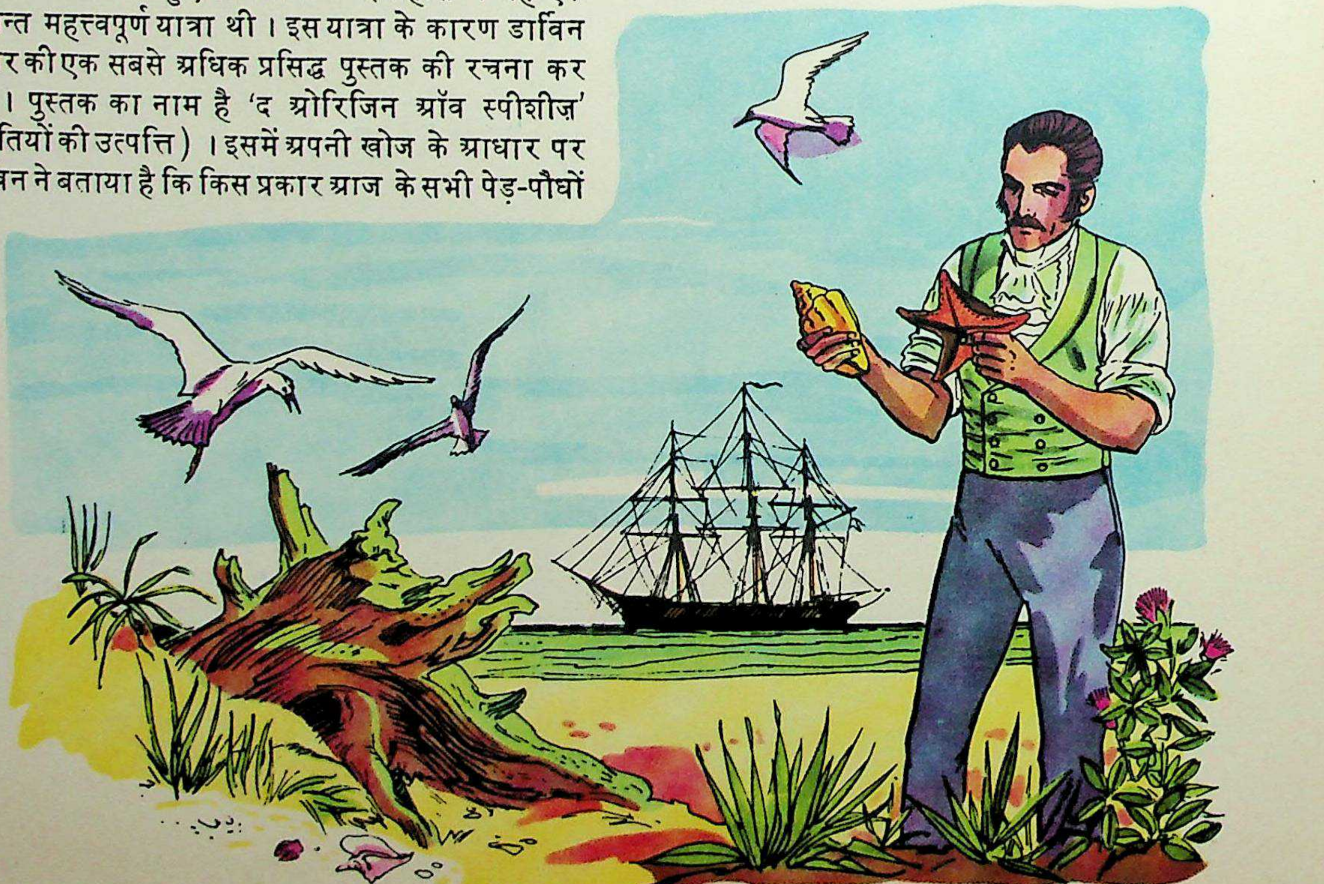

डार्विन को अपनी यात्रा में विभिन्न देशों के पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं के अध्ययन का अवसर मिला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी नन्हा पौधा या जीव अपनी जाति के अन्य पौधों या जीवों से, उनके बीच रहते हुए भी, काफी भिन्न हो सकता है ताकि वह उन परिस्थितियों में दूसरों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से रह सके। जीवित बने रहने के लिए चलनेवाले संघर्ष में वह पौधा या जीव दूसरों की अपेक्षा अधिक समय तक जीवित रह सकता है। लेकिन उसके बच्चों में अन्तर हो सकता है। उनमें से कुछ में इस दृष्टि से और अधिक परिवर्तन हो सकता है कि वे जिस जगह रहते हों वहां और अधिक अच्छी तरह से रह सकें। अंत में, जब कई सदियां बीत जाती हैं, तब उस प्रकार का पौधा या जीव अपने पुरखों से इतना अधिक भिन्न हो जाता है कि वह एक नये प्रकार, या नई जाति का बन जाता है।

इंग्लैंड लौटने पर डार्विन ने एमा वेजउड से विवाह किया। डार्विन दम्पति के पास काफी पैसा था, इसलिए उन्हें अपनी जीविका के लिए कमाने की ज़रूरत नहीं थी। वे अपना सारा समय अध्ययन करने और अपने विचारों को लिखने में बिता सकते थे।

यह विचार कि आज के सभी पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं का विकास बहुत लम्बे समय पहले के साधारण पौधों और जीवों से हुआ है, 'विकासवाद का सिद्धान्त' कहलाता है। इस सिद्धान्त में वैज्ञानिकों का विश्वास पक्का करने के लिए डार्विन की इस महान पुस्तक ने बहुत बड़ा काम किया।

डाल्टन, जॉन (JOHN DALTON 1776-1844) : यह विचार बहुत प्राचीन है कि किसी पदार्थ का सबसे छोटा भाग एक ऐसा कण या परमाणु होता है जिसे और अधिक भागों में नहीं बांटा जा सकता। सबसे पहले यूनानियों ने इस विचार को जन्म दिया। लेकिन रसायनशास्त्र का मूल आधार यह विचार बना कि परमाणु विभिन्न प्रकार के होते हैं। इस विचार को जन्म दिया जॉन डाल्टन नामक एक स्कूल-मास्टर ने। वे मैंचेस्टर के एक स्कूल में पढ़ाते थे और अपने खाली समय में प्रयोग किया करते थे। उन्होंने खोज की कि जब दो मूलतत्त्व भिन्न यौगिकों का निर्माण करने के लिए आपस में मिलते हैं तो ऐसा वे निश्चित अनुपातों में ही करते हैं। डाल्टन ने परमाणविक भारों की प्रथम तालिका तैयार की। इसी तालिका पर आधुनिक रसायनशास्त्र आधारित है। अनेक आधुनिक औद्योगिक प्रक्रियाएं परमाणु के सिद्धान्त पर निर्भर करती हैं।

डाल्टन धीरे-धीरे, सावधानी से प्रयोग करते हुए ही अपने निष्कर्षों पर पहुंचे थे, अचानक किसी सुयोग से नहीं। इसके अलावा, उन्होंने अन्य वैज्ञानिकों द्वारा स्वीकृत किसी भी तथ्य को चुपचाप स्वीकार नहीं किया, बल्कि स्वयं प्रयोग द्वारा पहले उसे सिद्ध करने का प्रयास किया ताकि किसी प्रकार की कोई गलती न रह जाए।

इसके पहले डाल्टन ने वर्णान्धता के संबंध में एक पुस्तक लिखी जो अपने विषय की सबसे पहली पुस्तक है। वर्णान्धता उस रोग को कहते हैं जिसमें व्यक्ति रंगों को देख नहीं पाता है। डाल्टन स्वयं वर्णान्ध थे।

डेवी, सर हम्फ्रे (SIR HUMPHRY DAVY 1778-1829) : बचपन में हम्फ्रे डेवी में कोई ऐसी विशेषता नहीं थी जिसे देखकर कहा जा सकता कि यह लड़का कभी इंग्लैंड के प्रमुख वैज्ञानिकों में माना जाएगा। बचपन में डेवी को

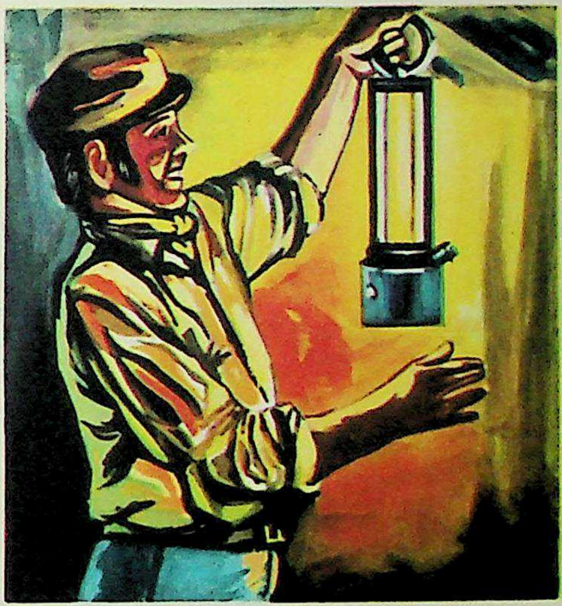

डेवी के लैम्प से खान-दुर्घटनाओं में कमी हो गई।

कविताएं पढ़ने का शौक था। बाद में वे एक डाक्टर के यहां रहकर काम सीखने लगे। प्रयोगशाला में काम करते समय ही वैज्ञानिक प्रयोगों में उनकी रुचि उत्पन्न हुई। कुछ समय बाद उन्होंने नाइट्रस ऑक्साइड, या हंसानेवाली गैस के संबंध में शोध का काम किया। अपने इस काम के कारण डेवी को वैज्ञानिक क्षेत्रों में बड़ा सम्मान मिला और वे प्रसिद्ध हो गए। बाद में दांतों के डाक्टरों ने इस गैस का प्रयोग रोगियों पर करना शुरू किया, ताकि दांत उखाड़ते समय उन्हें दर्द का अनुभव न हो। 24 वर्ष की छोटी आयु में ही डेवी लंदन की रॉयल इंस्टीट्यूट में रसायनशास्त्र के प्रोफेसर नियुक्त हुए। उनके एक सहायक माइकेल फैराडे आगे चलकर अपने गुरु के समान ही विज्ञान के क्षेत्र में प्रसिद्ध हुए। डेवी ने अपने प्रयोग जारी रखे और धातुओं की प्रकृति तथा विद्युत् के संबंध में भी कई महत्त्वपूर्ण खोजें कीं।

सर हम्फ्रे डेवी सुरक्षा-लैम्प के आविष्कारक के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन दिनों कोयला खदानों के मजदूर प्रकाश के लिए मशालों का प्रयोग करते थे। मशाल की नंगी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आग से खदानों में कोयला-गैस जल उठती थी और विस्फोट हो जाता था। इस प्रकार की दुर्घटना में बहुत-से मज़दूर मर जाते थे। डेवी ने पता लगाया कि अगर आग की लौ को तार की महीन जाली से ढक दिया जाए तो आग की गर्मी बाहर नहीं निकलेगी और गैस में विस्फोट नहीं होगा। उनकी इस खोज से बहुत-से खनिकों की जान बच गई।

ताप (HEAT) : प्राचीन काल में लोग ताप या गर्मी को भी हवा की तरह पदार्थ समझते थे। वे उसे कैलोरिक कहते थे। जब कोई चीज़ गर्म हो जाती तो वे कहते कि इसमें कैलोरिक पहुंच गई है। जब कोई चीज़ गर्म होकर ठंडी हो जाती तो वे कहते, इसमें से कैलोरिक निकल गई है। उन्हें इस बात की कोई परवाह नहीं थी कि वे कैलोरिक देख नहीं सकते। उनका कहना था कि हवा भी तो नहीं दिखलाई पड़ती।

अब हम जान गए हैं कि ताप कोई पदार्थ नहीं है। वह कोई जगह नहीं घेरता। उसका कोई भार नहीं होता। वह तो एक प्रकार की ऊर्जा या शक्ति है। ताप एक तरह की ऊर्जा है, यह कहने का मतलब है कि हम उससे कुछ काम ले सकते हैं। जब हम किसी मोटरकार को दौड़ते देखते हैं, तो जान लेते हैं कि वह जलते हुए पेट्रोल के ताप से चल रही है।

ताप उत्पन्न करने के कई साधन हैं। अग्नि, घर्षण, और बिजली, ऐसे ही तीन साधन हैं। ताप पैदा करने के कितने ही साधन क्यों न हों, अगर सूर्य न हो तो पृथ्वी को इतना गर्म नहीं रखा जा सकता कि उसपर मानव रह सके। सूर्य पर निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं जिनकी वजह से वह गर्म बना रहता है। वह कितना गर्म है, इसकी

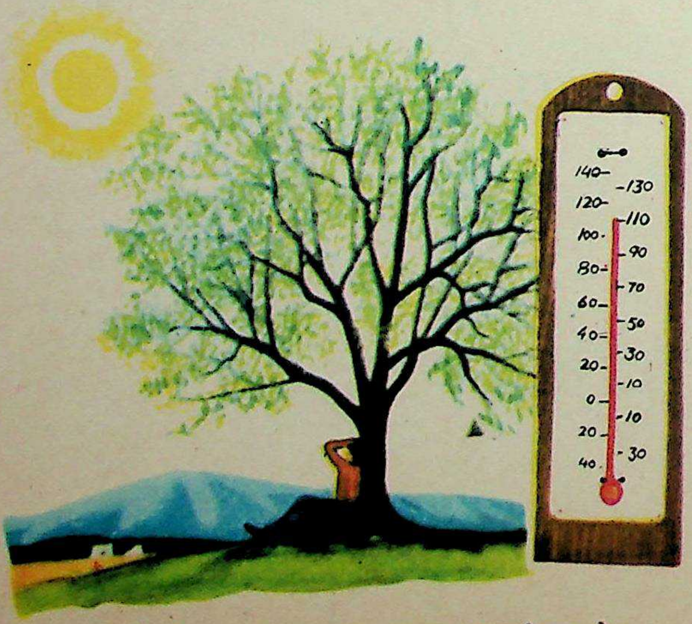

सूर्य की सतह का तापमान लगभग 11,000° फा० है।

चार चमकदार तारों का तापमान

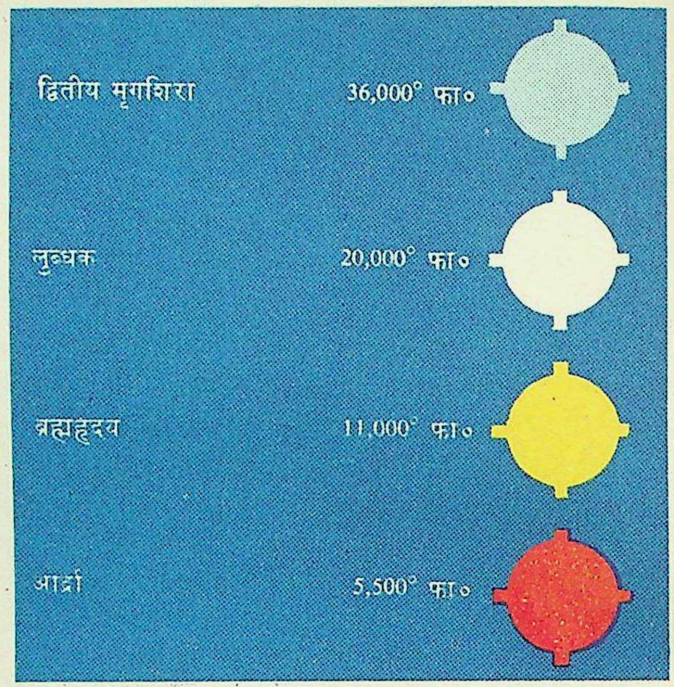

कल्पना करना भी शायद हमारे लिए कठिन है। करोड़ों वर्षों से सूर्य पृथ्वी को ताप देता रहा है और अभी करोड़ों वर्ष ऐसा ही करता रहेगा।

ताप कुछ पदार्थों में से होकर अच्छी तरह एक से दूसरे स्थान पर जा सकता है, और कुछ में से नहीं। धातुओं में ताप का प्रवाह सरलता से हो जाता है। हम धातुओं को ताप का अच्छा संवाहक (Good Conductor) मानते हैं। ऊन, ऐस्बेस्टस और स्थिर हवा ताप के अच्छे वाहक नहीं हैं, इसलिए उन्हें संवाहक के रूप में उपयोगी नहीं समझा जाता। जब ताप को रोकना होता है, तो ऐसी ही चीज़ों का उपयोग किया जाता है।

ताप बिना किसी पदार्थ को माध्यम बनाए हुए भी प्रवाहित होता है। सूर्य का ताप किरणों द्वारा अंतरिक्ष की यात्रा कर हम तक पहुंचता है।

गर्म किए जाने पर अधिकांश चीज़ें फैल जाती हैं, या बड़ी हो जाती हैं। जब इंजीनियर कंक्रीट की सड़कें या लोहे के पुल बनाते हैं तो वे उनके गर्म होकर फैलने के लिए जगह अवश्य छोड़ देते हैं।

ताप से पदार्थों में और भी बहुत-से परिवर्तन हो जाते हैं। कुछ पदार्थ ठोस होते हैं, लेकिन गर्म होने पर वे पिघल जाते हैं। तरल पदार्थ गैस बनकर उड़ जाते हैं। गर्म किए जाने से खाद्य-पदार्थों में ऐसे परिवर्तन हो जाते हैं कि वे खाने में स्वादिष्ट लगने लगते हैं।

ताप का अभाव शीतलता है। हम ताप निकालकर किसी चीज़ को ठंडा करते हैं। रेफ्रीजरेटर में चीज़ों को रखने से सिर्फ उनका ताप निकल जाता है, न कि हम उनमें ठंड पहुंचाकर उन्हें ठंडी बनाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ताप कैसे उत्पन्न हो सकता है, वह कैसे एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता है और उससे कैसे परिवर्तन होते हैं, यह सब जानना हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है।

तारीख (DATES) : प्रत्येक वर्ष की एक संख्या होती है। किसी घटना की तारीख या तिथि बताते समय हम वर्ष की संख्या बताते हैं। उदाहरण के लिए हम कहते हैं कि भारत सन् 1947 में स्वतन्त्र हुआ, या कोलम्बस ने सन् 1492 में अमरीका की खोज की।

ऐसा माना जाता है कि ईस्वी सन् की संख्या उस वर्ष से आरंभ हुई जिसमें ईसा मसीह का जन्म हुआ था। इससे पूर्व या पहले की घटनाओं की तारीख देते समय हम सन् 1 से पूर्व की ओर गिनते हैं। इसके लिए हम वर्ष की संख्या के साथ 'ई० पू०' लिख देते हैं, अर्थात् ईसा से पूर्व।

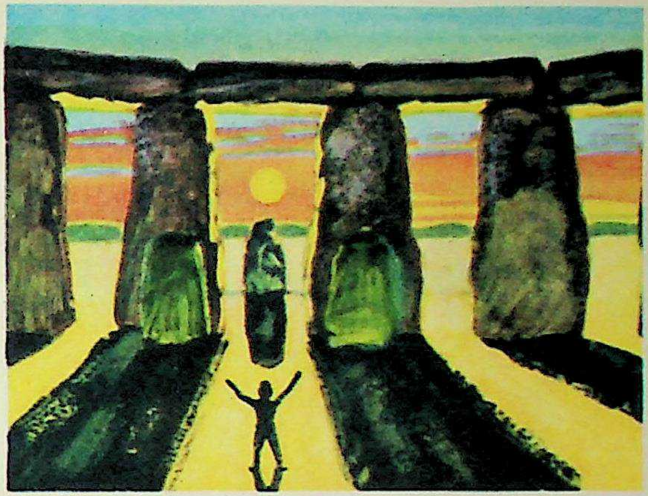

कुछ देशों के प्राचीन निवासी परछाईं से तिथियां गिनते थे।

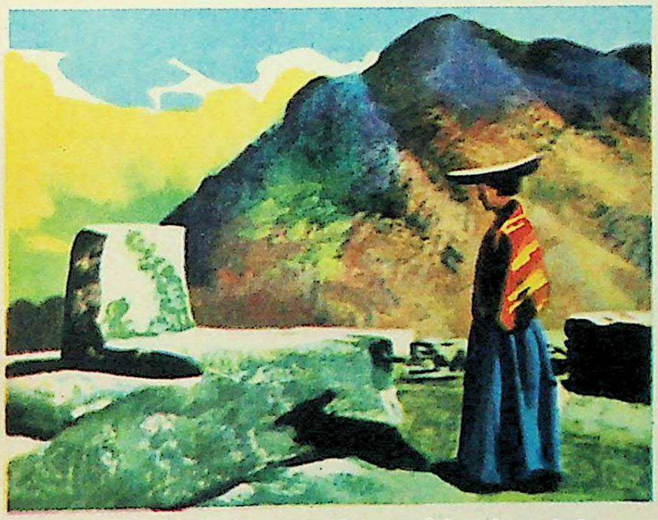

इंका जाति के लोग स्तंभ की परछाईं से वर्ष मापते थे।

अंग्रेज़ी में इसके लिए B.C. लिखा जाता है। इसी प्रकार इससे बाद के वर्ष के लिए केवल 'सन्' लिखा जाता है। अंग्रेज़ी में इसके लिए A.D. लिखा जाता है, जो लातिन भाषा के 'अन्नो दोमिनी' का संक्षिप्त रूप है, जिसका अर्थ है 'हमारे प्रभु के वर्ष में'। इसे ईस्वी सन् या ईसाई संवत् कहते हैं।

परन्तु ईसा का जन्म सन् 1 में नहीं हुआ था। शुरू में इसमें एक गलती हो गई। ईसा वास्तव में इससे चार वर्ष पूर्व उत्पन्न हुए थे। लेकिन जब गलती का पता चला, तब तक काफी देर हो चुकी थी। अब इसे ठीक करना संभव नहीं है, क्योंकि यही सन् प्रचलित हो गया है।

हमारे देश में ईस्वी सन् के साथ ही राष्ट्रीय संवत् भी प्रचलित है। राष्ट्रीय संवत् ईस्वी सन् के 78 वर्ष बाद से गिना जाता है। उदाहरणार्थ, सन् 1963 के साथ संवत् 1885 लिखा जाता है। हमारे देश में अन्य कई संवत् भी प्रचलित हैं, जैसे राजा विक्रमादित्य के नाम पर 'विक्रम संवत्,' राजा शालिवाहन के नाम पर 'शक संवत्' आदि। भारत सरकार ने शक संवत् को ही राष्ट्रीय संवत् के रूप में 22 मार्च, 1957, या 1 चैत्र, शक संवत् 1879, से स्वीकार किया है।

इस्लाम धर्म हिजरी सन् को मानता है जो सन् 622 से आरंभ होता है। हिजरी सन् हज़रत मुहम्मद के मक्का से मदीना जाने की याद में आरंभ हुआ माना जाता है।

प्राचीन काल में तिथि निर्धारित करने की अन्य कई विधियां प्रचलित थीं। प्राचीन रोमन लोग रोम की स्थापना के समय से अपने संवत् का आरंभ मानते थे। यूनानी लोग प्रथम ओलिम्पिक खेलों की तिथि से अपने संवत् का आरंभ मानते थे।

इससे भी पहले के ज़माने में वर्षों को संख्या के आधार पर सूचित करने की बजाय उनका कोई नाम रख दिया जाता था। जैसे, बाइबिल में कुछ तिथियां इस प्रकार सूचित

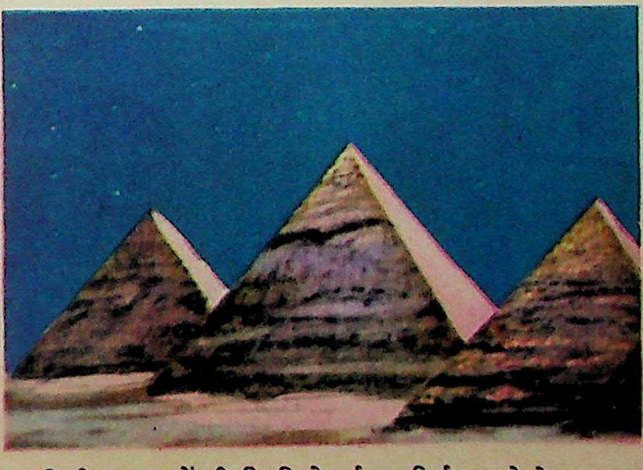

मिस्री कुछ तारों की स्थिति से वर्ष का निर्णय करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की गई हैं —'फारस के राजा साइरस के राज के प्रथम वर्ष में' या 'इजराइल पर सालोमन के राज के चौथे वर्ष में।' (देखें : कैलेंडर ग्रौर पंचांग)

थर्मामीटर (THERMOMETERS) : झींगुर की झनकार ठंडे मौसम में धीमी ग्रौर गर्म मौसम में तेज़ हो जाती है। लेकिन मौसम गर्म है या ठंडा—इसे जानने के लिए हम झींगुर नहीं पालते, बल्कि इसके लिए हम थर्मामीटर या तापमापी का प्रयोग करते हैं।

प्रचलित थर्मामीटरों में से कई ऐलकोहल थर्मामीटर होते हैं। उनके ग्रन्दर के ऐलकोहल में लाल या नीला रंग घोल दिया जाता है ताकि वह ग्रासानी से दिखाई दे सके। ऐलकोहल थर्मामीटर में शीशे की एक नली होती है जिसके एक सिरे पर घुंडी बनी होती है। दूसरा सिरा बंद कर दिया जाता है। घुंडी में रंगीन ऐलकोहल रहता है। कुछ ऐलकोहल नली में भी रहता है।

ऐलकोहल थर्मामीटर इस प्रकार काम करता है : गर्मी पहुंचने पर ऐलकोहल बढ़ जाता है, यानी वह फैल जाता है। सर्दी पहुंचने पर ऐलकोहल घट जाता है या सिकुड़ जाता है। जब थर्मामीटर का ऐलकोहल फैलता है तो वह नली में ऊपर की तरफ चलता है, क्योंकि वह ग्रौर किसी दिशा में बढ़ ही नहीं सकता। जब ऐलकोहल सिकुड़ता है तो नली में नीचे की तरफ जाता है। इस प्रकार के थर्मामीटर में ऐलकोहल के स्तर को देखकर पता लगाया जा सकता है कि तापमान कितना है।

ऐलकोहल थर्मामीटर बहुत निम्न तापमान मापने में प्रयुक्त होते हैं। जब तक ऐलकोहल बहुत ठंडा नहीं हो जाता तब तक वह जमता नहीं। मौसम-वैज्ञानिक पूरे दिन के निम्नतम तापमान का पता लगाने के लिए ऐलकोहल थर्मामीटर का प्रयोग करते हैं। लेकिन उच्च तापमान मापने के लिए इनसे काम नहीं लिया जा सकता। कारण, ऐलकोहल मामूली ताप से ही उबल जाता है।

कुछ थर्मामीटरों में ऐलकोहल की जगह पारे का प्रयोग किया जाता है। पारा भी ऐलकोहल की भांति गर्मी पाकर फैलता ग्रौर ठंड पाकर सिकुड़ता है।

पारा तभी उबलता है जब उसे बहुत ग्रधिक ताप पहुंचाया जाए। लेकिन वह जम बड़ी ग्रासानी से जाता है। इसलिए पारे के थर्मामीटर का प्रयोग उच्च तापमान को मापने में तो किया जा सकता है, निम्न तापमान जानने के लिए नहीं।

शरीर का तापमान लेने के लिए एक विशेष प्रकार का पारे का थर्मामीटर होता है। इसमें ऐसी व्यवस्था रहती है कि जब ताप पाकर पारा नली में ऊपर की तरफ बढ़ता है तो वहीं रुक जाता है। जब कोई थर्मामीटर को झटका देता है तब पारा घुंडी में उतर जाता है। चूंकि बिना झटका दिए पारा उतरता नहीं, बल्कि ग्रपने ही स्थान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

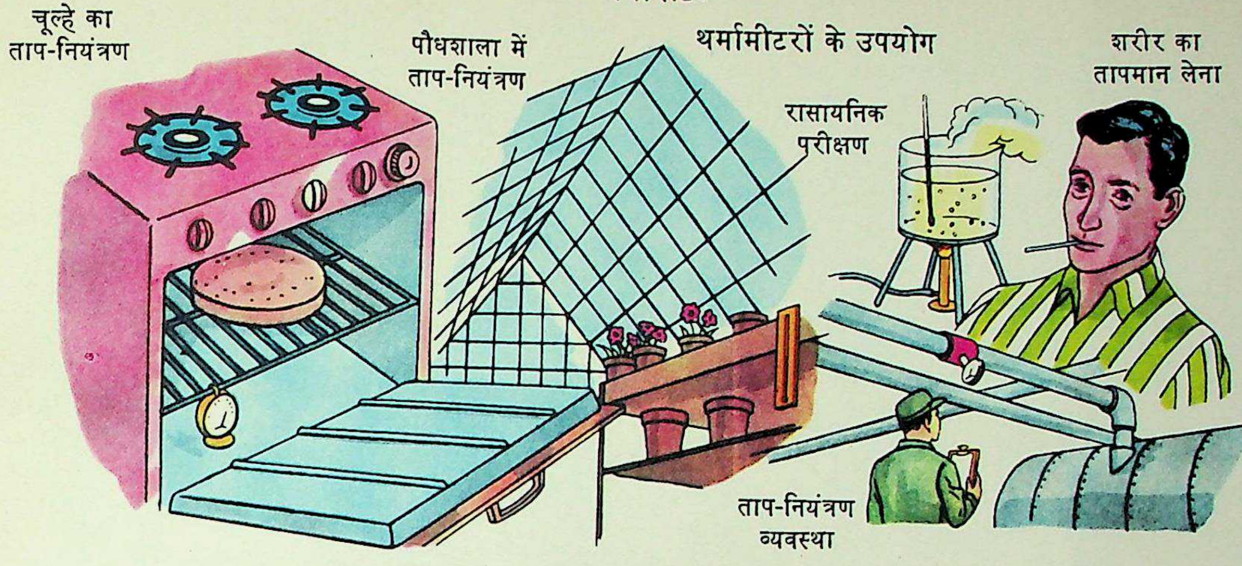

पर बना रहता है, इसलिए डाक्टर मरीज़ के मुंह से थर्मामीटर निकालने के बाद उसे पढ़कर मरीज़ के शरीर का तापमान जान सकता है। मौसम-वैज्ञानिक दिन-भर के उच्चतम तापमान का पता लगाने के लिए जिस थर्मामीटर का प्रयोग करते हैं वह भी बहुत कुछ इसी प्रकार का होता है।

कुछ थर्मामीटर धातुओं के तारों से बने होते हैं। जब तापमान बढ़ता है तो तार की कुंडली कस जाती है, और तापमान के घटने पर कुंडली ढीली पड़ जाती है। कुंडली के एक सिरे पर सुई लगी होती है जो एक डायल पर घूमती है। इस डायल को पढ़कर तापमान ज्ञात किया जा सकता है।

कुछ धातु-थर्मामीटर तापमान का रिकार्ड रखते हैं। इनमें सुई के एक सिरे पर एक पेंसिल लगी रहती है। यह पेंसिल निरंतर चलते रहनेवाले एक विशेष कागज़ पर निशान बनाती रहती है।

तापमान डिग्रियों में मापा जाता है। लेकिन सभी थर्मामीटरों की डिग्रियां एक-सी नहीं होतीं। थर्मामीटरों में या तो फारेनहाइट पैमाना (यह नाम ऐलकोहल थर्मामीटर के आविष्कर्ता गैब्रील फारेनहाइट के नाम पर पड़ा है) होता है, अथवा सेंटीग्रेड पैमाना। फारेनहाइट पैमाने में हिमांक (Freezing Point) 32 डिग्री और क्वथनांक (Boiling Point) 212 डिग्री होता है। सेंटीग्रेड पैमाने में हिमांक शून्य डिग्री और क्वथनांक 100 डिग्री होता है।

किसी आदमी के शरीर का सामान्य तापमान 98·4 डिग्री फारेनहाइट (98·4° फा०) या 37 डिग्री सेंटीग्रेड (37° सें०) होता है।

आज से लगभग 300-400 वर्ष पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक गैलिलियो ने सबसे पहला थर्मामीटर बनाया था। उसने वायु तापमापी का निर्माण किया था। वायु भी ऐलकोहल और पारे की भांति ही फैलती और सिकुड़ती है।

मौसम और शरीर का तापमान जानने के अतिरिक्त और भी अनेक कामों में हमें थर्मामीटरों की आवश्यकता पड़ती है। डबलरोटी आदि के कारखानों में उनकी ज़रूरत होती है। आइसक्रीम बनानेवालों को भी उनकी सहायता लेनी पड़ती है। फूलों की खेती करनेवालों के लिए यह जानना आवश्यक है कि उनकी पौधशालाओं का तापमान ठीक है या नहीं। बॉयलर पर काम करनेवालों को थर्मामीटर से ही पता चलता है कि भट्टियों में आग को कितना तेज़ रखा जाए। ईंट, इस्पात, कांच, चीनी के बर्तन तथा और अनेक चीज़ों के कारखानों में थर्मामीटर की ज़रूरत पड़ती है। वैज्ञानिकों को अनेक विषयों के अध्ययन में उनकी ज़रूरत होती है। (देखें : फारेनहाइट)

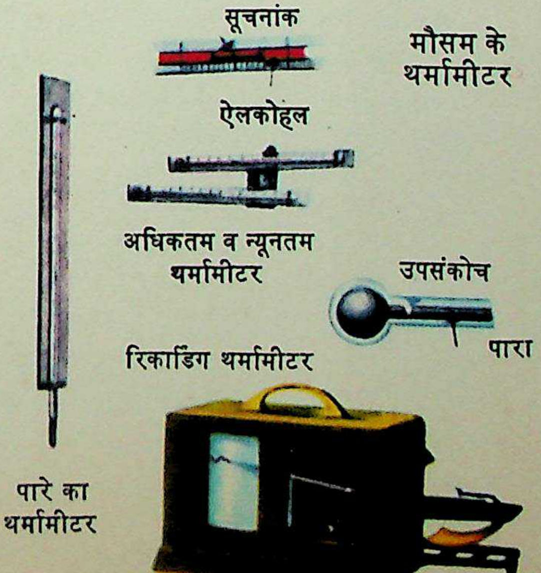

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दंतचिकित्सा (DENTISTRY) : दांत हमारे शरीर के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। दांतों के बिना हम केवल मुलायम चीज़ें ही खा सकते हैं। इसी प्रकार अगर दांत न हों तो हम बहुत-से शब्दों का ठीक से उच्चारण नहीं कर सकते।

कभी-कभी हमारे दांतों में खराबी पैदा हो जाती है। दांतों में दर्द रहने लगता है। दांत या मसूड़े में कोई रोग लग जाता है और हम बीमार जैसे हो जाते हैं। दांत के रोग का इलाज करनेवाले डाक्टर को दंतचिकित्सक या 'डेंटिस्ट' कहते हैं। उसका काम दंतचिकित्सा कहलाता है।

दंतचिकित्सक बहुत-से काम करता है। वह दांत का दर्द ठीक कर सकता है। वह टेढ़े-मेढ़े दांतों को ठीक कर सकता है। टूटे हुए दांत की जगह वह नया दांत लगा सकता है। अगर किसी आदमी के सारे दांत गिर जाएं तो दंत-चिकित्सक उसके मुंह में नकली दांतों का पूरा सेट लगा

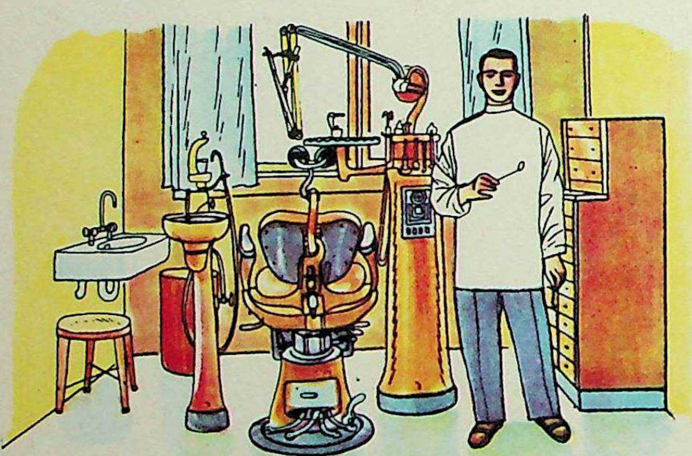

दंतचिकित्सक को कई प्रकार के यंत्रों की जरूरत होती है।

सकता है। दंतचिकित्सक एक्स-रे के ज़रिये दांतों में छिपे हुए रोग का पता लगाता है। अगर किसी दांत का इलाज संभव नहीं होता है तो ज़रूरत होने पर वह उसे इस तरह निकाल सकता है कि रोगी को कम से कम दर्द हो।

दांत निकलवाते समय रोगी को दर्द न हो, इसके लिए दंतचिकित्सक एक प्रकार की दवा या सुई का प्रयोग करता है। इससे दांत के आसपास की जगह सुन्न पड़ जाती है। इसी तरह दांतों के बीच के छेद को भरने या गहरा करने के पहले भी वह इस दवा का प्रयोग करता है।

आज की अपेक्षा पुराने ज़माने में लोगों को शायद दांत के रोग बहुत कम होते थे। वे ऐसा भोजन करते थे जिससे उनके दांतों का खूब व्यायाम हो जाता था। फिर भी दांतों के चिकित्सक सदियों से रहे हैं। आधुनिक दंत-चिकित्सा एक नया विज्ञान है। आधुनिक दंतचिकित्सकों के लिए पहला विद्यालय 1840 में स्थापित हुआ।

पुराने ज़माने में दांतों का इलाज लोग शरीर के अन्य रोगों के साथ ही किया करते थे। वे दुखते हुए दांत को

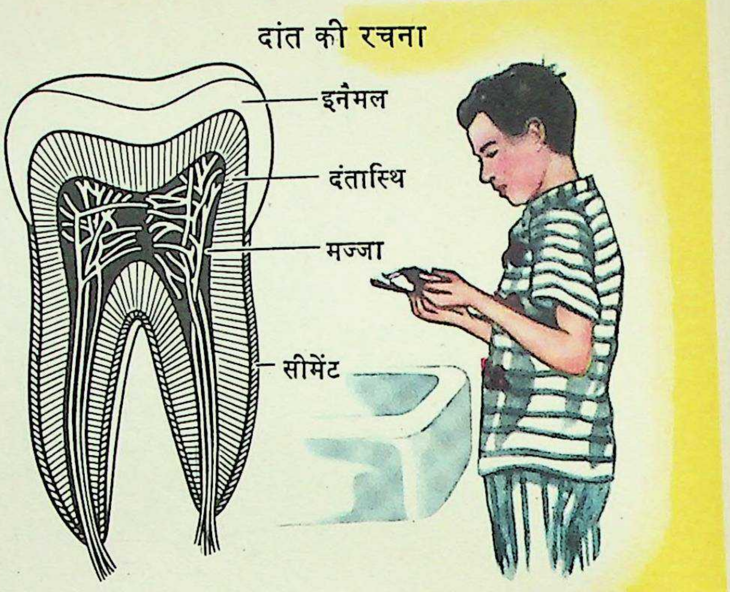

या तो निकाल देते थे या उसपर कोई दवा लगा देते थे। कुछ दवाएं तो बड़ी विचित्र होती थीं—कछुए का खून, लहसुन और दूध और एक प्रकार की जड़ को पीसकर बनाई गई गोलियां ; एक विशेष प्रकार की मछली की हड्डियां आदि-आदि। झाड़-फूंक और टोने-टोटके से भी काम लिया जाता था। कभी-कभी नाई लोग भी दांत उखाड़ने का काम करते थे। उनमें से कुछ अपने काम में बड़े निपुण होते थे।

आज दंतचिकित्सक बनने के लिए कई वर्ष तक अध्ययन करना पड़ता हैं। शिक्षा पूरी होने के बाद अन्य डाक्टरों की तरह उनकी भी परीक्षा होती है। इसके बाद उन्हें लाइसेन्स दिया जाता है।

हमें अपने दांतों की सफाई पर पूरा ध्यान देना चाहिए। साल में कम से कम एक बार किसी अच्छे डाक्टर से दांतों की जांच कराते रहना चाहिए।

दीपक और प्रकाश-व्यवस्था (LAMPS AND LIGHTING) : गुहावासी मनुष्य अपनी गुफा को बटन दबाकर या दियासलाई की तीली से दीया जलाकर प्रकाशित नहीं कर सकते थे। शुरू में रातों में अगर उन्हें रोशनी मिलती थी तो या तो चांद के प्रकाश से या लकड़ियों का अम्बार जलाने से।

पहले-पहल मशालें जलती हुई लकड़ियों की हुआ करती थीं। संभव है, पहली मशाल आग की ढेरी में से ही एक लकड़ी निकालने से तैयार हुई हो। बाद में लोगों ने यह जान लिया कि अगर इस लकड़ी के सिरे को किसी जानवर की चर्बी आदि में डुबा दिया जाए तो प्रकाश और सुन्दर होता है। बाद में इन मशालों को ठीक स्थान पर रखने के लिए दीवारों में कुछ छेद भी बनाए जाने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फिर लोगों ने यह भी जान लिया कि अगर तेल, चर्बी, या मोम जले तो वह पिघलकर बत्ती के सहारे ऊपर चढ़ सकता है। प्रकाश-व्यवस्था के इतिहास में यह एक महान खोज थी। बत्तियों के ज्ञान के बाद ही लोग मोमबत्तियां और दीये काम में ला सके।

मोमबत्ती में लौ की गर्मी से थोड़ा-सा मोम पिघल जाता है। पिघले हुए मोम को बत्ती सोख लेती है और सिरे पर पहुंचाकर जलाती है। लौ काफी चटक होती है, क्योंकि उसमें कार्बन के सूक्ष्म कण होते हैं जो गर्म होकर सफेद हो जाते हैं। जब लौ धुआं दे रही हो तो इसका मतलब यह है कि कार्बन के कुछ कण बिना जले ही निकले जा रहे हैं। अक्सर ये छोटे कण जल उठते हैं।

तेल के दीये में तेल तो पहले से ही तरल रूप में रहता है। बत्ती से होकर ऊपर चढ़ने के पहले इसके गलने की ज़रूरत नहीं होती। इससे भी रोशनी उसी कारण निकलती है जिस कारण मोमबत्ती से निकलती है, अर्थात् इसमें भी कार्बन के कण गर्म होकर सफेद हो उठते हैं।

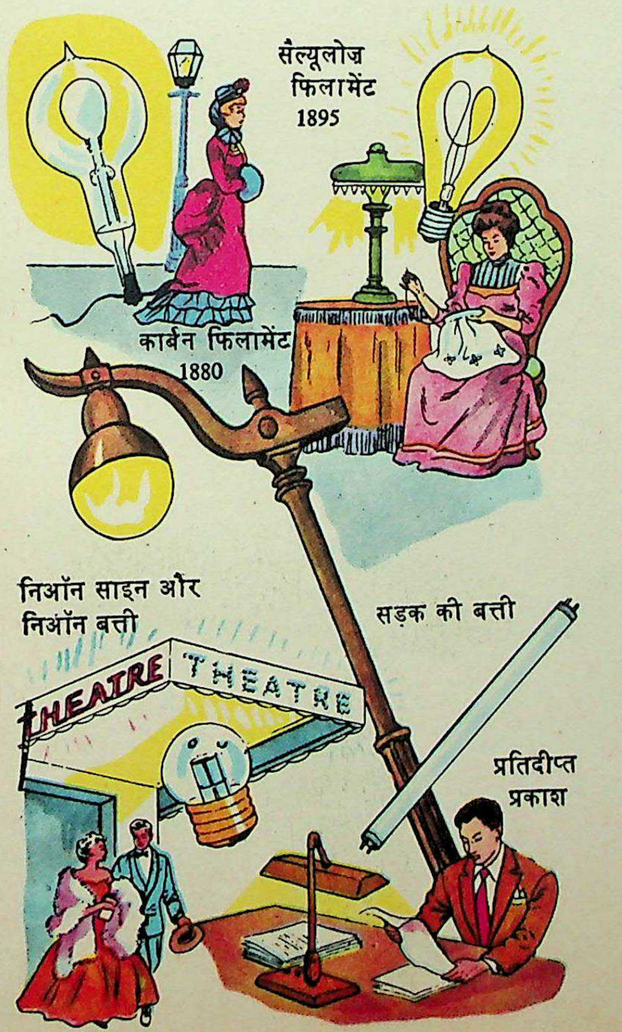

शीशे की चिमनियों के कारण मिट्टी के तेल की बत्तियां सामने आईं, जो पहले के तेल वाले दीयों से काफी अच्छी थीं। चिमनी लौ को हवा से बचाए रखती थी और इसमें नीचे बने छेदों से इतनी हवा आती रहती थी जिससे बत्ती जलती रह सके।

मशालें, मोमबत्तियां, तेल के दीये, और गैस की बत्तियां—आज इन सभीका बिजली की रोशनी ने रिवाज उठा दिया है।

बिजली की बत्तियां कई तरह की होती हैं, जैसे चाप बत्ती, उद्दीप्त बत्ती, पारद-वाष्प बत्ती, निऑन बत्ती, प्रतिदीप्त बत्ती इत्यादि। ये सभी बत्तियां पहले काम में आनेवाली बत्तियों से एक अर्थ में बहुत भिन्न हैं, और वह यह है कि इन बत्तियों के जलते समय किसी चीज़ को आग नहीं पकड़ती है।

चाप बत्ती में एक कार्बन की छड़ के सिरे से दूसरी कार्बन की छड़ के सिरे पर बिजली उछलती हुई चलती है और इससे रोशनी पैदा होती है। उद्दीप्त बत्ती में धातु का एक छोटा-सा तार गर्म और सफेद हो उठता है। इसीको उद्दीप्त होना कहते हैं। ऐसा तब होता है जब बिजली की धारा इससे होकर बहती है। निऑन और पारद-वाष्प बत्ती में बिजली की धारा से एक गैस चमक उठती है। प्रतिदीप्त बत्ती में बिजली की धारा के कारण नली के भीतर लगे एक रसायन से रोशनी पैदा होती है।

प्रकाश और बत्ती की कहानी अभी समाप्त नहीं हुई है। आज भी वैज्ञानिक रात को दिन बनाने में लगे हुए हैं। (देखें : एडिसन)

दूरबीन (TELESCOPE) : कहा जाता है कि डच ऐनकसाज लिपरशे के पास काम सीखनेवाला एक लड़का एक दिन ऐनक के काम में आनेवाले कुछ लेंसों को उलट-पुलट रहा था। संयोगवश उसने एक लेंस को एक दूसरे लेंस के सामने रखकर उनके माध्यम से देखने का प्रयत्न किया। जब उसने देखा कि इस तरह वस्तुएं और करीब नज़र आती हैं तो वह चकित रह गया। उसने अपनी खोज लिपरशे को दिखलाई। लिपरशे ने उन दोनों लेंसों को एक नली में रखा। इस नये खिलौने को उसने अपनी दूकान की खिड़की में सजा दिया। यह बहुत ही साधारण दूरबीन थी, जिसे आज की दूरबीनों का अग्रज कहा जा सकता है।

गैलिलियो ने इस दूरबीन का समाचार मिलते ही अपने लिए स्वयं एक दूरबीन बनाने का निश्चय किया। अपनी बनाई पहली दूरबीन से देखने पर गैलिलियो को पता चला कि समुद्र में बहुत दूरी पर चल रहे जहाज़, जो आंखों से नहीं देखे जा सकते थे, इस दूरबीन की सहायता से देखे जा सकते हैं। शीघ्र ही गैलिलियो ने कई और दूरबीनें बनाईं जो पहली से बेहतर थीं। अपनी चौथी दूरबीन बनाने के बाद उसे एक दिन आकाश की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

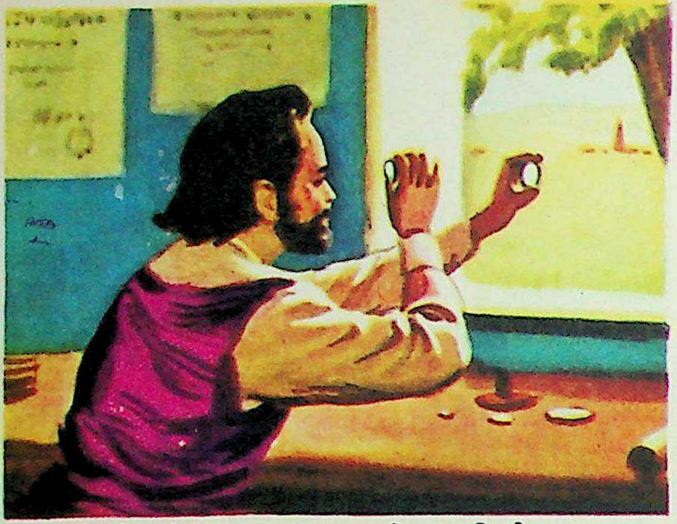

लिपरशे द्वारा साधारण दूरबीन का निर्माण ।

ओर देखने की सूझी । चन्द्रमा की ओर देखने पर उसे बहुत आश्चर्य हुआ । चन्द्रमा उसे चमकता हुआ चिकना गोला नहीं लगा । उसे चन्द्रमा पर पहाड़, घाटियां और मैदान दिखाई दिए ।

तब से आकाश की छान-बीन करने में दूरबीनों का उपयोग होता आ रहा है । अभी भी छोटी दूरबीनें प्रचलित हैं, जो ज़मीन पर की दूरस्थ वस्तुओं को देखने के काम आती हैं । लेकिन सभी मशहूर दूरबीनें आकाश के अध्ययन के लिए बनाई गई हैं ।

गैलिलियो की दूरबीनें दो छोटे-छोटे लेंसों से बनी होती थीं । आज भी दुनिया की कुछ बहुत अच्छी दूरबीनें लेंसों की ही बनी हैं । लेंसों से बनी दूरबीन को वर्तन दूरबीन (Refracting Telescope) कहा जाता है । दुनिया की सबसे बड़ी वर्तन दूरबीन अमरीका में विलियम्स बे में स्थित यर्केज़ वेधशाला में लगी है । इस दूरबीन में सबसे बड़ा लेंस 40 इंच चौड़ा है ।

गैलिलियो के कुछ ही दिनों बाद अंग्रेज़ वैज्ञानिक न्यूटन ने एक दूसरे प्रकार की दूरबीन का आविष्कार किया । इसमें उसने लेंसों की जगह दर्पण लगाए । दर्पणों से बनी दूरबीन को परावर्ती दूरबीन (Reflecting Telescope) कहा जाता है । दुनिया की सबसे बड़ी परावर्ती दूरबीन अमरीका के कैलिफोर्निया राज्य में पैलोमर पर्वत पर स्थित वेधशाला में लगी हुई हेल नामक दूरबीन है ।

इस दूरबीन का बड़ा दर्पण लगभग 17 फुट चौड़ा है । यह दर्पण शीशे का है, जिसपर ऐल्युमिनियम की पतली परत चढ़ी हुई है । इसका वज़न लगभग 15 टन है । पूरी दूरबीन का वज़न 500 टन से भी अधिक है । यह 6 मंज़िलों जितनी लम्बी है और बीस वर्षों में 80 लाख डालर की लागत से तैयार हुई थी ।

इस विशालकाय दूरबीन को बनाने में बहुत-सी समस्याओं को सुलझाना पड़ा । 200 इंच चौड़ा दर्पण बनाना सबसे मुश्किल काम था । पहले योजना थी कि दर्पण शुद्ध बिल्लौर (क्वार्ट्ज़) का बनाया जाए । लेकिन यह विचार छोड़ दिया गया । इसकी बजाय पाइरेक्स शीशे का दर्पण बनाया गया । पिघले हुए शीशे को सांचे में डालने के बाद वर्ष-भर तक ठंडा होने के लिए छोड़ना पड़ा ।

फिर दर्पण को न्यूयार्क से, जहां वह बना था, कैलिफोर्निया ले जाने की समस्या उठ खड़ी हुई । इसके लिए खास तौर पर रेल का एक मालवाहक डिब्बा बनाया गया । ट्रेन को कैलिफोर्निया बहुत घूम-फिरकर जाना पड़ा जिससे नीचे पुलों या तंग सुरंगों से होकर न जाना पड़े । लॉस एंजिलस तक वह सुरक्षित रूप में पहुंच गया । वहां पर कारीगरों ने उसपर पालिश करने का कार्य शुरू किया ।

पालिश 11½ साल तक होता रहा । शुरू में दर्पण का वज़न 20 टन था । पांच टन शीशा पालिश होने में घिस

वर्तन दूरबीन का रेखाचित्र

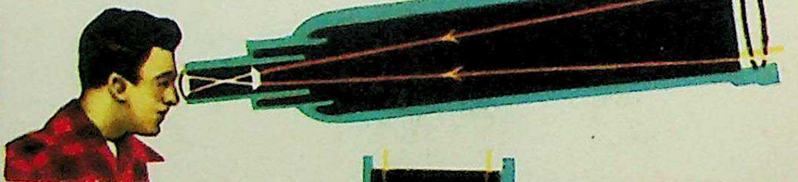

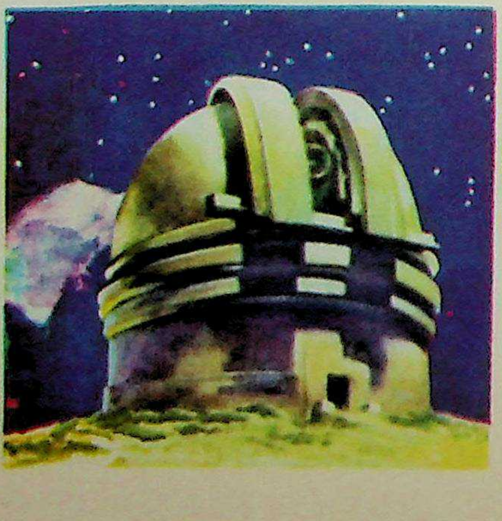

संसार की सबसे बड़ी परावर्ती दूरबीन कैलिफोर्निया (अमरीका) में माउंट पैलोमर पर स्थित इस वेधशाला में लगी हुई है । इसका बड़ा परावर्ती दर्पण लगभग 17 फुट चौड़ा है ।

परावर्ती दूरबीन का रेखाचित्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गया। आखिरकार 1947 ई० के अंत में दर्पण को एक ट्रक पर लादकर पहाड़ी पर पहुंचाया गया। बहुत-से पुल फिर से सुदृढ़ किए गए। फिर कहीं उसे उनपर से होकर जाने दिया गया। मार्ग के कुछ भाग में उसे खींचने और धक्का देने के लिए ट्रैक्टरों की सहायता ली गई। जब दर्पण बिना किसी दुर्घटना के पहाड़ की चोटी पर पहुंच गया तो सभी लोगों ने निश्चितता की सांस ली।

जिस समय दर्पण पर पालिश हो रहा था, दूरबीन और दूरबीन के ढांचे को लगाने के लिए एक वेधशाला बनाई गई। वेधशाला का गुम्बद वातानुकूलित है। जिस यंत्र पर दूरबीन को घुमाया-फिराया जाता है, वह बहुत

माउंट पैलोमर (कैलिफोर्निया) की परावर्ती दूरबीन

नाज़ुक है। तापक्रम में थोड़े-से परिवर्तन से कई दिनों की मेहनत पर पानी फिर सकता है। वेधशाला में दर्शकों के लिए एक विशेष कमरा बना हुआ है। उनके शरीर का ताप दूरबीन तक न पहुंचे, इसके लिए बीच में शीशे की एक दीवार बनाई गई है। दूरबीन बहुत बड़ी है, फिर भी ऐसी व्यवस्था है कि इसे आसानी से घुमाया जा सके, ताकि आकाश में बिलकुल ठीक जगह पर इससे देखा जा सके।

कोई भी ज्योतिर्विद् दुनिया की बड़ी दूरबीनों के माध्यम से स्वयं आकाश का अध्ययन कर सकता है। पर वैज्ञानिकों ने दूरबीनों से खोज करने का एक और बेहतर तरीका निकाल लिया है। वास्तविक आंख की तुलना में फोटोग्राफी की प्लेट बेहतर 'आंख' है। इसीलिए ज्योतिर्विद् दूरबीनों को विराट कैमरों के रूप में इस्तेमाल करते हैं। वे आकाश के जिस भाग का अध्ययन करना चाहते हैं, उसके चित्र ले लेते हैं और फिर उन चित्रों का अध्ययन करते हैं।

पैलोमर की विराट दूरबीन से ज्योतिर्विद् आकाश की पहले से अधिक दूरी तक छान-बीन करने में सफल हुए हैं। इससे उन्होंने ऐसे नक्षत्र-समूहों का अवलोकन किया है जो धरती से इतनी दूर हैं कि उनकी प्रकाश-किरणें उन नक्षत्रों से एक अरब वर्ष पहले चलने के बाद दूरबीन तक पहुंची हैं।

द्रव इंजीनियरी (HYDRAULICS): पानी के नल इतने प्रचलित हो गए हैं कि जब तक उनसे पानी आना बन्द न हो जाए, तब तक हमारा ध्यान भी उधर नहीं जाता। लेकिन पानी के पाइप हमारे घरों में इसलिए लग पाए हैं कि लोगों ने यह समझ लिया था कि पानी और दूसरे द्रव पदार्थ किस प्रकार बहते हैं। बहने या स्थिर रहने की अवस्था में द्रव पदार्थ किस प्रकार की क्रिया करते हैं, इसके अध्ययन को द्रव इंजीनियरी कहते हैं।

एक सीधी बात जो पानी के संबंध में हर व्यक्ति जानता है, वह यह है कि पानी नीचे की ओर बहता है। पानी के एक ऐसे पात्र की कल्पना कीजिए जो सीढ़ी के ऊपर रखा हुआ है। एक नली, जो इस पात्र के पेंदे में लगी हुई है, नीचे फर्श तक आकर ऊपर मुड़ जाती है। पानी ऊपर की ओर उस सतह तक चढ़ेगा जिस सतह पर पात्र का पानी है। पात्र में रखे पानी के दबाव से नली का पानी ऊपर चढ़ता है।

जब इंजीनियर लोग किसी नगर के लिए जल-व्यवस्था की योजना बनाते हैं तो वे पानी को ऊंची सतह तक पहुंचाने का उपाय ढूंढ़ते हैं। वे किसी ऊंची पहाड़ी पर तालाब बनाते हैं, ताकि पानी की सतह नगर की ऊंची से ऊंची इमारत से भी ऊपर रहे। ज़रूरत पड़ने पर वे ऊंचे खम्भों का एक बड़ा मचान बनाकर उसपर पानी जमा करने की टंकी बनाते हैं। इन टंकियों में अक्सर पानी पंप करके पहुंचाया जाता है और वहां से अपने-आप नगर के बड़े-बड़े नलों में नीचे की ओर बहने दिया जाता है।

पानी और दूसरे द्रवों के बारे में दूसरा तथ्य यह है कि वे अपने दबाव को बड़ी सरलता से स्थानान्तरित कर लेते हैं। इसलिए इनका प्रयोग दबाव बढ़ाने के लिए भी किया जा सकता है। पानी से भरा हुआ एक पाइप, जिसके दोनों सिरों पर रबर के डाट लगे हुए हों, इस बात को प्रकट कर सकता है कि कैसे द्रव पदार्थ अपना दबाव स्थानान्तरित करते हैं। अगर एक डाट को भीतर की ओर दबाया जाए तो पानी का दबाव दूसरे सिरे पर लगे हुए डाट को बाहर की ओर दाबेगा। अगर पाइप का एक सिरा चौड़ा हो और उसपर दूसरे सिरे के डाट से दस-गुना बड़ा डाट लगा हो तो पाइप को दबाव बढ़ाने की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

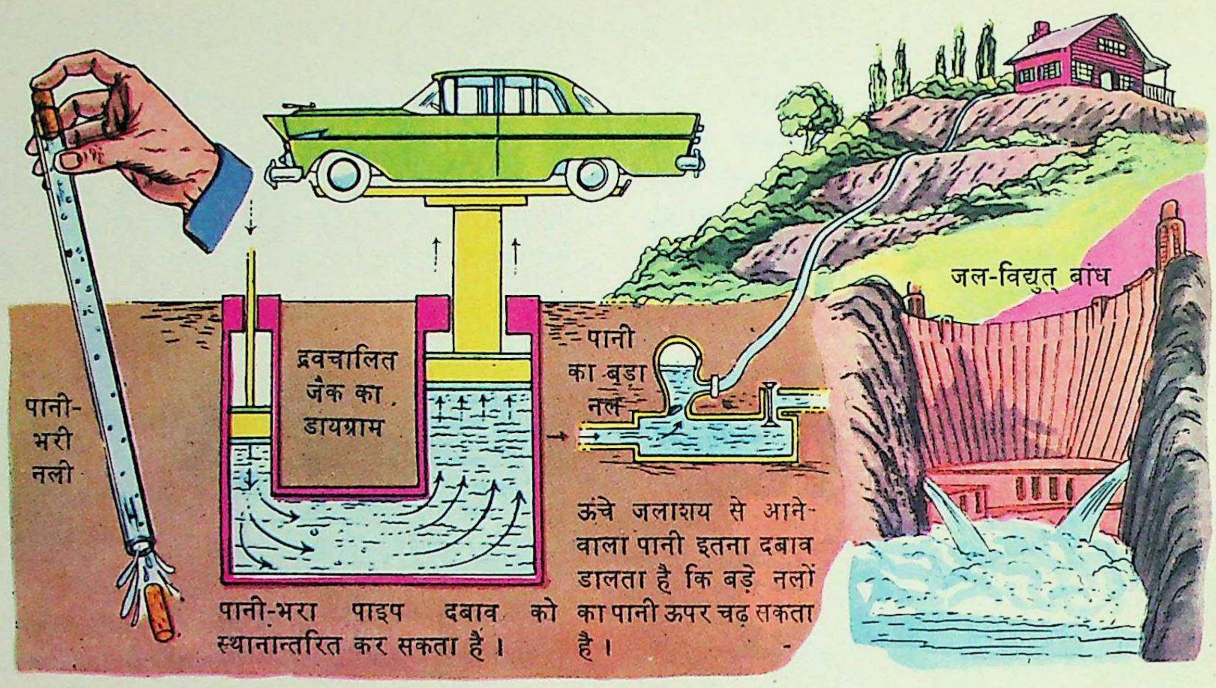

मशीन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है । छोटे डाट पर पांच किलोग्राम का दबाव बड़े डाट पर दस गुना दबाव, यानी पचास किलोग्राम दबाव डालेगा ।

धुलाई और सफाई के लिए मोटरगाड़ियों को उठाने के लिए प्रयोग में आनेवाले जैक में द्रव पदार्थों के दबाव से काम लिया जाता है । इन जैकों में तेल की टंकी होती है और इनके छोटे सिरे पर डाट लगा रहता है जिसे पिस्टन कहते हैं, और दूसरे सिरे पर एक बड़ा पिस्टन लगा रहता है । जब कोई आदमी छोटे पिस्टन को चालू करता है तो उसकी ताकत बड़े पिस्टन पर कई गुना होकर काम करती है । द्रव पदार्थ से भरी हुई नलियों पर पिस्टन लगाकर कारों में द्रव-चालित ब्रेक प्रणाली से काम लिया जाता है ।

नहरें, बाढ़ रोकने की विधि, और जल-विद्युत् प्रणाली, मनुष्य के द्रव इंजीनियरी की जानकारी के कुछ दूसरे प्रयोग हैं । आधुनिक जीवन में अनेकानेक लाभदायक कामों में इस प्राचीन विज्ञान से काम लिया जा रहा है ।

द्रव वायु (LIQUID AIR) : अगर हवा को शून्य से बहुत अधिक ठंडा करें, जैसे अगर इसे –315° फा० पर पहुंचा दें तो यह द्रव में परिवर्तित हो जाएगी ।

द्रव वायु देखने में पानी जैसी ही होती है । इसे पानी की तरह उंड़ेला जा सकता है । लेकिन इसे एक खास ढंग से बनी बोतलों में ही रखा जा सकता है जो इसे गर्मी से बचाए रहें और साथ ही कुछ दबाए भी रहें । मामूली बोतल में रखी हुई द्रव वायु बहुत जल्दी ही उफनकर उड़ जाएगी ।

सन् 1933 में शिकागो के विश्वमेले में एक केतली में द्रव वायु को भरकर बर्फ पर रखा गया था । द्रव वायु धीरे-धीरे उबल रही थी । लोग देखकर अचम्भे में पड़ जाते थे । वे सोचते थे कि क्या दुनिया में कोई ऐसी भी चीज़ है जिसको उबालने के लिए ठंड की आवश्यकता होती है ? सच पूछिए तो अगर इसे साधारण मेज़ पर रखा गया होता तो यह और तेज़ी से उबलती । द्रव वायु बर्फ पर भी इसलिए उबलती है कि बर्फ भी इतनी ठंडी नहीं होती कि इसे उबलने से रोक सके । लेकिन आप उबलती हुई द्रव वायु से अगर आलू उबालना चाहें तो वह नहीं उबलेगा । उलटे होगा यह कि आलू जमकर कड़ा हो जाएगा ।

द्रव वायु को संभालना बहुत खतरे का काम है । यह इतनी ठंडी होती है कि हमारे लिए खतरनाक सिद्ध हो

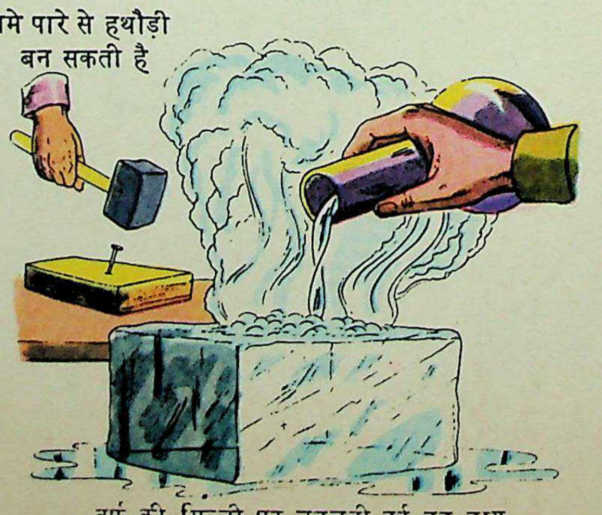

बर्फ की सिल्ली पर उबलती हुई द्रव वायु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सकती है। इसके अलावा, इसके फटने का भी खतरा बना रहता है।

अगर गुलाब के एक फूल को द्रव वायु में कुछ क्षणों के लिए ही डाल दें तो वह जमकर इतना कड़ा हो जाएगा कि इसकी पंखुड़ियां बर्फ के छल्ले की तरह टूट जाएंगी। यही हालत रबर की गेंद की होगी। अगर द्रव वायु में पारा डाल दें तो पारा जमकर लोहे जितना कड़ा हो जाएगा।

लेकिन अगर द्रव वायु का प्रयोग सिर्फ रबर की गेंद या गुलाब या पारा जमाने के लिए ही होता तो इतनी द्रव वायु नहीं तैयार की जाती। जब पहले-पहल द्रव वायु तैयार हुई तो कुछ लोगों ने सोचा कि अब इसका प्रयोग भाप या पेट्रोल के स्थान पर इंजन चलाने के लिए होगा। लेकिन इसका संभालना बहुत कठिन सिद्ध हुआ। आज द्रव वायु इसलिए तैयार की जाती है कि इससे नाइट्रोजन या ऑक्सीजन प्राप्त करने में आसानी होती है। हमारे आसपास की हवा ऑक्सीजन और नाइट्रोजन से बनी है। लेकिन इन्हें अलग करना प्रायः असंभव ही है। किन्तु द्रव हो जाने पर इनको अलग करना अधिक आसान होता है। ऑक्सीजन और नाइट्रोजन दोनों बहुत काम की गैसें हैं।

धुआं (SMOKE) : धुएं में मुख्यतया वे गैसें होती हैं जो किसी पदार्थ के जलने से बनती हैं। कोई वस्तु जब जलती है तो वह सिर्फ किसी अन्य वस्तु या किन्हीं अन्य वस्तुओं में बदल जाती है। कई बार ये नई वस्तुएं विभिन्न प्रकार की गैसें होती हैं। धुआं ज़्यादातर पानी की भाप और कार्बन डाइऑक्साइड का बना होता है।

अक्सर धुएं में कार्बन के कुछ ठोस कण भी होते हैं। ये जलते हुए पदार्थ के अनजले अंश होते हैं। यदि इनकी संख्या अधिक होती है तो धुआं गहरा-भूरा या बिलकुल काला हो जाता है। इनकी संख्या कम होने पर धुएं में कालिमा कम होती है।

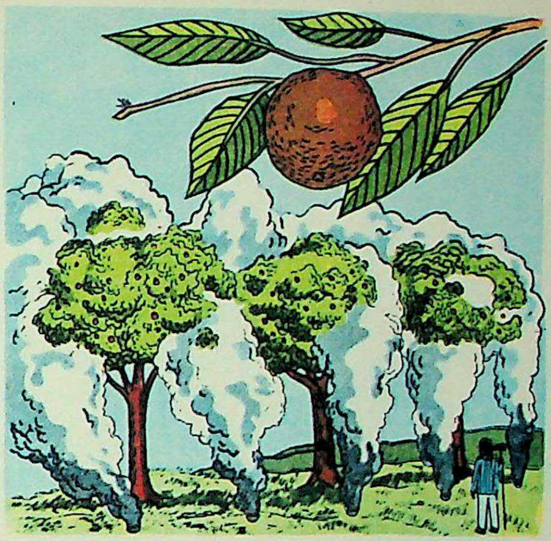

फलों को पाले से बचाने के लिए धुआं किया जाता है।

कार्बन के ये सूक्ष्म कण चिमनियों की दीवारों पर भी लगते रहते हैं। इन्हें काजल या कालिख कहा जाता है। अक्सर ये हवा में उड़कर हमारे घरों की दीवारों और फर्नीचरों पर जम जाते हैं। धुएं के रूप में कुछ हिस्सा बेकार चले जाने से ईंधन भी अधिक खरीदना पड़ता है। स्मॉग (Smog) बनाने में सहायक होने के कारण धुआं कुछ शहरों के लिए विशेष समस्या खड़ी कर देता है। स्मॉग उस कोहरे को कहते हैं जिसमें धुआं भी मिला होता है। धुएं के मिले होने के कारण यह गहरा काला और बहुत कष्टकर मालूम होता है। बहुत-से बड़े शहरों के अधिकारीगण धुएं से छुटकारा दिलाने के लिए ज़ोरों से प्रयत्न कर रहे हैं। स्मॉग और धुएं की वजह से कुछ शहरों में रहना कष्टदायक हो जाता है।

धुएं के स्रोत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेकिन कुछ कामों में धुआं मनुष्य की सहायता भी करता है। सेब के बगीचों के मालिक कभी-कभी बगीचों में किसी चीज़ में आग लगा देते हैं, जिससे कि धुआं उठे और फलों और पौधों को पाले से हानि न पहुंच सके। युद्धकाल में फौजों को शत्रु की दृष्टि से बचाने में भी धुआं सहायक होता है।

ध्वनि (SOUND) : ध्वनि के असंख्य प्रकार हैं। सरसराहट, खरखराहट, चरमराहट, गुर्राहट, क्रन्दन, चीत्कार, भुनभुनाहट, चिल्लाहट, भड़भड़ाहट आदि विभिन्न ध्वनियों में से कुछ के नाम हैं। इस तरह विभिन्न पशुओं और पक्षियों की ध्वनियों के कुछ और भी नाम हैं। बहुत-सी ध्वनियों को नाम नहीं दिया गया है, क्योंकि इनकी संख्या इतनी अधिक है कि सभी ध्वनियों का नामकरण असंभव है।

कुछ ध्वनियां कोमल होती हैं और कुछ तीव्र। कुछ ध्वनियां ऊंची होती हैं और कुछ नीची। कुछ ध्वनियां मनोहर होती हैं और कुछ कर्कश। ध्वनियां चाहे कैसी भी हों, सभी ध्वनियां एक ही तरह से, अर्थात् किसी वस्तु के कम्पन से पैदा होती हैं। कम्पन का मतलब है आगे और पीछे हिलना

जब पत्तियों की मर्मर सुनाई पड़ती है, तो हवा उन्हें आगे-पीछे हिला रही होती है। जब शेर गरजता है, तो उसके गले के स्वरतंत्र में कम्पन हो रहा होता है। दरवाज़ा बन्द करने पर किवाड़ की लकड़ी में कम्पन होने लगता है।

साथ के चित्र में दो ट्यूनिंग फॉर्क हैं। जब इनसे किसी चीज़ पर आघात किया जाता है तो इनसे एक स्वर निकलता है। लेकिन एक फॉर्क से हमेशा एक ही स्वर निकलता है, क्योंकि यह हमेशा एक सेकंड में उतनी ही बार आगे और पीछे हिलता है। दूसरे ट्यूनिंग फॉर्क को इच्छानुसार समायोजित किया जा सकता है। इससे अलग-अलग स्वर निकलते हैं, क्योंकि इसके कांपने को धीमा या तेज़ किया जा सकता है। जिस चीज़ में जितनी तीव्रता से कम्पन होता है उससे उतनी ही ऊंची ध्वनि निकलती है। वायलिनवादक जब अपने वायलिन का सुर मिलाता है तो तारों को सिर्फ इस तरह कसता है कि वे सही गति से कम्पन कर सकें।

इनमें से हर ट्यूनिंग फॉर्क कोमल और तीव्र दोनों तरह के स्वर उत्पन्न कर सकता है। यदि ज़ोर से आघात किया जाए तो तीव्र स्वर निकलेगा और यदि धीमे से आघात

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया जाए तो अपेक्षाकृत कोमल स्वर निकलेगा। इसकी शाखाएं उतनी ही तीव्र गति से हिलती हैं जितनी ज़ोर से कि इससे आघात किया जाता है। कम्पन होते समय कोई वस्तु जितनी तीव्र गति से हिलती है उतना ही तीव्र स्वर निकलता है।

कुछ ध्वनियां इतनी मनोहर होती हैं कि हम उन्हें संगीत कहते हैं। कुछ ध्वनियां इतनी कर्कश होती हैं कि हम उन्हें शोर कहते हैं। जिस प्रकार के कम्पनों से संगीत पैदा होता है वे कम्पन अपेक्षाकृत अधिक नियमित गति से होते हैं। कम्पन के अनियमित होने पर शोर होता है।

ध्वनि हवा से होकर हमारे कानों के पास आती है। जिस वस्तु से भी ध्वनि निकल रही होती है, उसके कम्पन से हवा में ध्वनि-तरंगें पैदा होती हैं। ध्वनि-तरंगें बहुत कुछ पानी की उर्मियों की तरह होती हैं।

हवा में ध्वनि की गति लगभग 750 मील प्रति घंटा होती है। जब किसी जेट वायुयान के बारे में यह कहा जाता है कि वह ध्वनि से तेज़ उड़ता है तो हम समझ जाते हैं कि उसकी गति प्रति घंटा 750 मील से अधिक है। ध्वनि एक घंटे में 750 मील, एक मिनट में लगभग 12 मील या एक सेकंड में मील का पांचवां भाग तय करती है।

प्रति मिनट 12 मील की गति हमें बहुत तेज़ लगती है। लेकिन प्रकाश की गति ध्वनि से भी अधिक तीव्र है। इसीलिए आकाश में बिजली का चमकना हमें पहले दिखाई पड़ जाता है, और उसकी कड़कड़ाहट बाद में सुनाई पड़ती है।

यद्यपि हमें सुनाई पड़नेवाली अधिकांश ध्वनियां वायु से होकर आती हैं, परन्तु वे अन्य कई वस्तुओं से भी होकर आ सकती हैं। कुछ वस्तुएं तो ऐसी होती हैं कि उनसे होकर आने में ध्वनि को वायु से होकर आने से अधिक सुविधा होती है। साथ के चित्र में बच्चे जिस टीन के डिब्बे के टेलीफोन का उपयोग कर रहे हैं, उसमें ध्वनि दोनों डिब्बों से जुड़े हुए तार से होकर एक डिब्बे से दूसरे डिब्बे में पहुंचती है। लोहे से होकर आने में ध्वनि की गति हवा में ध्वनि की गति से कई गुना तीव्र हो जाती है। यदि लोहे के बने बाड़े के दूसरे किनारे पर 50 फुट दूर कोई आघात करे, तो इधर के व्यक्ति को दो बार आवाज़ सुनाई पड़ेगी। लोहे से होकर आती हुई आवाज़ पहले सुनाई पड़ जाएगी। दूसरी आवाज़ हवा से होकर कुछ देर बाद आएगी।

जब वायु में चलती हुई ध्वनि-तरंगें किसी ठोस दीवार से टकराती हैं तो टकराकर वे पुनः वापस होती हैं। इसीको अनुगूंज कहते हैं। चमगादड़ों के आंखें होते हुए भी वे अपने पंखों से हवा में उत्पन्न होनेवाली ध्वनि-तरंगों की अनुगूंज सुनकर अपनी दिशा निर्धारित किया करते हैं। करीब-करीब इसी प्रकार 'सोनर' (Sonar) पद्धति से पनडुब्बियों और जल के भीतर की वस्तुओं का पता लगा लिया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

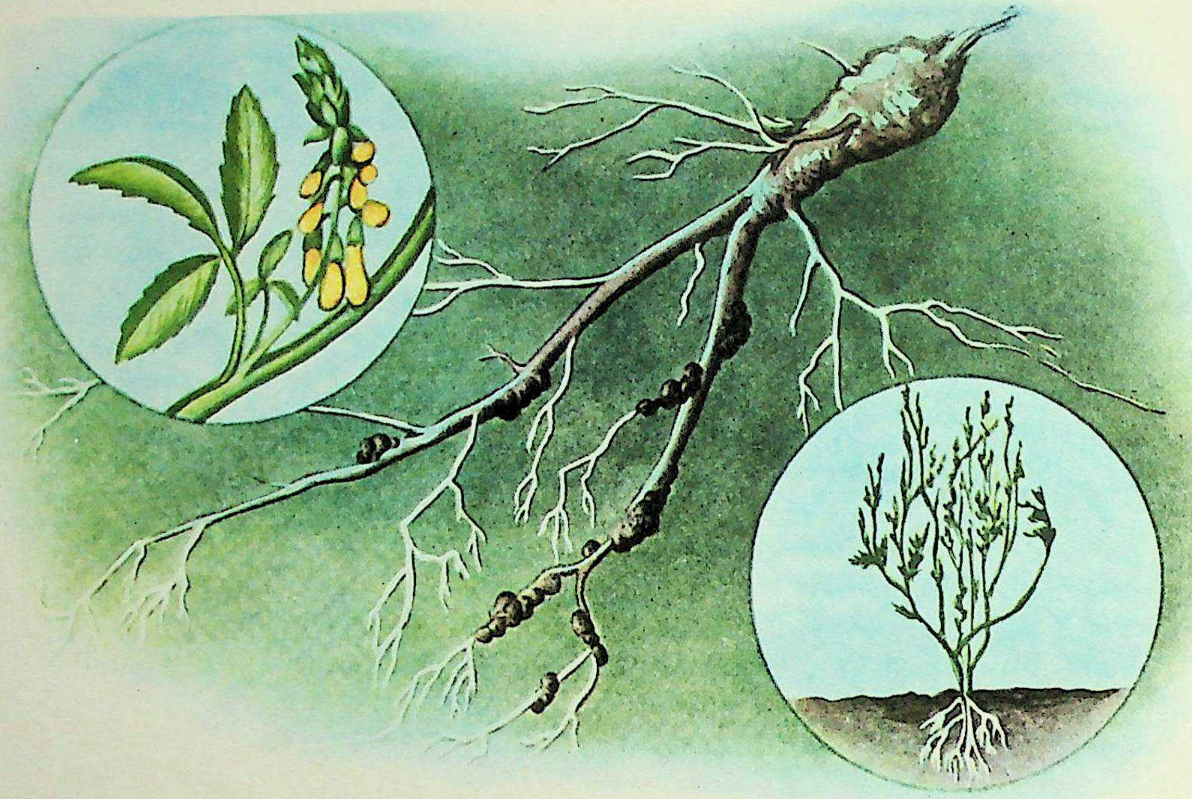

कुछ पौधों की जड़ों पर गांठों में ऐसे जीवाणु होते हैं जो हवा से नाइट्रोजन लेकर मिट्टी में पहुंचाते हैं।

नाइट्रोजन (NITROGEN) : हवा में पांच में से चार भाग नाइट्रोजन नाम की गैस होती है। हवा में पाई जाने-वाली दूसरी गैसों की ही तरह नाइट्रोजन भी दिखाई नहीं देती है।

हमारे शरीर में भी नाइट्रोजन का होना आवश्यक है। लेकिन हम नाइट्रोजन को सीधे हवा से नहीं ग्रहण कर सकते। हम अपनी सांस के साथ नाइट्रोजन को भीतर खींचते हैं और फिर बाहर निकाल देते हैं। हमें अपने काम के लिए नाइट्रोजन उन पदार्थों से मिलती है जिन्हें हम खाते हैं। दूध, मांस, अंडा और पनीर में नाइट्रोजन मिली रहती है।

इस गैस की गिनती मूलतत्त्वों में होती है। सारी सृष्टि मूलतत्त्वों से ही बनी है। लेकिन नाइट्रोजन आसानी से दूसरी चीज़ों में नहीं मिलती है। इसे अक्सर 'सुस्त गैस' कहा जाता है। अगर यह कुछ दूसरे पदार्थों में जुड़ती भी है, तो भी इसकी क्रिया कुछ ऐसी रहती है मानो यह वहां टिकना न चाहती हो। हमारे अनेक विस्फोटक पदार्थों में नाइट्रोजन मिली रहती है। जब नाइट्रोजन उनमें से फूटकर निकलती है, तो धड़ाका पैदा होता है।

सभी सजीव पदार्थों में नाइट्रोजन पाई जाती है। अतः हमारे शरीर में भी नाइट्रोजन का कुछ अंश है। हमारे खाने की कुछ चीज़ों में अगर नाइट्रोजन नहीं मिली होती तो हम बढ़ नहीं पाते, अर्थात् बेकार हो चुकी कोशिकाओं के स्थान पर नई कोशिकाएं फिर नहीं बना पाते।

नाइट्रोजन दूसरी चीज़ों से इतनी कम जुड़ पाती है कि हमारे खाने की चीज़ों में अगर कुछ प्रकार के जीवाणु नहीं होते तो हमें अपनी आवश्यकता-भर को नाइट्रोजन नहीं मिल पाती। कुछ जीवाणु हवा से नाइट्रोजन ग्रहण करके धरती के दूसरे तत्त्वों में मिला देते हैं। इसके बाद बड़े पौधों को धरती से नाइट्रोजन प्राप्त होती है। हम इन पौधों के कुछ हिस्सों को या इन पौधों को खानेवाले जानवरों को खाकर नाइट्रोजन प्राप्त करते हैं।

हालांकि हम हवा से नाइट्रोजन को सीधे नहीं प्राप्त कर पाते, फिर भी इससे हवा सांस लेने के अधिक उपयुक्त हो जाती है। नाइट्रोजन ऑक्सीजन को हलका कर देती है। ऑक्सीजन को ही हम सांस द्वारा ग्रहण करते हैं। नाइट्रोजन मिली हुई ऑक्सीजन सांस लेने के लिए शुद्ध ऑक्सीजन से अधिक अच्छी होती है।

न्यूटन, सर आइज़क (SIR ISAAC NEWTON 1642–1727) : अपने बचपन में आइज़क न्यूटन बीमार रहा करते थे। जन्म के बाद कुछ महीनों तक तो उनके बचने की भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आशा नहीं थी। लेकिन बड़े होने पर वे दुनिया के महानतम वैज्ञानिकों में से एक हुए।

बचपन में उन्हें मशीनी खिलौनों का बहुत शौक था। पतंग उड़ाने में भी उनकी दिलचस्पी थी। अपनी पतंगबाज़ी के दिनों में भी न्यूटन आकाश का अध्ययन किया करते थे। वे तारों को बड़े ध्यान से देखा करते थे। बचपन में उन्होंने कई धूपघड़ियां भी बनाई थीं।

उनकी माता ने यह सोचकर कि न्यूटन कभी अच्छे किसान नहीं बन पाएंगे, उन्हें कालेज में पढ़ने के लिए भेज दिया। एक या दो साल में ही वे एक ऐसी समस्या पर जुट गए जिसने उन्हें विख्यात बना दिया। समस्या यह थी कि चन्द्रमा और ग्रह क्यों एक निश्चित पथ पर ही चलते हैं? चूंकि वे घूम रहे हैं, अतः वे क्यों सीधे बाह्य अंतरिक्ष में नहीं चले जाते?

एक कहानी यह कही जाती है कि एक बार न्यूटन एक सेब के पेड़ के नीचे बैठे हुए थे। सेब का एक फल आकर उनके ऊपर गिरा। इसी घटना को लेकर न्यूटन गुरुत्वाकर्षण के बारे में सोचने लगे। यह ठीक है कि सेब का फल ज़मीन पर गुरुत्वाकर्षण के कारण ही गिरता है, लेकिन फिर भी न्यूटन के बारे में कही जानेवाली यह कहानी शायद सच नहीं है।

न्यूटन के समय से पहले भी वैज्ञानिकों को गुरुत्वाकर्षण के बारे में कुछ ज्ञान था। वे जानते थे कि गुरुत्वाकर्षण के कारण ही चीज़ें नीचे की ओर गिरती हैं, तथा मकान और लोग-बाग अंतरिक्ष में नहीं छिटक जाते हैं।

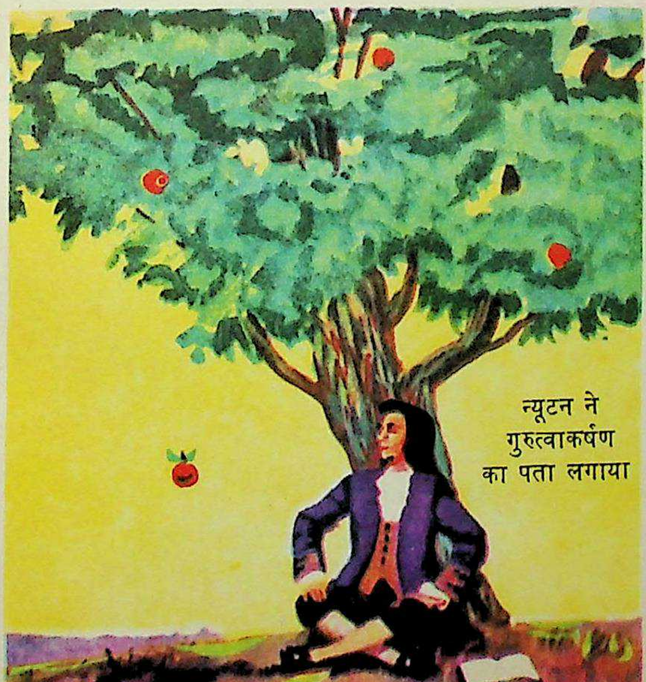

न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण का पता लगाया

न्यूटन इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संभव है पृथ्वी चन्द्रमा को अपनी ओर खींचे हुए हो और उसे अंतरिक्ष में भाग जाने से बचाए हो। और यह भी संभव है कि सूरज पृथ्वी को तथा दूसरे ग्रहों को अपनी ओर खींचे हुए हो और इस तरह इन्हें अपने पथ से विचलित होने से रोके हुए हो। कई साल तक वे इसी समस्या पर काम करते रहे और उन्हें अन्ततः पता चला कि उनका विचार ठीक था। फिर उन्होंने गुरुत्वाकर्षण के बारे में एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी।

न्यूटन ने और भी कई खोजें कीं। इनमें से कुछ प्रकाश के बारे में थीं। उदाहरण के लिए उन्होंने यह पता लगाया कि इन्द्रधनुष में जितने रंग पाए जाते हैं वे सभी सूर्य के प्रकाश में होते हैं। सूर्य के प्रकाश का कुछ अध्ययन न्यूटन ने साबुन के झाग उठाकर उनके रंगों का निरीक्षण करके किया। उनके पड़ोसी एक जवान आदमी को घंटों झाग उठाने में लगा देखकर हैरानी में पड़ जाते थे।

न्यूटन ने ग्रहों और नक्षत्रों के बारे में और अधिक बातों का पता लगाना चाहा। लेकिन वे उन दूरबीनों से सन्तुष्ट नहीं थे जो उस युग में मिलती थीं। एक अच्छी दूरबीन प्राप्त करने के लिए उन्होंने एक नये प्रकार की दूरबीन का आविष्कार किया। यह परावर्ती दूरबीन (Reflecting Telescope) थी। इससे आकाश के बारे में कई नई बातों का पता लगाने में उन्हें बहुत सहायता मिली।

परमाणु (ATOMS) : संसार में लाखों ही चीज़ें हैं। हर चीज़ दूसरी चीज़ से चाहे कितनी ही भिन्न क्यों न हो, पर कुल मिलाकर संसार की हर चीज़ कोई सौ सरल पदार्थों से मिलकर ही बनी है। इन सरल पदार्थों को हम मूलतत्त्व (Elements) कहते हैं। मिसाल के तौर पर लोहा एक मूलतत्त्व है। तांबा, जस्ता, पारा, सोना, चांदी, टीन, ऐल्युमिनियम—ये सब भी मूलतत्त्व ही हैं।

हर मूलतत्त्व बहुत ही छोटे-छोटे कणों से मिलकर बना है। मूलतत्त्व के सबसे छोटे कण को परमाणु या एटम कहते हैं।

परमाणु इतना छोटा होता है कि उसकी कल्पना करना भी मुश्किल है। 'हैं' की बिंदी की स्याही में जितने परमाणु हैं, इतने दुनिया में आदमी नहीं हैं। एक बूंद पानी में इतने परमाणु होते हैं कि आप हज़ारों साल में भी उनकी गिनती नहीं कर पाएंगे। परमाणु इतने छोटे होते हैं कि शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शियों से भी उन्हें नहीं देखा जा सकता। परमाणुओं के बारे में हमें जितनी भी जानकारी मिली है वह महज़ इस बात से मिली है कि वे काम कैसे करते हैं।

दुनिया में लाखों ही तरह की चीज़ें हैं, तो मात्र इस कारण कि अलग-अलग तरह के परमाणु आपस में अलग-अलग तरह से मिल सकते हैं। मिसाल के तौर पर ऑक्सीजन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

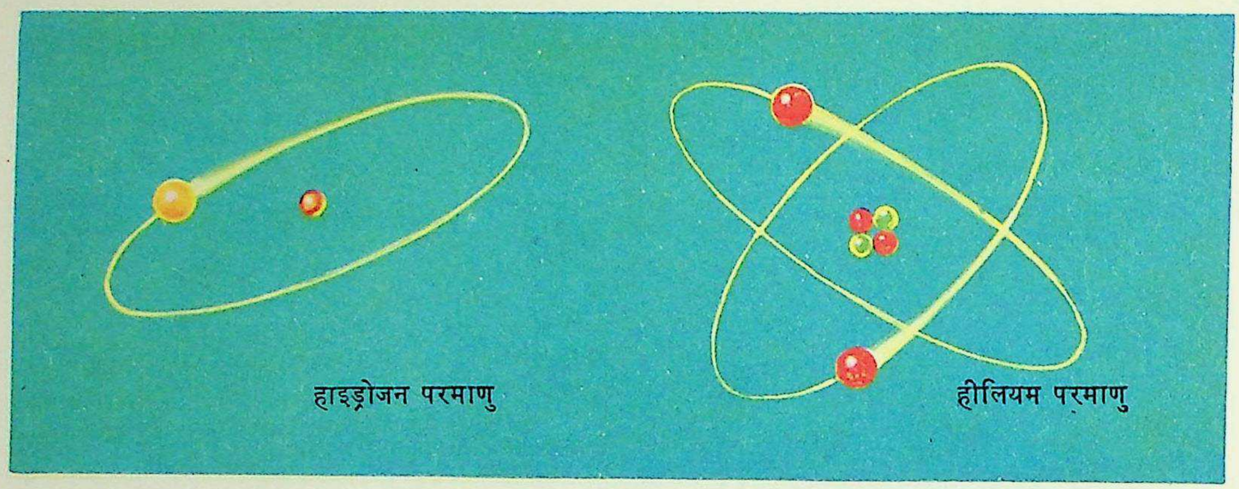

के परमाणु हाइड्रोजन के परमाणुओं के साथ मिलकर पानी बना सकते हैं। लेकिन ऐसा वे एक निश्चित अनुपात में मिलकर ही कर सकते हैं। एक और अनुपात में आपस में मिलकर ऑक्सीजन और हाइड्रोजन के परमाणु एक दूसरी चीज़ भी बना सकते हैं, जिसका नाम हाइड्रोजन पर ऑक्साइड (Hydrogen Peroxide) है।

परमाणु खुद ही इतने छोटे होते हैं कि उनसे भी ज़्यादा छोटे कणों के होने की बात सोची भी नहीं जा सकती। लेकिन बात यही है। स्वयं परमाणु और भी ज़्यादा छोटे-छोटे कणों से मिलकर बने हैं। हर परमाणु का एक केन्द्र या नाभिक (Nucleus) होता है। हर परमाणु के नाभिक में एक या अधिक कण होते हैं। नाभिक के इन कणों को प्रोटॉन (Protons) कहते हैं। हाइड्रोजन को छोड़कर शेष सभी मूलतत्त्वों के नाभिकों में प्रोटॉनों के अलावा न्यूट्रॉन (Neutrons) नामक कण भी होते हैं।

लेकिन यह तो नाभिक के कणों की बात हुई। परमाणु में और कण भी होते हैं। नाभिक के चारों ओर इलेक्ट्रॉन (Electrons) नामक कण लगातार घूमते रहते हैं।

परमाणु कभी स्थिर या अचल नहीं रहते। वे लगातार चलते—गति करते—रहते हैं। अपनी इस गति के दौरान वे आपस में लगातार टकराते रहते हैं। टक्कर के फलस्वरूप कोई परमाणु वापस उछल जाता है, कोई मुड़ जाता है, तो कोई फिर भी सीधा ही बढ़ता चला जाता है।

कुछ विरल मूलतत्त्वों के परमाणु स्वयं ही टूटते भी रहते हैं। लेकिन इस तरह टूटकर वे नष्ट नहीं हो जाते—वे बदल जाते हैं। होता यह है कि इन परमाणुओं के कुछ कण उनसे निकल जाते हैं। इसके साथ ही ये परमाणु ऊर्जा—काम करने की शक्ति—भी देते हैं। आम तौर पर यह ऊर्जा ताप या प्रकाश के रूप में ही होती है। इस प्रकार के मूलतत्त्वों को रेडियोएक्टिव कहते हैं। यूरेनियम, रेडियम, थोरियम—ये रेडियोएक्टिव मूलतत्त्वों के उदाहरण हैं।

कुछ वर्ष हुए, वैज्ञानिकों ने परमाणुओं को कृत्रिम रूप से खंडित करने और उनसे ऊर्जा प्राप्त करने का भी एक तरीका निकाल लिया। इसके लिए उन्होंने 'परमाणु-भंजक' (Atom Smashers) नामक मशीनों का उपयोग किया। इन मशीनों में परमाणुओं के भागों को किसी परमाणु के नाभिक पर इतने ज़ोरों से फेंका जाता है कि नाभिक फट जाता है। परमाणुओं के विखंडन को परमाणु-विभंजन (Atomic Fission) कहते हैं।

परमाणु का विखंडन करने का तरीका मालूम कर

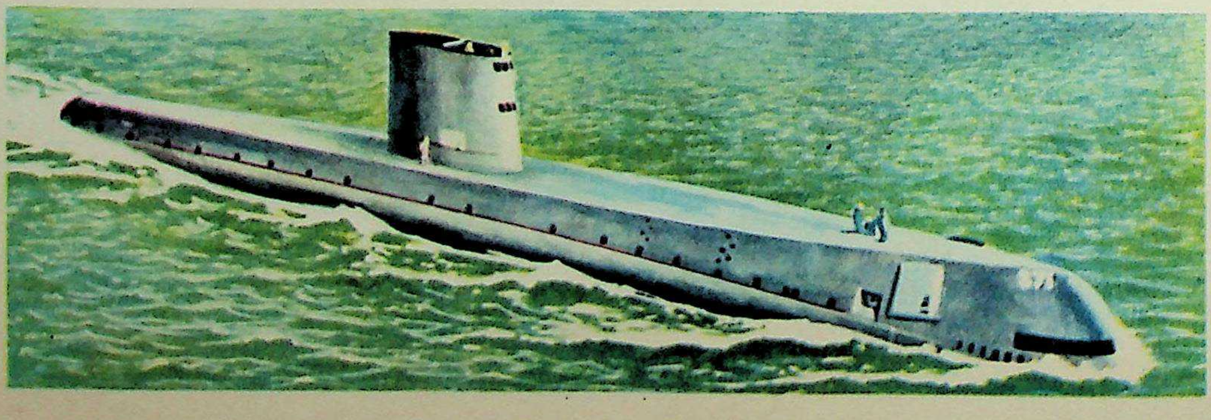

संसार की पहली परमाणु-चालित पनडुब्बी, 'नॉटिलस'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेने के बाद वैज्ञानिकों ने इस बात का पता लगाया कि एक परमाणु के विखंडन का अन्य परमाणुओं का विखंडन आरंभ करने के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाए। अर्थात् उन्होंने यह पता लगाया कि शृंखलित क्रिया किस प्रकार आरंभ की जाए। इसीके कुछ बाद परमाणु बम बना। जब परमाणु बम फटता है, तो उसके कई परमाणु खंडित हो जाते हैं। उनसे जो ऊर्जा मुक्त होती है, उससे भयानक विनाश होता है।

परमाणु-विखंडन में परमाणु का नाभिक खंडित होता है। इसी कारण परमाणु-ऊर्जा को नाभिकीय ऊर्जा भी कहते हैं।

अब वैज्ञानिकों ने इस बात का भी पता लगा लिया है कि परमाणुओं के विखंडन को किस प्रकार नियंत्रित किया जाए। उन्होंने परमाणु-विखंडन से सतत ऊर्जा प्राप्त करने के तरीके निकाल लिए हैं। इस ऊर्जा को मनुष्य अपने कामों में ला सकता है। सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमरीका, तथा कुछ अन्य देशों में परमाणु-ऊर्जा से बिजली पैदा की जा रही है और उससे कल-कारखाने चल रहे हैं। भारत में परमाणु शक्ति की दिशा में बहुत अधिक प्रगति हुई है। भारत परमाणु शक्ति की दृष्टि से एशिया में सबसे आगे है। हाल ही में तारापुर में परमाणु-चालित बिजलीघर भी खुल गया है। कुछ देशों में परमाणु-ऊर्जा से पानी के जहाज़ों और पनडुब्बियों को भी चलाया जा रहा है।

परमाणु-ऊर्जा-संबंधी अधिकतर प्रयोगों में यूरेनियम का उपयोग किया गया था। अब वैज्ञानिकों ने हाइड्रोजन के परमाणुओं के संगलन (मिलने) द्वारा भी परमाणु-ऊर्जा उत्पन्न करने का ढंग निकाल लिया है। सूर्य की ऊर्जा परमाणु-संगलन (Atomic Fusion) द्वारा ही उत्पन्न होती है। हाइड्रोजन बम की विनाशक शक्ति का रहस्य भी परमाणु-संगलन ही है। लेकिन अभी वैज्ञानिक इसे नियंत्रित करके शांतिपूर्ण कार्यों में लगाने में सफल नहीं हो पाए हैं। इसमें शक नहीं कि इसमें जल्दी ही सफलता मिल जाएगी।

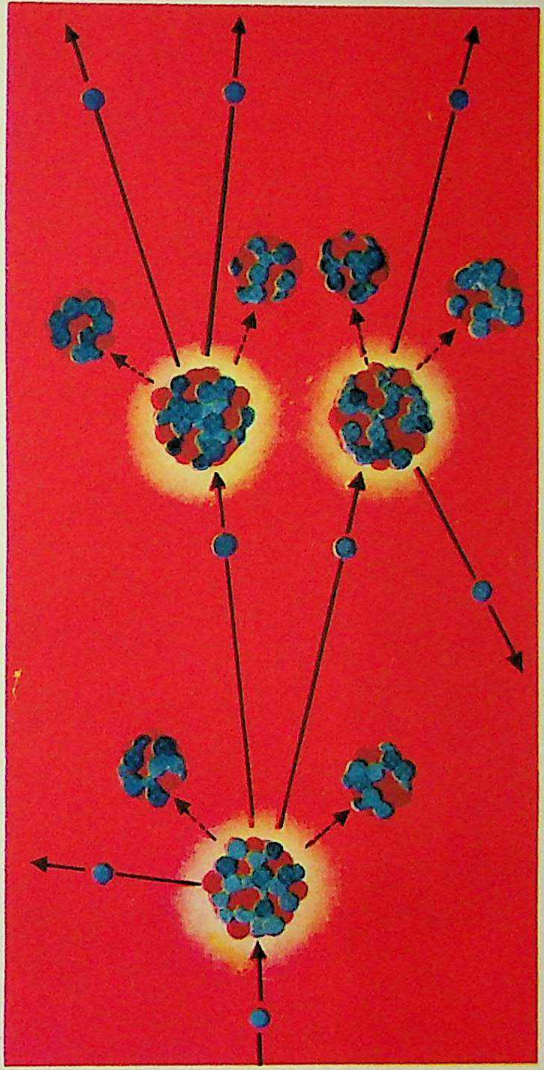

यूरेनियम परमाणु भी गेंदों से भरे हुए चूहेदान जैसा ही तुनकमिज़ाज होता है। खंडित होते हुए एक परमाणु के कण दूसरे परमाणुओं पर आघात कर उन्हें भी खंडित कर देते हैं। फिर उनके कण अन्य परमाणुओं पर आघात करते हैं। यह सिलसिला तेज़ी से फैलता जाता है।

मान लीजिए कि एक कमरे में टेबल टेनिस की गेंदों से भरे चूहेदान भरे हुए हैं। अब अगर कहीं एक पिंजरे का खटका चल पड़े, तो उसकी गेंदें उछल पड़ेंगी और कुछ दूसरे चूहेदानों के खटकों को चला देंगी। तब और गेंदें छूटेंगी और वे कुछ और चूहेदानों के खटकों को चला देंगी।

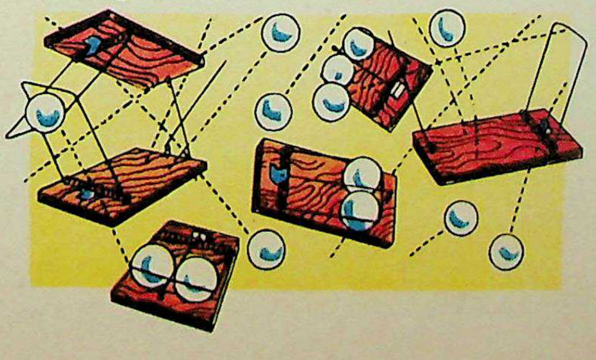

परमाणु अनंत और अक्षय ऊर्जा के आगार हैं। परमाणु-ऊर्जा की खोज ने मनुष्य जाति की प्रगति और उन्नति की नई-नई संभावनाएं पैदा कर दी हैं।

(देखें : अणु)

पशु-चिकित्सा (VETERINARY MEDICINE) : जब हम बीमार पड़ते हैं तो डाक्टर के पास जाते हैं। कई बार वह हमें अस्पताल जाने की सलाह देता है। इसी प्रकार अपने पालतू जानवर के बीमार पड़ने पर हम उसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डाक्टर या पशु-चिकित्सक के पास ले जा सकते हैं। वह चिकित्सक हमें अपने पशु को पशुओं के अस्पताल में दिखाने की सलाह दे सकता है। इस अस्पताल में जानवरों का उपचार होता है और उन्हें आवश्यकतानुसार दवा दी जाती है। पशु-चिकित्सा प्रशिक्षित चिकित्सकों द्वारा किया जानेवाला पशुओं का उपचार है।

पालतू पशुओं के ये अस्पताल आजकल आम हो गए हैं। यहां जो पशु-चिकित्सक काम करते हैं उन्हें कुछ जानवरों का इलाज करने के लिए विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है।

पशु-चिकित्सक पालतू जानवरों के इलाज के अलावा कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण काम भी करते हैं। किसानों और पशुपालकों के लिए तो पशु-चिकित्सा एक वरदान है। सूअर पालनेवाले किसान पशु-चिकित्सक को बुलाकर अपने सूअरों को टीके लगवा लेते हैं। टीका लगने के बाद सूअरों को घातक बीमारी, 'हैज़े' का खतरा नहीं रहता। गाय-भैंसें कभी-कभी तपेदिक का शिकार हो जाती हैं। लेकिन पालनेवालों को इसका पता भी नहीं चलता। इनका दूध पीना खतरे से खाली नहीं होता। दुग्ध-व्यवसायी पशु-चिकित्सकों को बुलाकर अपनी गाय-भैंसों की जांच कराते रहते हैं कि उनमें से किसीको तपेदिक तो नहीं हो गई है।

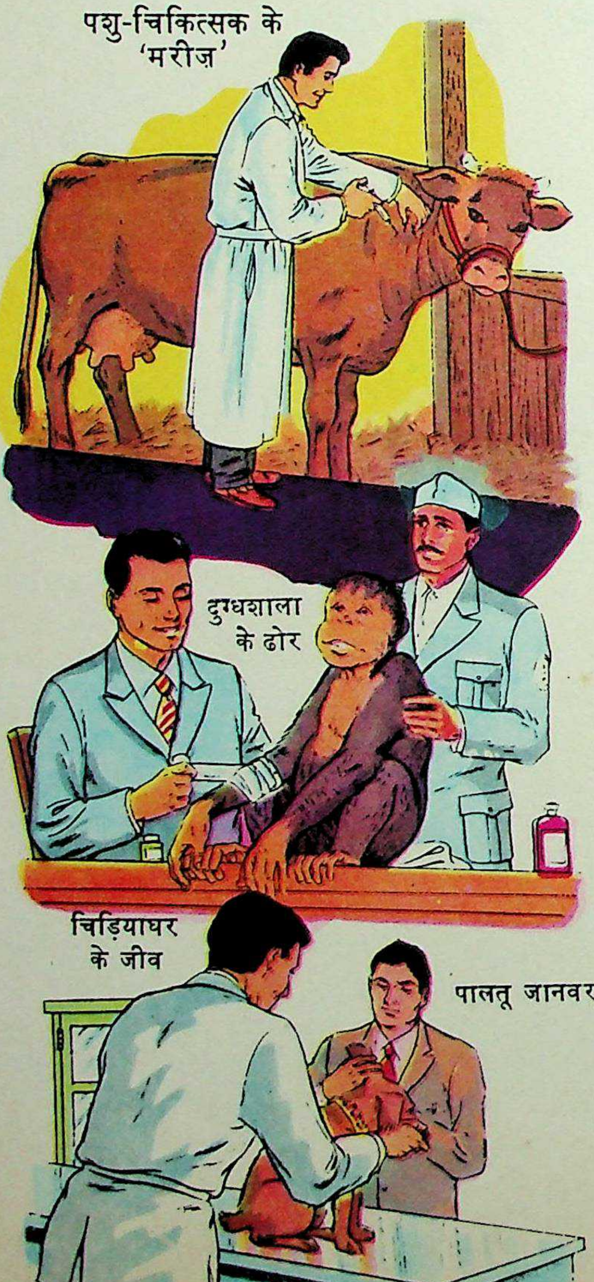

पास्चर, लुई (LOUIS PASTEUR 1822-1895) : सौ बरस पहले यह कोई नहीं जानता था कि बैक्टीरिया या जीवाणु क्या होते हैं। आज भी उन्हें बिना सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) के नहीं देखा जा सकता। पहले लोग यह नहीं समझते थे कि बैक्टीरिया अनेक रोगों का कारण है। बहुत-सी महामारियां इन्हींकी वजह से फैलती हैं। लुई पास्चर फ्रांसीसी रसायनशास्त्री था। उसने पहली बार यह पता लगाया कि कुछ बैक्टीरिया रोगों के कीटाणु होते हैं और वैज्ञानिक इन कीटाणुओं से फैलनेवाली महामारियों को रोक सकते हैं। उसने अपना अध्ययन खमीर से शुरू किया।

उन दिनों फ्रांस की भेड़ों में एक महामारी फैली थी। इस रोग के कारण भेड़ों को गिल्टियां निकल आती थीं और वे कुछ ही दिनों में मर जाती थीं। इस रोग को 'एन्थ्राक्स' कहते हैं। हज़ारों भेड़ें तथा अन्य पशु मरने लगे। महामारी से त्रस्त किसान सरकार के पास अपना दुखड़ा लेकर पहुंचे। इस समय तक पास्चर काफी प्रसिद्ध वैज्ञानिक हो गया था। फ्रांस की सरकार ने पास्चर से इस विषय में सहायता करने के लिए कहा। कुछ वैज्ञानिकों ने महामारी से मृत भेड़ों के शरीर में कुछ कीटाणु पाए थे। उन्हें सन्देह था कि हो न हो, ये कीटाणु ही महामारी की जड़ हैं। अधिकांश लोग यह बात मूर्खतापूर्ण समझते थे। वे यह मानने को तैयार नहीं थे कि इतने छोटे कीटाणु इतनी बड़ी भेड़ों या बड़े जानवरों की जान के गाहक हो सकते हैं।

पास्चर ने भी महामारी से मरी भेड़ों में कीटाणु पाए। वह कांच की नली में इसी रोग के ऐसे कीटाणु पैदा करने में सफल हो गया जो अत्यन्त क्षीण थे। उसने इन क्षीण कीटाणुओं का इंजेक्शन स्वस्थ पशुओं को लगाया। फिर सशक्त कीटाणुओं का इंजेक्शन कुछ दिन बाद दिया। इन पशुओं पर महामारी कोई असर नहीं कर सकी, हालांकि अन्य जानवर महामारी से मर रहे थे।

कुछ लोग अब भी यह विश्वास न करते थे कि इस तरह से इंजेक्शन दिए हुए जानवरों को रोग नहीं लगेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लुई पास्चर ने यह सिद्ध करके कि रोग कीटाणुओं से होते हैं, लोगों की रोग-संबंधी धारणा में क्रांति ला दी।

अपनी बात सिद्ध करने के लिए पास्चर ने एक प्रयोग पचास स्वस्थ भेड़ों पर किया। यह प्रयोग देखने के लिए जनता को बुलाया गया। पास्चर ने पचीस भेड़ों को क्षीण कीटाणुओं का इंजेक्शन लगाया। दो सप्ताह बाद पचास की पचास भेड़ों को सशक्त कीटाणुओं वाले इंजेक्शन लगाए गए। पास्चर ने यह पहले ही कह दिया था कि आधी, यानी पचीस भेड़ें मर जाएंगी और पचीस बच जाएंगी। दो दिन बाद बाड़े के चारों ओर भीड़ फिर इकट्ठी हुई। पचीस भेड़ें मर गई थीं और पचीस शान्ति से चर रही थीं। पास्चर ने इस तरह महामारी से पशुओं को बचाने का साधन खोज निकाला।

बाद में पास्चर ने कुत्ते के काटने का टीका भी निकाला। पागल कुत्ते के काटने से आदमी 'हाइड्रो-फोबिया' नाम की बीमारी से मर जाता है। इस बीमारी में आदमी पानी से डरता है। इस तरह बिना पानी के प्यास से तड़प-तड़पकर जान दे देता है। पास्चर ने पहले अपने प्रयोग पशुओं पर किए थे और उनमें उसे सफलता भी मिली थी। लेकिन आदमियों पर प्रयोग करते उसे डर लगता था। एक दिन पास्चर के पास एक छोटा बालक लाया गया, जिसे किसी पागल कुत्ते ने बुरी तरह काट लिया था। 'हाइड्रोफोबिया' का होना और उसके बाद बच्चे का मर जाना निश्चित था। पास्चर ने इलाज शुरू किया। बारह दिन तक हर रोज़ इंजेक्शन दिए जाते रहे। हर नया इंजेक्शन पहले इंजेक्शन के मुकाबले ज़्यादा बल-वान कीटाणुओं वाला होता था। इस बीच पास्चर ने रात में भी बहुत कम आराम किया। लेकिन बालक की जान बच गई। अन्त में पास्चर को निश्चय हो गया कि उसका टीका पागल कुत्ते के काटने के उपचार की सही औषधि है। वह सफल हुआ।

पास्चर का जन्म फ्रांस के डोल नामक कस्बे में हुआ, जहां उसके पिता चमड़ा कमाने का काम करते थे। उसके माता-पिता बड़े परिश्रमी किन्तु निर्धन थे। उन्होंने बहुत कष्ट सहकर अपने पुत्र को उच्च शिक्षा दिलाई थी। लेकिन उन्हें यह पता नहीं था कि पास्चर कभी फ्रांस का सबसे बड़ा वैज्ञानिक बनेगा। मृत्यु के पूर्व पास्चर का फ्रांस के लोगों ने बड़ा सम्मान किया। सन् 1888 में एक इन्स्टीट्यूट खोला गया जिसका नाम पास्चर के नाम पर रखा गया। इसमें वैज्ञानिक प्रयोगों और खोजों की आधुनिकतम सुविधाएं उपलब्ध की गईं। पास्चर ने जो काम शुरू किया उसे आज भी बहुत-से वैज्ञानिक अपने परिश्रम द्वारा आगे बढ़ा रहे हैं। दूध तथा अन्य पेय पदार्थों को खट्टे होने से बचाने के लिए इन्हें एक विशेष विधि से गर्म किया जाता है। यह विधि भी पास्चर ने निकाली थी। इसीलिए ऐसे दूध को 'पास्च-राइज़्ड' (पास्चरीकृत) कहते हैं।

पेरिस्कोप (PERISCOPE) : पेरिस्कोप का अर्थ है, 'चारों ओर देखना'। पेरिस्कोप की सहायता से, दीवार आदि जैसी रोकों के बावजूद, दूसरी ओर क्या हो रहा है, यह देखा जा सकता है। बहुत-से लोग मेले, तमाशों तथा परेड आदि में भी इसका उपयोग करते हैं। पनडुब्बी में पेरिस्कोप बड़े महत्त्व की चीज होती है। पनडुब्बी-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

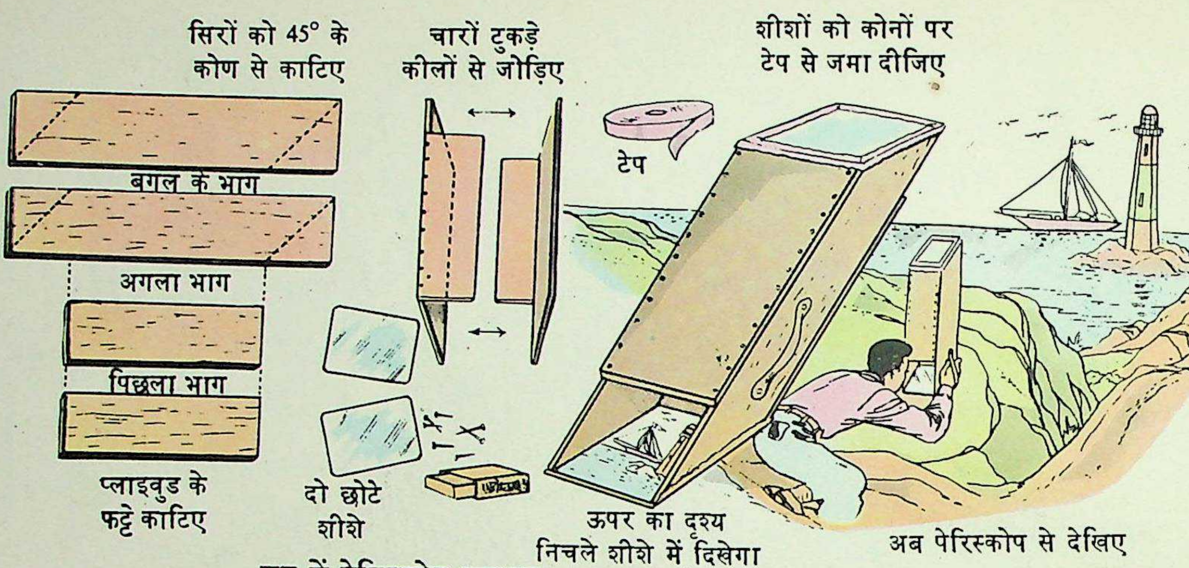

घर में पेरिस्कोप बनाइए

चालक अगर पानी के नीचे हों तो भी वे यह देख सकते हैं कि समुद्र की सतह पर क्या हो रहा है।

वैसे पेरिस्कोप बनाना बड़ा आसान है। इसके लिए एक नली के दोनों ओर खास ढंग से शीशे लगाने पड़ते हैं। शीशों को इस तरह लगाया जाना चाहिए कि ऊपर के शीशे की चीज़ें नीचे के शीशे पर दिखलाई पड़ें। ऐसा होने पर पेरिस्कोप से चीज़ें साफ दिखलाई पड़ेंगी।

लेकिन पनडुब्बी के पेरिस्कोप बड़े जटिल होते हैं। इनमें ऐसे विशेष शीशे होते हैं जिनसे दूर के जहाज़ों को भी साफ-साफ देखा जा सकता है। इन शीशों को 'प्रिज़्म' कहते हैं। इन पेरिस्कोपों की नली को छोटा या बड़ा किया जा सकता है। पनडुब्बी के पेरिस्कोप की नली इतनी लम्बी होती है कि उससे पानी के 44 फुट नीचे से भी यह देखा जा सकता है कि समुद्र की सतह पर कहां क्या हो रहा है।

प्रतिजैविक पदार्थ (ANTIBIOTICS) : सदियों से हम लोग फफूंद से परेशान रहे हैं। अचार के बर्तन में ज़रा सील पहुंची कि फफूंद लग गई, सब्ज़ी पड़ी रही कि उसमें फफूंद लग गई और चीज़ खाने लायक ही नहीं रही। फफूंद असल में एक तरह का बहुत ही नन्हा-सा पौधा है जो अचार, रोटी, सब्ज़ी, फल, चमड़े, कपड़े—सभी पर उग आता है और उन्हें बिगाड़ देता है।

बहुत बाद में जाकर वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि असल में फफूंद इतनी खराब चीज़ नहीं है। उन्होंने देखा कि फफूंद तो वास्तव में बड़ी उपयोगी चीज़ है और यह मनुष्य की कई तरह से सहायता करती है। फफूंद मृत पौधों और जंतुओं के अपक्षय में सहायता देती है और इस तरह भूमि की उर्वरता को कायम रखती है। उन्होंने पाया कि फफूंद के ऐसे ही कई और उपयोग भी हैं।

लेकिन बीसवीं सदी में जाकर वैज्ञानिकों को फफूंद के बारे में एक बहुत ही मार्के की जानकारी प्राप्त हुई कि फफूंद तो बड़ी जीवन-रक्षक भी है। फफूंद से हम आज कितनी ही चमत्कारी औषधियां प्राप्त करते हैं। इनमें से कुछ 'रामबाण औषधियां' जीवाणुओं से प्राप्त की जाती हैं। जीवाणुओं का मुकाबला करनेवाली इन औषधियों को सामूहिक रूप से प्रतिजैविक पदार्थ कहते हैं।

प्रतिजैविक पदार्थों की संख्या काफी बड़ी है और नित बढ़ती ही जाती है। सबसे पहले 1928 में पेनिसिलिन की खोज हुई। बाद में खोजे गए कुछ और प्रसिद्ध प्रतिजैविक पदार्थ हैं : स्ट्रेप्टोमाइसिन, ओरियोमाइसिन, टेरामाइसिन तथा क्लोरोमाइसिन। इन प्रतिजैविक पदार्थों की बदौलत आज पहले असाध्य समझी जानेवाली कितनी ही बीमारियों—न्यूमोनिया, मोतीझरा आदि का सामना करना संभव हो गया है, जिससे लाखों मनुष्यों की जान बचाई जा सकती है। इन प्रतिजैविक पदार्थों के कारण अब तो इन रोगों को हम खतरनाक तक नहीं मानते।

रोगों का सामना करने के अलावा, प्रतिजैविक पदार्थों के और भी कई उपयोग हैं। मांस के लिए पाले जानेवाले जानवरों की खूराक में कुछ प्रतिजैविक पदार्थों का मिश्रण देने से वे जल्दी बढ़ते हैं। ऐसी ही और बातें भी सामने आई हैं।

फिर भी प्रतिजैविक पदार्थों के उपयोग में बड़ी सावधानी की ज़रूरत है। डाक्टरों की राय और देख-रेख के बिना इनका उपयोग बिलकुल न किया जाना चाहिए।

प्रयोग (EXPERIMENTS) : इटली के प्रसिद्ध वैज्ञानिक गैलिलियो को प्रायः आधुनिक विज्ञान का जनक कहा जाता है। उसे यह नाम इसलिए दिया गया क्योंकि उसने वैज्ञानिकों को ज्ञान-प्राप्ति का एक नया मार्ग दिखलाया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था। उसने उन्हें पहली बार प्रयोग-विधि सिखाई।

प्रयोग का अर्थ है परीक्षण करना या करके देखना। आज हमें ऐसा लगता है मानो प्रयोग करना एकदम स्वाभाविक क्रिया हो। विज्ञान की कक्षाओं में लड़के-लड़कियां अनेक प्रयोग करते हैं। लेकिन गैलिलियो के ज़माने में ऐसा नहीं था। उस ज़माने के अधिकांश विद्वान मानते थे कि विभिन्न विज्ञानों के बारे में जो कुछ भी कहा जा सकता था वह प्राचीन विद्वान पहले ही कह गए हैं। विद्वान प्राचीन धारणाओं को परीक्षण की कसौटी पर नहीं कसते थे। स्वयं प्रयोग करके नई बातों का पता लगाने की कोशिश भी वे नहीं करते थे।

गैलिलियो ने कुछ प्राचीन धारणाओं को गलत सिद्ध कर दिखाया। उसने यह भी सिद्ध किया कि प्रयोगों द्वारा अनेक नई बातों का पता लगाया जा सकता है। आज विज्ञान की अनेक शाखाओं में प्रयोगों का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। कुछ प्रयोग ऐसे हैं जिन्हें विज्ञान की कहानी के मील के पत्थर कहा जा सकता है। गिरते पिंडों के बारे में गैलिलियो के प्रयोग, रोगों के जीवाणुओं पर पास्चर के प्रयोग और आनुवंशिकता पर मेंडेल द्वारा किए गए प्रयोग इसी कोटि के हैं।

प्रयोगों में पूर्ण सावधानी बरतने पर ही सफलता मिल सकती है। एक ही बार के प्रयोग पर अधिक निर्भर रहना भी गलत है। वैज्ञानिक अपने महत्त्वपूर्ण प्रयोग को बार-बार दुहराता है और सतर्कता के साथ अपने परिणामों का रिकार्ड रखता चलता है।

आजकल नई दवाओं के प्रयोगों में सबसे अधिक सतर्कता बरती जाती है। अखबारों में अक्सर इस तरह की खबरें निकलती रहती हैं कि अमुक रोग की अमुक नई और रामबाण दवा ईजाद कर ली गई है। लेकिन

खाद्य पदार्थ में स्टार्च का पता लगाने के लिए उसमें आयोडीन की कुछ बूंदें डालिए। यदि स्टार्च होगा तो उसका रंग बैंगनी हो जाएगा।

प्रायः हर बार इस बात का भी उल्लेख रहता है कि बाज़ार में आने से पहले कई महीनों तक उसके परीक्षण किए जाएंगे।

आजकल चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में होनेवाले प्रयोगों का महत्त्व सर्वोपरि है। इसके बाद परमाणुशक्ति और अंतरिक्ष-यात्रा की दिशा में होनेवाले प्रयोगों का विशेष महत्त्व है।

खाद्य पदार्थ में शर्करा का पता लगाने के लिए उसमें फेलिंग का घोल 'ए' और 'बी' मिलाइए और उसे गरम कीजिए। शर्करा के मौजूद रहने पर उस पदार्थ का रंग नारंगी हो जाएगा।

प्राणिविज्ञान (ZOOLOGY) : प्राणिविज्ञान में जानवरों के बारे में अध्ययन किया जाता है। जानवरों की लाखों किस्में हैं, और उनके बारे में अध्ययन करने को बहुत सारी बातें हैं। नीचे कुछ ऐसे प्रश्न दिए गए हैं जिनका उत्तर देने की कोशिश प्राणिविज्ञान का अध्ययन करनेवाले वैज्ञानिक करते हैं :

कौन-कौन-से जानवर सजातीय हैं?

विभिन्न जानवरों के शरीर की रचना कैसी है?

विभिन्न प्रकार के जानवर अपने को कैसे जीवित रखते हैं?

विभिन्न जानवर विश्व के किन भागों में पाए जाते हैं?

जहां वे रहते हैं, वहां रहने के लिए वे किस तरह उपयुक्त हैं?

जानवर किसी खास तरह का आचरण क्यों करते हैं?

वे सन्तान कैसे पैदा करते हैं?

विभिन्न जानवरों को कौन-कौन-सी बीमारियां होती हैं?

हम अपने पालतू जानवरों की देखभाल अच्छी से अच्छी तरह कैसे कर सकते हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम जानवरों की और भी अच्छी और नई नस्लें कैसे विकसित कर सकते हैं ?

आज के जानवरों का विकास प्राचीन काल के जानवरों से कैसे हुआ ?

प्राणिविज्ञान की अनेक शाखाएं हैं। यह देखकर कि प्राणिविज्ञान में जानवरों के संबंध में कितनी प्रकार की जानकारियां प्राप्त करनी होती हैं, हम यह आसानी से समझ सकते हैं कि इसमें इतनी शाखाओं की आवश्यकता क्यों पड़ती है।

जो वैज्ञानिक प्राणिविज्ञान का अध्ययन करते हैं उन्हें प्राणिवैज्ञानिक कहा जाता है। कोई भी वैज्ञानिक जानवरों के बारे में सभी बातों की जानकारी प्राप्त करने की कोशिश नहीं करता। वह अपनी रुचि के अनुसार कुछ जानवरों या समस्याओं को चुन लेता है। एक प्राणिवैज्ञानिक अपना सारा जीवन एक घोंघे के अध्ययन में बिता सकता है, तो दूसरा पशुओं के किसी

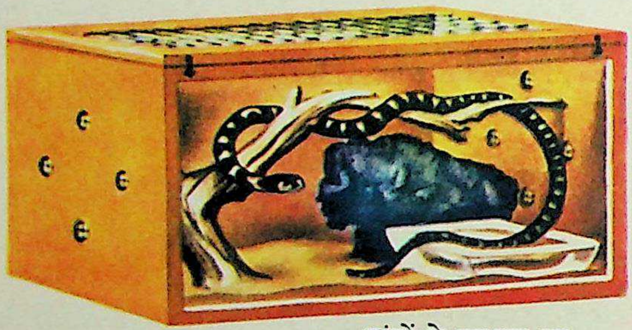

सांपों के स्वभाव का अध्ययन करने के लिए उन्हें पिंजड़ों में बंद करके रखते हैं।

कैमरे का बटन दबाकर जानवर खुद अपना चित्र ले सकते हैं।

रोग के अध्ययन में बिता सकता है। सभी वैज्ञानिकों के लिए आज खोज और अध्ययन के लिए अनेक जीव हैं, और उनकी अनेकों समस्याएं हैं।

प्रीस्टले, जोज़ेफ (JOSEPH PRIESTLEY 1733-1804) : प्रायः सभी लोग जानते हैं कि हमारे चारों ओर जो हवा है, उसमें ऑक्सीजन गैस है। ज़िन्दा रहने के लिए ऑक्सीजन ज़रूरी है। हमारी पृथ्वी पर ऑक्सीजन बहुत बड़ी मात्रा में है। लेकिन आश्चर्य की बात है कि ऑक्सीजन के अस्तित्व का पता केवल दो सौ साल पहले लगा। सन् 1774 में जोज़ेफ प्रीस्टले ने इस गैस का पता लगाया।

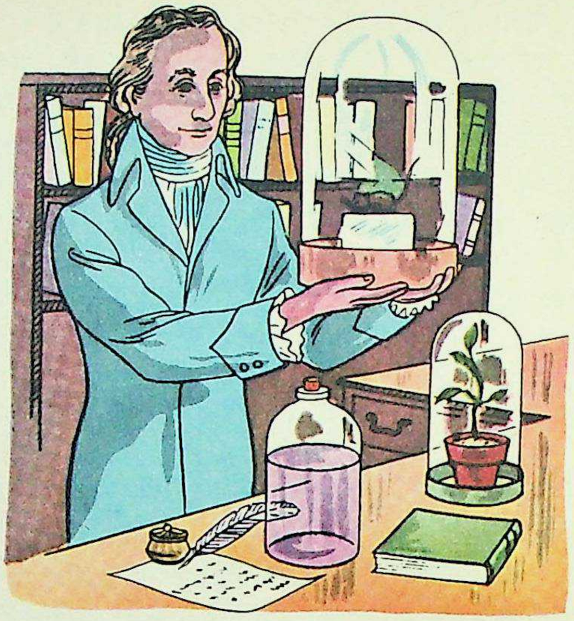

ऑक्सीजन के कारण चूहा ज्यादा चुलबुला हो जाता है।

प्रीस्टले ने ऑक्सीजन का पता एक प्रयोग के दौरान लगाया। उसने देखा कि अगर चूहे को ऑक्सीजन में रखा जाए तो वह बड़ा उछलता-कूदता है। अगर ऑक्सीजन में मोमबत्ती रख दी जाए तो उसका प्रकाश बड़ा चमकीला हो उठता है। प्रीस्टले ने स्वयं उसमें सांस ली तो उसे लगा कि सारे शरीर में उत्साह की लहर-सी दौड़ गई है। ऑक्सीजन का पता पारे के लाल ऑक्साइड को गर्म करते वक्त लगा।

पहले सब गैसें हवा कहलाती थीं। प्रीस्टले ने ऑक्सीजन का पता लगाने के बाद इसे 'पूर्ण हवा' की संज्ञा दी। लेकिन प्रीस्टले को शायद यह ज्ञात न था कि ऑक्सीजन अति शीघ्र जल पड़नेवाली गैस है। बीस साल बाद एक फ्रैंच वैज्ञानिक लॉवाज़िए ने यह मालूम किया कि ऑक्सीजन शीघ्र जल पड़नेवाली गैस है। उसीने इसका नाम ऑक्सीजन रखा।

प्रीस्टले वैज्ञानिक नहीं था। वह तो पादरी था। हवा के विभिन्न प्रयोग करना उसका शौक था। उसने ऑक्सीजन के अलावा अन्य बहुत-सी गैसों का पता लगाया। इनमें 'हंसानेवाली गैस' भी शामिल है। इसका प्रयोग दांतों के डाक्टर मरीज़ों पर करते हैं। प्रीस्टले ने ऐसे वैज्ञानिक उपकरण भी बनाए जिनका प्रयोगशालाओं में गैसें इकट्ठी करने के लिए उपयोग किया जाता है। इस शौक ने प्रीस्टले को प्रसिद्ध कर दिया।

फलित ज्योतिष (ASTROLOGY) : यह वह विद्या है जिसमें नक्षत्रों तथा ग्रहों का अध्ययन करके यह देखा जाता है कि मनुष्य के भाग्य पर उनका क्या प्रभाव पड़ेगा। अपने देश में तो आज भी फलित ज्योतिष पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाखों-करोड़ों लोगों का अंधविश्वास-सा है। बच्चे के पैदा होते ही उसकी जन्मपत्री बनवाई जाती है। ज्योतिषी लोग ग्रहों की स्थिति का विचार करके बालक की कुण्डली बनाते हैं और उसके भविष्य के बारे में भविष्यवाणियां करते हैं। और बालक के भविष्य के बारे में ही क्यों, ज्योतिषी लोग तो युद्ध और शांति, वाणिज्य-व्यापार, वर्षा और सूखा, अकाल और पैदावार—हर चीज़ और बात के बारे में भविष्यवाणी करते रहते हैं।

आज बहुत-से लोग ऐसे भी हैं जिनका फलित ज्योतिष में बिलकुल विश्वास नहीं है। वे कहते हैं कि ग्रह और नक्षत्र मनुष्य के भाग्य पर कोई प्रभाव नहीं डालते। उनके अनुसार ज्योतिषियों की भविष्यवाणियां कोरी अटकलें हैं—कुछ ठीक बैठ जाती हैं, ज़्यादातर गलत रहती हैं।

राशिचक्र

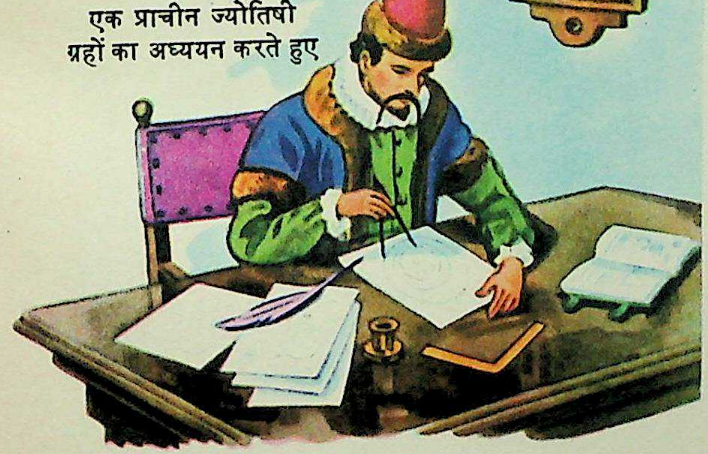
एक प्राचीन ज्योतिषी ग्रहों का अध्ययन करते हुए

पुराने ज़माने में फलित ज्योतिष का बहुत ज़ोर था। भारत ही क्यों, यूरोप तक में राजाओं के दरबारों में ज्योतिषी रहते थे।

फाब्रे, जां हेनरी (JEAN HENRI FABRE 1823–1915) : प्रसिद्ध जीवशास्त्री जां हेनरी फाब्रे शुरू से ही कीड़े-मकोड़ों में रुचि लेने लगा था। वह अभी स्कूल में पढ़ने योग्य भी न हो पाया था कि दूसरे बच्चों की तरह पालतू कुत्तों, बिल्लियों या खरगोशों की अपेक्षा उसे कीड़े-मकोड़ों में ज़्यादा मज़ा आने लगा। बुढ़ापे में भी वह चींटियों के किसी बिल या मधुमक्खियों के छत्ते को ताकता हुआ घंटों बैठा रहता था। उसके पड़ोसियों को यह सब बेतुका लगता। लेकिन इसी प्रकार मनोयोगपूर्वक अध्ययन करके फाब्रे ने इतना कुछ सीख लिया कि वह ख्याति अर्जित कर सका।

फाब्रे का जन्म फ्रांस के सेंट लियों नामक गांव में हुआ था। उसका परिवार निर्धन था। जब वह बड़ा हुआ तो नीबू बेचकर अपना स्कूल का खर्च चलाने लगा। बाद को उसने विश्वविद्यालय में विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के लिए एक छात्रवृत्ति अर्जित कर ली। उसने अपना पाठ्यक्रम बहुत जल्दी ही पूरा कर लिया और कुल 19 वर्ष की अवस्था में वह अध्यापक हो गया। उसने कीड़ों के अध्ययन पर अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमें से 'कीड़ों का सामाजिक जीवन', 'हमारे नन्हे सहायक' और 'मक्खी का जीवन' सबसे प्रसिद्ध हैं।

80 साल का होने से पहले किसीने फाब्रे के कार्य पर विशेष ध्यान नहीं दिया। 80 साल के बाद उसे बहुत सम्मान मिला। मृत्यु के कुछ वर्ष पहले उसकी वैज्ञानिक सेवाओं के उपलक्ष्य में फ्रांस सरकार ने उसकी पेंशन बांध दी थी।

फारेनहाइट, गैब्रील डेनियल (GABRIEL DANIEL FAHRENHEIT 1686–1736) : हम अक्सर कहते हैं कि ताप-क्रम इतने फारेनहाइट है। लेकिन हममें से बहुत कम लोग जानते हैं कि फारेनहाइट नाम का एक वैज्ञानिक हो चुका है जिसने इस पैमाने का आविष्कार किया और थर्मा-मीटर या तापमापी में पारे का प्रयोग शुरू किया। फारेन-हाइट शब्द का बार-बार प्रयोग करके हम अनजाने ही इस वैज्ञानिक के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाशित करते रहते हैं।

फास्फोरस (PHOSPHORUS) : कुछ ऐसे पदार्थ होते हैं जो अन्य चीज़ों की अपेक्षा जल्दी आग पकड़ लेते हैं। फास्फोरस भी उन्हीं चीज़ों में से एक है जो शीघ्र ही जल उठती हैं। इसे पानी या ऐसे ही किसी तरल पदार्थ में रखना पड़ता है जिससे यह जल न उठे। अपने शीघ्र जल उठने के गुण के कारण ही दियासलाइयों में भी फास्फोरस काम में आता है।

फास्फोरस जगत् के उन सौ से कुछ ही अधिक मूलतत्त्वों में से एक है जिनसे सारे पदार्थ बने हैं। फास्फोरस कभी शुद्ध तत्त्व के रूप में प्रकृति में नहीं मिलता। यह हमेशा मिश्रित होता है।

विशुद्ध फास्फोरस से सलाइयां बनाई जाती हैं। देखने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

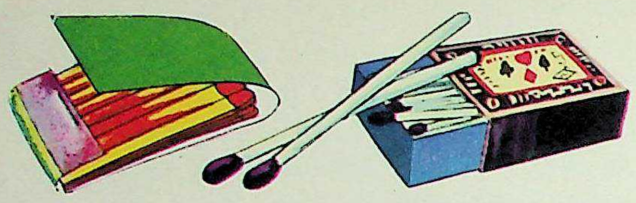

दियासलाई फॉस्फोरस के ही कारण जलती है।

में यह पीले मोम जैसा होता है। लेकिन यह साफ करके लाल रंग का भी किया जा सकता है।

लाल फास्फोरस ज़हरीला नहीं होता। पीला ज़हरीला होता है। पहले दियासलाई के कारखानों में काम करनेवाले मज़दूरों को पीले फास्फोरस को छूते रहने की वजह से एक भयानक रोग हो जाता था। बाद में कारखानों के मालिकों को पता चला कि अगर लाल फास्फोरस काम में लिया जाए तो मज़दूरों को रोग से बचाया जा सकता है। यही फास्फोरस दियासलाइयों के बनाने में काम आता है।

वैज्ञानिकों को फास्फोरस का पिछले तीन सौ साल से पता है। एक वैज्ञानिक को इसका पता तब चला जब वह धातुओं को सोना बना सकनेवाली किसी वस्तु की खोज कर रहा था।

पौधों और प्राणियों, दोनों को फास्फोरस की ज़रूरत रहती है। पौधों को यह ज़मीन से मिल जाता है। प्राणियों को भोजन से मिलता है। फास्फोरस की हमें भी आवश्यकता रहती है। हड्डियों और दांतों को मज़बूत बनाने के लिए फास्फोरस चाहिए।

ज़मीन को उपजाऊ बनाए रखने के लिए किसानों को फास्फोरस की खाद काम में लानी पड़ती है। यह खाद या तो चट्टानी फास्फोरस की या फिर हड्डियों के चूरे की होती है।

कुछ क्षेत्रों में चट्टानों में फास्फोरस बहुत होता है। कुछ नदियों और पोखरों में पानी काला होता है। पानी का यह कालापन फास्फोरस के कारण होता है।

फास्फोरस का अर्थ 'प्रकाश देनेवाला' है। इस पदार्थ का नाम फास्फोरस इसलिए पड़ा कि अंधेरे में और नम हवा लगने पर इसमें से एक हरियाली लिए हुए सफेद चमक निकलती है।

फुल्टन, रॉबर्ट (ROBERT FULTON 1765-1815) : 17 अगस्त, 1807 की बात है। अमरीका में हडसन नदी के किनारे एक भीड़ जुटी थी। यह भीड़ एक नाव 'क्लेरमोंट' को नदी पर रवाना होते देखने के लिए जमा हुई थी। इस नाव में पालों के स्थान पर भाप से चलनेवाला एक इंजन लगा था। यह सूझ रॉबर्ट फुल्टन के दिमाग की थी, और उसीने इसे बनाया था। किसीको आशा नहीं थी कि यह प्रयोग सफल होगा। फुल्टन के कानों में इस प्रकार के उपहासजनक शब्द पड़े : "हमारे लिए उत्तरी ध्रुव का एक टुकड़ा लेते आना।" लेकिन जब नाव नदी के पानी को चीरती हुई अपने मार्ग पर चल पड़ी तो भीड़ दम साधे उसे देखती रह गई। रॉबर्ट फुल्टन के प्रयत्नों से अंततः स्टीमबोट के प्रयोग में सफलता मिल ही गई।

फुल्टन का जन्म पेंसिलवेनिया में हुआ था। बचपन में उसे चित्रकला का शौक था। उसने इंग्लैंड जाकर प्रसिद्ध चित्रकार बेंजामिन वेस्ट से चित्रकला सीखने का निश्चय किया।

वेस्ट के संपर्क में रहने से उसका परिचय कुछ ऐसे लोगों से हुआ कि वह नावों में दिलचस्पी लेने लगा। उसने एक स्टीमबोट का निर्माण किया और पेरिस के निकट उसका परीक्षण किया। वह असफल रहा। उसने दूसरी नाव बनाई और दोबारा परीक्षण किया। दूसरी बार भी उसे सफलता नहीं मिली। तब फुल्टन अमरीका लौट गया और वहां उसने 'क्लेरमोंट' का निर्माण किया।

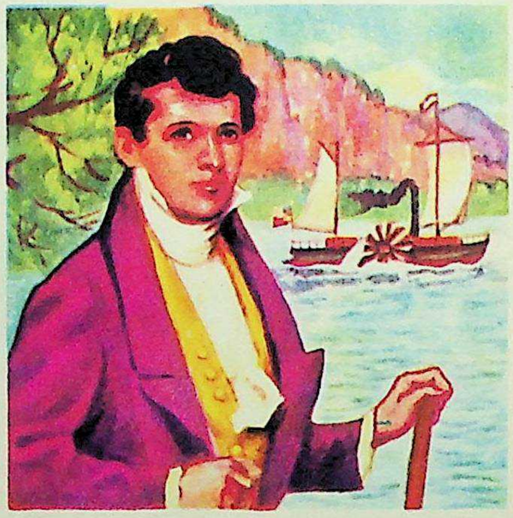

फुल्टन का पहला स्टीमबोट—'क्लेरमोंट'

चूंकि क्लेरमोंट की गणना सबसे पहले के सफल स्टीमबोटों में की जाती है, इसलिए कभी-कभी फुल्टन को स्टीमबोट का आविष्कर्ता भी कहा जाता है।

फैराडे, माइकेल (MICHAEL FARADAY 1791-1867): माइकेल फैराडे के पूर्व विद्युत्-धारा केवल बिजली की बैटरियों से ही उत्पन्न की जा सकती थी। बैटरी से प्राप्त होनेवाली धारा बहुत सशक्त नहीं थी, और उससे वे सब काम नहीं लिए जा सकते थे जो आज बिजली कर रही है।

सन् 1831 में फैराडे ने एक महान आविष्कार किया। उसने पता लगाया कि यदि नाल-चुम्बक के दोनों छोरों के बीच के चुम्बकीय क्षेत्र में किसी तार की कुंडली को ले जाएं तो उसमें विद्युत् प्रवाहित होने लगती है। तार-कुंडली को अधिक मोड़ देकर और अपेक्षाकृत अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी प्रयोगशाला में फैराडे

पहला जेनरेटर

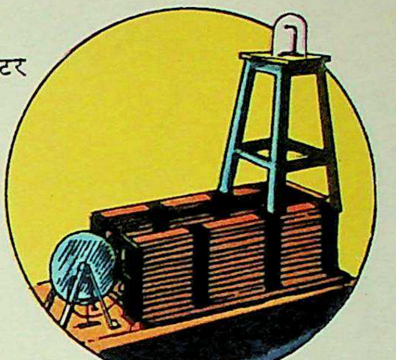

फैराडे के पहले जेनरेटर में एक पीतल का चक्का नाल-चुम्बक के सिरों के बीच घूमता था। इससे एक मंद विद्युत्-धारा प्रवाहित होती थी।

शक्तिशाली चुम्बकों का प्रयोग करके इस विद्युत्-धारा को अधिक सशक्त बनाया जा सकता है। आज हमें बिजली प्रदान करनेवाले सभी जेनरेटर चुम्बकों और तार-कुंडलियों से ही बने हैं।

फैराडे ने यह भी सिद्ध किया कि यदि किसी विद्युत्मय तार को चुम्बकीय क्षेत्र में रखा जाए तो उस तार में गति उत्पन्न होगी। उसके इस आविष्कार के आधार पर ही आगे चलकर पावर मोटरों का निर्माण संभव हुआ।

ये दोनों आविष्कार इतने महत्त्वपूर्ण थे कि फैराडे को प्रायः विद्युत्-युग का पिता कहा जाता है। फैराडे ने रसायन के क्षेत्र में भी आविष्कार किए। उसने बेंज़ीन का भी आविष्कार किया। आज जिन रंगों, गंधों और विस्फोटकों का प्रयोग होता है, उनमें से बहुतों का उत्पादन बेंज़ीन के आविष्कार से ही शुरू हुआ।

हमें यह जानकर फैराडे की उपलब्धियों पर और भी आश्चर्य होता है कि स्कूल में उसकी पढ़ाई बहुत कम हुई थी। उसका जन्म सन् 1791 में न्यूइंगटन (लंदन) में हुआ था। फैराडे का पिता लुहार था और इतना गरीब था कि उसे स्कूल में पढ़ने नहीं भेज सकता था। इसलिए लड़कपन से ही वह एक जिल्दसाज़ की दूकान पर काम करने लगा। इन्हीं दिनों उसकी रुचि वैज्ञानिक पुस्तकों में हो गई।

एक दिन नौजवान फैराडे ने प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर हम्फ्रे डेवी का व्याख्यान सुना। उसने बड़े ध्यान से उस व्याख्यान की सब महत्त्वपूर्ण बातें लिख लीं। अपनी दूकान पर वापस आकर उसने डेवी के मत की पुष्टि में कुछ चित्र बनाए। तब उसने अपने वे नोट और चित्र एक पुस्तक में संकलित किए और उसे सर डेवी के पास भेज दिया। पुस्तक के साथ उसने वैज्ञानिक विषयों में अपनी अभिरुचि का ज़िक्र करते हुए उनके नाम एक पत्र भी लिखा।

सन् 1812 की बात है। बड़े दिन से एक रोज़ पहले एक अजनबी फैराडे को ढूंढ़ता हुआ दूकान पर आया। उसने फैराडे को एक पत्र दिया और कहा, "मि० डेवी ने कल तुम्हें बुलाया है।" फैराडे रोमांचित हो उठा। इस मुलाकात का नतीजा यह निकला कि फैराडे इस महान वैज्ञानिक की प्रयोगशाला में सहायक नियुक्त हो गया। शुरू-शुरू में उसे प्रयोगशाला का कांच का सामान धोने और उसे साफ रखने का काम दिया गया। लेकिन बाद को उसे अधिक महत्त्वपूर्ण काम सौंपा गया। डेवी की प्रयोगशाला में ही फैराडे को वह प्रशिक्षण मिला जिसके बल पर उसकी गणना विश्व के महानतम वैज्ञानिकों में हो सकी।

फोर्ड, हेनरी (HENRY FORD 1863–1947) : मोटरगाड़ियों के उत्पादन द्वारा विशाल पूंजी कमानेवालों में अमरीका के हेनरी फोर्ड का नाम चोटी पर आता है।

हेनरी फोर्ड का जन्म मिशिगन के डियरबॉर्न नामक स्थान में हुआ। उसका पिता किसान था। बचपन से ही फोर्ड कल-पुर्ज़ों में रुचि लेने लगा था। इधर-उधर खेलने के बजाय वह एक बेंच पर बैठ जाता और पड़ोसियों की घड़ियों आदि की मरम्मत करता रहता। घड़ियों की मरम्मत करने के लिए उसके पास ये औज़ार थे : एक कील, कुछ बुनने की सलाइयां और एक चिमटी।

सोलह वर्ष की आयु में वह खेत पर काम करना बंद करके मशीनों की एक दूकान में नौकर हो गया। जब वह 21 वर्ष का हुआ तब उसके पिता ने उसे 40 एकड़ ज़मीन दे दी। पिता को आशा थी कि शायद इस प्रकार हेनरी मशीनों को छोड़कर खेती के काम में रुचि लेने लगेगा। हेनरी फोर्ड ने खेती में मन लगाने की कोशिश भी की,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

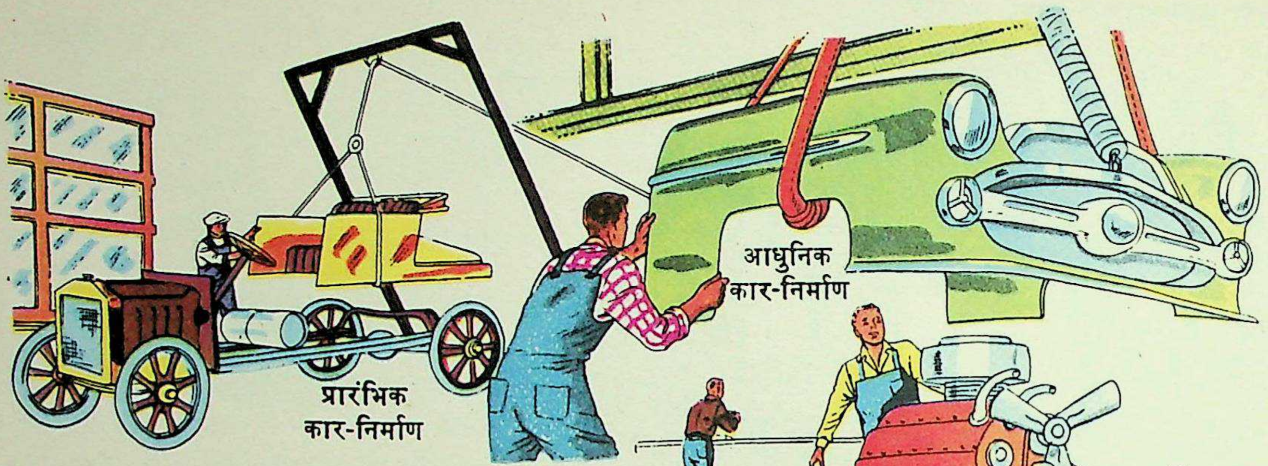

लेकिन उसके मन में मशीनों के प्रति प्रबल ग्राकर्षण था। ग्रंत में वह खेती छोड़कर डेट्रॉइट एडिसन कंपनी में काम करने लगा।

फोर्ड की दिलचस्पी बिना घोड़े के चलनेवाली गाड़ियों में विशेष रूप से थी। उसने एक ऐसी गाड़ी बनाने का निश्चय किया। रात-रात-भर वह उसपर काम करता रहता था। ग्रंत में मई, 1896 की एक रात को दो बजे उसकी कार बनकर पूरी हुई। पानी बरस रहा था, मगर फोर्ड ने ग्रपनी गाड़ी बाहर निकाली ग्रौर उसपर चढ़कर पूरे मुहल्ले का चक्कर लगाया। गाड़ी ठीक चली। ग्रागे चलकर फोर्ड ने ग्रपनी पहली गाड़ी 200 डॉलर में बेच दी ग्रौर इस लागत से एक ग्रौर ग्रच्छी गाड़ी बनाई। कुछ ही दिनों में फोर्ड ग्रक्सर ग्रपनी गाड़ी में घूमता-फिरता दीख पड़ने लगा। डेट्रॉइट के मेयर ने उसे कार चलाने का लाइसेंस दिया। इससे पहले डेट्रॉइट में ड्राइवर का लाइसेंस किसीको नहीं दिया गया था।

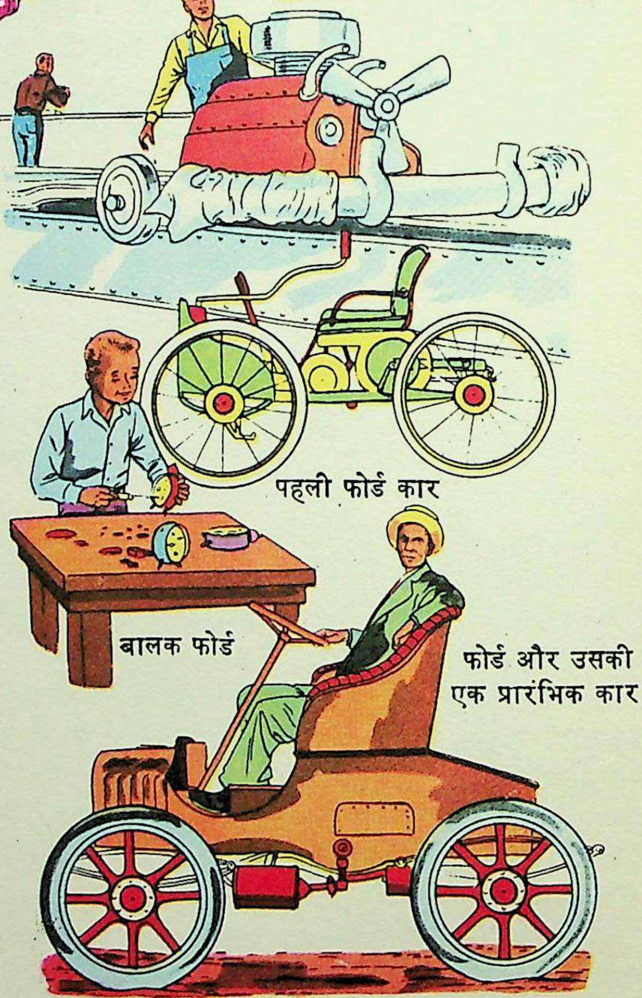

उन दिनों कारों का बनना तो शुरू हो चुका था, लेकिन वे सभी महंगी थीं। फोर्ड ऐसी कार बनाना चाहता था जो इतनी सस्ती हो कि ग्रधिकांश लोग उसे खरीद सकें। जब उसने दो रेसिंग कारें बना लीं तो लोगों ने उसकी कंपनी में रुचि लेना प्रारंभ कर दिया। इनमें से एक कार '999' थी। यह जितनी दौड़ों में भी शामिल हुई उनमें इसने हमेशा पहला स्थान प्राप्त किया। ग्रंत में सन् 1903 में फोर्ड मोटर कंपनी की स्थापना हुई।

फोर्ड की कारें शीघ्र ही लोकप्रिय हो गईं। वे बहुत मज़बूत थीं। उन दिनों सड़कें टूटी-फूटी ग्रौर धूल-भरी होती थीं। लेकिन फोर्ड की कारें उनपर भी मज़े में चलती थीं।

कारों को ग्रधिकाधिक ग्रच्छा बनाने के विचार से फोर्ड ने एक ही डिज़ाइन पर ध्यान केंद्रित करने का निश्चय किया। सन् 1909 में उसने ग्रपनी प्रसिद्ध 'टी' मॉडल कार बनाई। यह कार बहुत लोकप्रिय हुई, ग्रौर ग्रगले 19 वर्षों तक फोर्ड ने इसकी डिज़ाइन में कोई परिवर्तन नहीं किया।

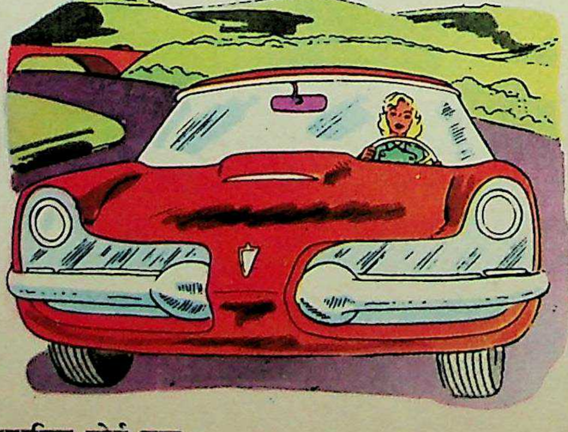
आधुनिक फोर्ड कार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पैसे की तो बाढ़-सी आ गई। फोर्ड के कारखान में पहले सैकड़ों, फिर हज़ारों और अंत में लाखों कारों का निर्माण होता गया।

फोर्ड अच्छी और सस्ती कारें बनाने में इसलिए कामयाब रहा कि उसके कारखाने में काम बड़े व्यवस्थित ढंग से होता था। बनती हुई कारें एक मज़दूर के हाथ से निकलकर दूसरे के पास पहुंचती थीं। हर मज़दूर के पास केवल एक औज़ार होता था और उसे एक ही काम करना होता था।

आगे चलकर फोर्ड ने विदेशों में अपनी कारें भेजने का एक सस्ता उपाय ढूंढ़ निकाला। कारों को अपने कारखाने में पूरी तरह तैयार करने के बजाय उसने कारों के अलग-अलग पुर्ज़े बाहर भेजने शुरू किए। जब ये पुर्ज़े विदेशों में पहुंच जाते थे तब फोर्ड के मज़दूर उन्हें जोड़-कर कार तैयार कर देते थे। इस तरीके से जहाज़ का भाड़ा कम हो गया और दूसरे देशों में फोर्ड की कारें सस्ते दामों पर मिलने लगीं।

फ्रैंकलिन, बेंजामिन (BENJAMIN FRANKLIN 1706–1790) : इस महान राजनीतिज्ञ ने आरंभिक दिनों में अनेक देशों को अमरीका का मित्र बनाया था। राजनीतिज्ञ होने के साथ ही वह एक लेखक, प्रकाशक और वैज्ञानिक भी था।

फ्रैंकलिन का जन्म बोस्टन में हुआ था। सत्रह वर्ष की आयु में वह घर से भागकर फिलाडेल्फिया चला गया और वहां उसने एक छापेखाने में नौकरी कर ली। छः साल बाद उसने अपना छापाखाना चालू किया और एक अखबार निकाला जो आगे चलकर 'सैटर्डे ईवनिंग पोस्ट' के नाम से विख्यात हुआ।

बेंजामिन ने कई वैज्ञानिक प्रयोग भी किए। उसके सबसे प्रसिद्ध प्रयोग को साथ में दिए गए चित्र से समझा जा सकता है। एक दिन तूफान के समय पतंग उड़ाकर उसने यह पता लगाया कि आकाश की तड़ित् (Lightning) विद्युत् (Electricity) की एक विशाल चिनगारी है। उसने द्विफोकसी कांच (Bifocal glasses) का भी आविष्कार किया।

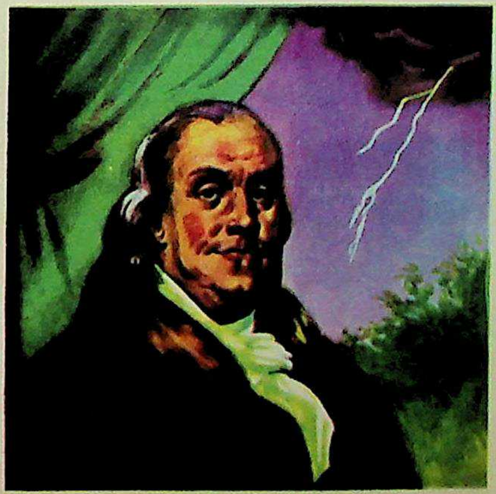
बेंजामिन फ्रैंकलिन

फ्रैंकलिन बरसों यूरोप में घूम-घूमकर अमरीकी उप-निवेशों की स्वतंत्रता के लिए काम करता रहा। उसने स्वाधीनता के घोषणापत्र के लेखन-कार्य में सहायता दी और वह स्वयं उसपर हस्ताक्षर करनेवालों में से एक था। इंग्लैंड के खिलाफ अमरीकी उपनिवेशों के संघर्ष में उसने फ्रांस जाकर फ्रांसीसी सरकार की सहायता प्राप्त की। बाद में उसने संविधान के निर्माण में योग दिया।

बरबैंक, लूथर (LUTHER BURBANK 1849–1926) : अनेक प्रकार के अनोखे पौधे विकसित करने के कारण अमरीकी वनस्पतिशास्त्री लूथर बरबैंक को अक्सर 'पौधों का जादूगर' कहा जाता है। अपने जीवन में इन्होंने पौधों के संबंध में हज़ारों ही प्रयोग किए होंगे। पहले प्रयोग में ही इन्होंने एक ऐसा आलू तैयार किया जो काफी बड़ा और कड़ा था। इसका नाम बरबैंक आलू पड़ा। इससे इन्होंने बहुत धन कमाया।

बरबैंक का सबसे बड़ा आविष्कार बिना रीढ़ का कैक्टस (नागफनी) माना जाता है। इसके लिए ये सोलह साल तक प्रयोग और परीक्षण करते रहे थे। यह पशुओं के लिए एक अच्छा चारा है। प्लमकॉट और शास्टा डेज़ी से भी इनको बड़ी ख्याति मिली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बरबैंक ने एक बिना रीढ़ का कैक्टस और तरह-तरह के दूसरे अनोखे पौधे विकसित किए।

कभी-कभी इनके प्रयोग निष्फल भी रहते थे, और तब उन बेकार के पौधों की इन्हें होली जलानी पड़ती थी। पर इनके सफल प्रयोगों की संख्या इतनी अधिक है कि इनका नाम सारे संसार में प्रसिद्ध है।

बिजली (ELECTRICITY) : बिजली को हमारी सेवा करते हुए अभी सौ साल से कुछ ही अधिक समय हुआ है। लेकिन प्राचीन यूनानियों के समय से ही इसका ज्ञान लोगों को था। यूनानियों ने इस बात का पता लगा लिया था कि अगर एक अम्बर के टुकड़े को समूर से रगड़ा जाए तो यह हलके तिनकों और दूसरी हलकी चीज़ों को उठा लेगा। बाद में चलकर वैज्ञानिकों ने इस बात का पता लगाया कि दूसरी चीज़ें भी अम्बर की तरह की क्रिया कर सकती हैं। उनमें बिजली भरी जा सकती है।

इस तरह बिजली के चार्ज को, स्थैतिक (Static) या घर्षी बिजली का चार्ज कहते हैं।

परंतु इसके पहले कि बिजली हमारी सेवा कर सके, कुछ ऐसा उपाय ढूंढ़ना पड़ा जिससे बिजली की धारा नियमित रूप से आती रहे। इसके पहले कि वैज्ञानिक यह जान सके कि बिजली की धारा कैसी होती है, उन्हें बिजली की धारा पैदा करने का तरीका ढूंढ़ना पड़ा।

सभी पदार्थ बहुत नन्हे कणों से बने हैं जिन्हें परमाणु कहते हैं। परमाणु और भी नन्हे कणों से बने होते हैं जिन्हें हम इलेक्ट्रॉन कहते हैं। इलेक्ट्रॉन एक नाभिक या न्यूक्लिअस के चारों ओर चक्कर काटते हैं। यह नाभिक प्रोटॉन और न्यूट्रॉन से बना होता है। प्रोटॉन और न्यूट्रॉन तो अपने ही परमाणु तक सीमित रहते हैं, परन्तु यदि इलेक्ट्रॉन को अधिक ज़ोरदार धक्का दिया जाए तो ये उछलकर एक परमाणु से दूसरे परमाणु पर पहुंच सकते हैं। बिजली की धारा किसी पदार्थ में होकर दौड़ते हुए इलेक्ट्रॉनों का ही नाम है। जब दो पदार्थ आपस में रगड़े जाते हैं, तो एक पदार्थ के इलेक्ट्रॉन रगड़ के कारण दूसरे पदार्थ में चले जाते हैं। अगर किसी पदार्थ में सामान्य से

बिजली हमें प्रकाश के नित्य नये और तरह-तरह के उपयोगी साधन प्रदान कर रही है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

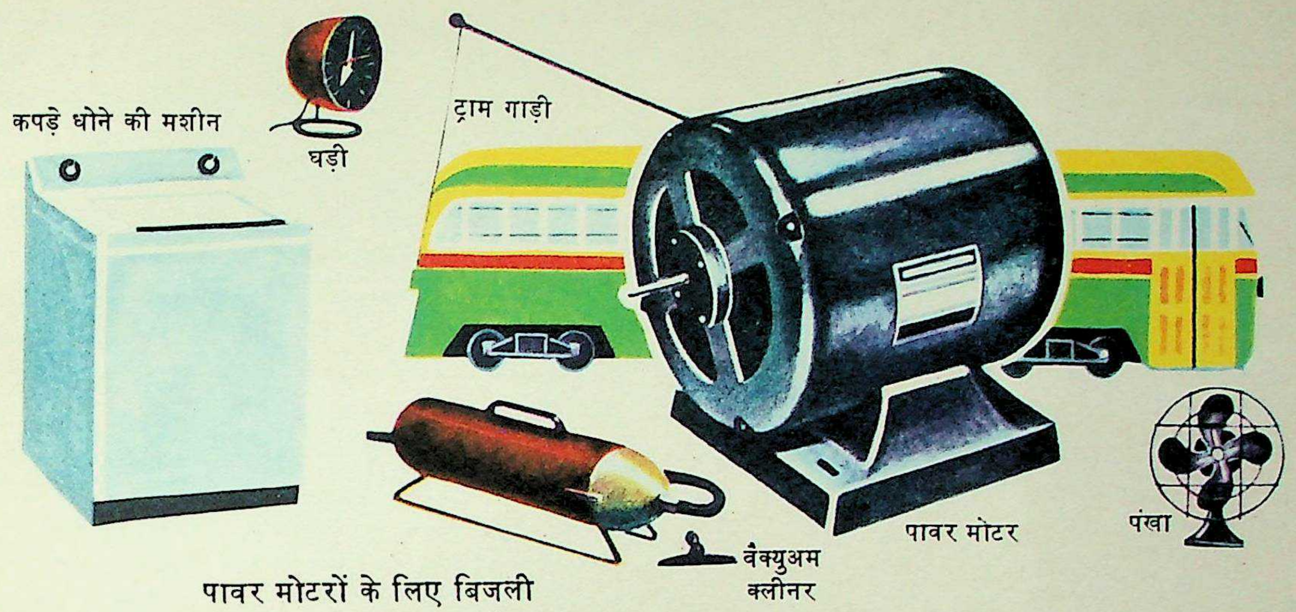

पावर मोटरों के लिए बिजली

अधिक या कम इलेक्ट्रॉन रहेंगे तो उसमें बिजली की शक्ति पैदा हो जाएगी।

150 साल से ऊपर हुए जब इटली के एक वैज्ञानिक वोल्टा ने बिजली की धारा (करेण्ट) प्राप्त करने की एक युक्ति निकाली। उसने बिजली के एक सेल का आविष्कार किया। लेकिन इससे बिजली की बहुत क्षीण-सी धारा निकलती थी। इसके बाद उससे अच्छे सेल बनाए गए जिनसे बिजली की अधिक सशक्त धारा मिल सकती थी। लेकिन बिजली सही अर्थों में तब उपयोगी सिद्ध हुई जब माइकेल फैराडे ने उसे अपनी राह पर ठेलने के लिए एक मशीन का आविष्कार किया। जिस मशीन से बिजली तैयार की जाती है उसे जनित्र (जेनरेटर) कहते हैं। आज हम सेल और जनित्र दोनों को काम में लाते हैं।

बिजली के दो या अधिक सेल आपस में जोड़कर बैटरी बनाई जाती है। हम सुवाह्य (Portable) रेडियो, फ्लैशलाइट, बहरों के काम में आनेवाले श्रवण यंत्रों, बिजली के खेलों और मोटरकार इत्यादि में बैटरी से काम लेते हैं। हमारे मकानों, दूकानों, दफ्तरों और सड़क की बत्तियों में तथा बड़ी-बड़ी मशीनों में काम में आनेवाली बिजली जनित्र से मिलती है।

कई बैटरियां सूखे सेलों से बनी होती हैं। एक साधारण सूखे सेल में बीच में एक कार्बन की छड़ लगी होती है, बाहर जस्ते का एक खोल होता है और कार्बन तथा जस्ते के बीच रसायनों का नम मिश्रण भरा रहता है। सूखे सेल सचमुच सूखे नहीं होते हैं, लेकिन उनमें कोई ऐसी तरल चीज़ भी नहीं होती जो चू सके। जस्ते पर रसायनों की क्रिया से इलेक्ट्रॉन बहने लगते हैं।

संचायक बैटरी (Storage Battery) गीले सेलों से तैयार होती है। इसमें हर एक सेल में सीसे की प्लेटें व लेड परऑक्साइड की प्लेटें लगी होती हैं और पानी तथा अम्ल का मिश्रण भरा रहता है। इसका नाम संचायक बैटरी इसलिए पड़ा है कि इसे चालू रखने के लिए समय-समय पर किसी जनित्र से बिजली की धारा इसमें से गुज़ारी जाती है। एक तरह से कहा जाए तो बैटरी जनित्र से निकली बिजली की धारा का संचय कर लेती है। संचायक बैटरी से बिजली की धारा गुज़ारने को बैटरी को चार्ज करना कहते हैं।

जनित्र चुम्बक और तार की कुंडली (Coils of Wire) का बना होता है। चुम्बक या तार की कुंडली—दोनों में से किसी एक को लगातार चक्कर काटते रहना चाहिए, ताकि जनित्र में बिजली पैदा हो सके। कुछ जनित्र पानी से चलनेवाले बड़े-बड़े पहियों से चलाए जाते हैं। झरनों और बांधों के पास अनेक बिजलीघर बनाए गए हैं। इसके अलावा दूसरे जनित्र टरबाइन से चलाए जाते हैं। हमारे घर में बिजली की धारा बिलकुल पास में बने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिजलीघर से आ सकती है। इसके अलावा, वह 100 मील दूर किसी झरने पर बने बिजलीघर से भी आ सकती है।

बिजली का इस्तेमाल करने का मतलब बिजली की धारा पैदा करना और इसे दौड़ाना ही नहीं है। इसके लिए और कई बातों का प्रबन्ध करना पड़ता है। बिजली की धारा के दौड़ने के लिए एक रास्ता बनाना होता है। इसे परिपथ या सर्किट कहते हैं। इसके साथ ही बिजली की धारा को चालू करने और बन्द करने के भी आसान उपाय होने चाहिए।

बिजली का परिपथ तैयार करने के लिए यह जानना होता है कि बिजली की धारा कुछ चीज़ों में अधिक आसानी से बहती है, दूसरी चीज़ों में मुश्किल से। जिन चीज़ों में होकर बिजली अधिक आसानी से बहती है उन्हें सुसंवाहक (Good Conductors) कहते हैं। जिन चीज़ों में

ताप के लिए बिजली

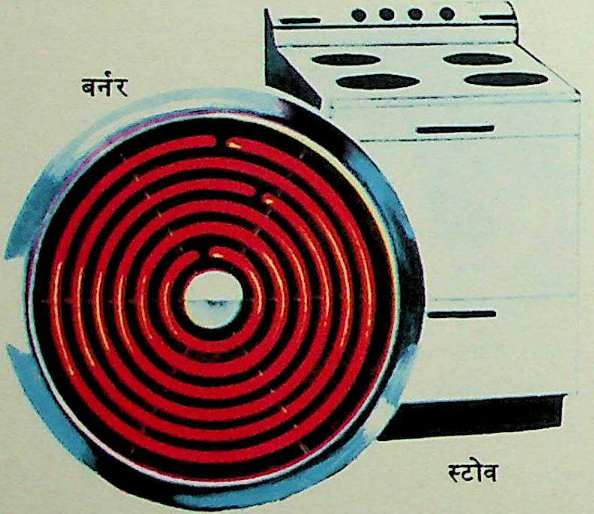

से होकर यह आसानी से नहीं बह पाती उन्हें कुसंवाहक (Poor Conductors) कहते हैं। सुसंवाहक पदार्थ बिजली के लिए मार्ग तैयार करते हैं। कुसंवाहक पदार्थ बिजली को बिखरकर इधर-उधर जाने से रोकते हैं और इसे हमारे इच्छित स्थान तक पहुंचाने में सहायता करते हैं। इनसे बिजली लघु परिपथों की ओर मुड़ने से बच जाती है। लघु परिपथ (शॉर्ट सर्किट) उस दिशा को कहते हैं जिधर बिजली की धारा आसानी से मुड़ सकती है, बजाय उस दिशा में जाने के जिधर हम उसे ले जाना चाहते हैं।

अगर हम बिजली की धारा को रोकना चाहें तो हमें परिपथ को बीच में कहीं तोड़ देना होगा। धारा को चलाने के लिए हमें परिपथ को जोड़ना होगा। बिजली के परिपथ को तोड़ने और जोड़ने के लिए हम कई तरह के स्विचों का प्रयोग करते हैं।

आम तौर से परिपथ बनाने का बहुतेरा काम हमें किया-कराया मिल जाता है। तारों द्वारा बिजलीघर से बिजली हमारे घरों तक पहुंचती है। दीवार में लगे हुए तार लट्टुओं के साकेटों, बिजली की अंगीठियों या और दूसरी जगहों पर, जहां बिजली की ज़रूरत होती है, गए रहते हैं। हम सिर्फ इन्हें चालू करने के लिए स्विच को दबा देते हैं, ताकि बिजली की धारा उन तक पहुंच सके। बिजली की कई चीज़ों में दो डोरियां लगी रहती हैं जिनमें बिजली के तार होते हैं। इन तारों के सिरे पर एक प्लग लगा रहता है। इस प्लग को दीवार में बने हुए छेद में लगा देते हैं। प्लग लगा देने से इस वस्तु के दोनों तार छेद में निकले हुए तारों से जुड़ जाते हैं।

लेकिन जब कोई व्यक्ति प्रयोग कर रहा हो तब उसे यह जानना ज़रूरी है कि बिजली का परिपथ कैसे बनाया जाना चाहिए। दिए हुए चित्र में एक लड़का एक सूखे सेल से बिजली की घण्टी के लिए बिजली प्राप्त कर रहा है। परिपथ को तोड़ने और जोड़ने के लिए वह एक दबानेवाले बटन का प्रयोग कर रहा है।

दबानेवाले बटन में धातु के दो संयोजक होते हैं। सेल से आया हुआ एक तार एक संयोजक से जुड़ा हुआ है, और घण्टी से आकर एक तार दूसरे संयोजक से जुड़ा है। जब बच्चा बटन को दबाता है तो एक धातु का टुकड़ा नीचे दब जाता है। धातु का यह टुकड़ा दोनों संयोजकों को आपस में जोड़ देता है। इस तरह परिपथ पूरी तरह तैयार हो जाता है। जब तक वह ऐसा नहीं करता तब तक दोनों संयोजकों के बीच कुछ दूरी बनी रहती है।

परिपथ बनाने के लिए अधिकतर तांबे के तारों का ही प्रयोग किया जाता है। तांबे की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि तांबा बहुत उच्च कोटि का सुसंवाहक है। दूसरे, यह काफी सस्ता भी पड़ता है। तार के चारों ओर किसी कुसंवाहक चीज़ को लपेटा जाता है। लेकिन तार के अन्तिम भाग को, जिसे जोड़ना है, खुला रखा जाता है, अर्थात् इसपर से इन्सुलेशन हटा लिया जाता है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई स्विच को छूता भी नहीं है, लेकिन कमरे की सारी बत्तियां बुझ जाती हैं। आम तौर पर ऐसा फ्यूज़ के उड़ जाने के कारण होता है। फ्यूज़ हमारे ऐसे पहरेदार हैं जो बिजली-रूपी दासी के ऊपर कड़ी नज़र रखते हैं, ताकि यह अनावश्यक गर्मी पैदा करके हमें हानि न पहुंचा सके। कभी-कभी कुछ कारणों से हमारे कमरों के तारों में बिजली की इतनी अधिक धारा बह सकती है कि तार गर्म हो उठें। गर्म तारों से दीवारों में बड़ी आसानी से आग लग सकती है। लेकिन बिजली की धारा को फ्यूज़ से भी होकर बहना पड़ता है। फ्यूज़ में धातु का एक ऐसा टुकड़ा लगा होता है जो आसानी से पिघल जाता है। जब बिजली के तार में होकर बहुत अधिक करेंट चलता है तब फ्यूज़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

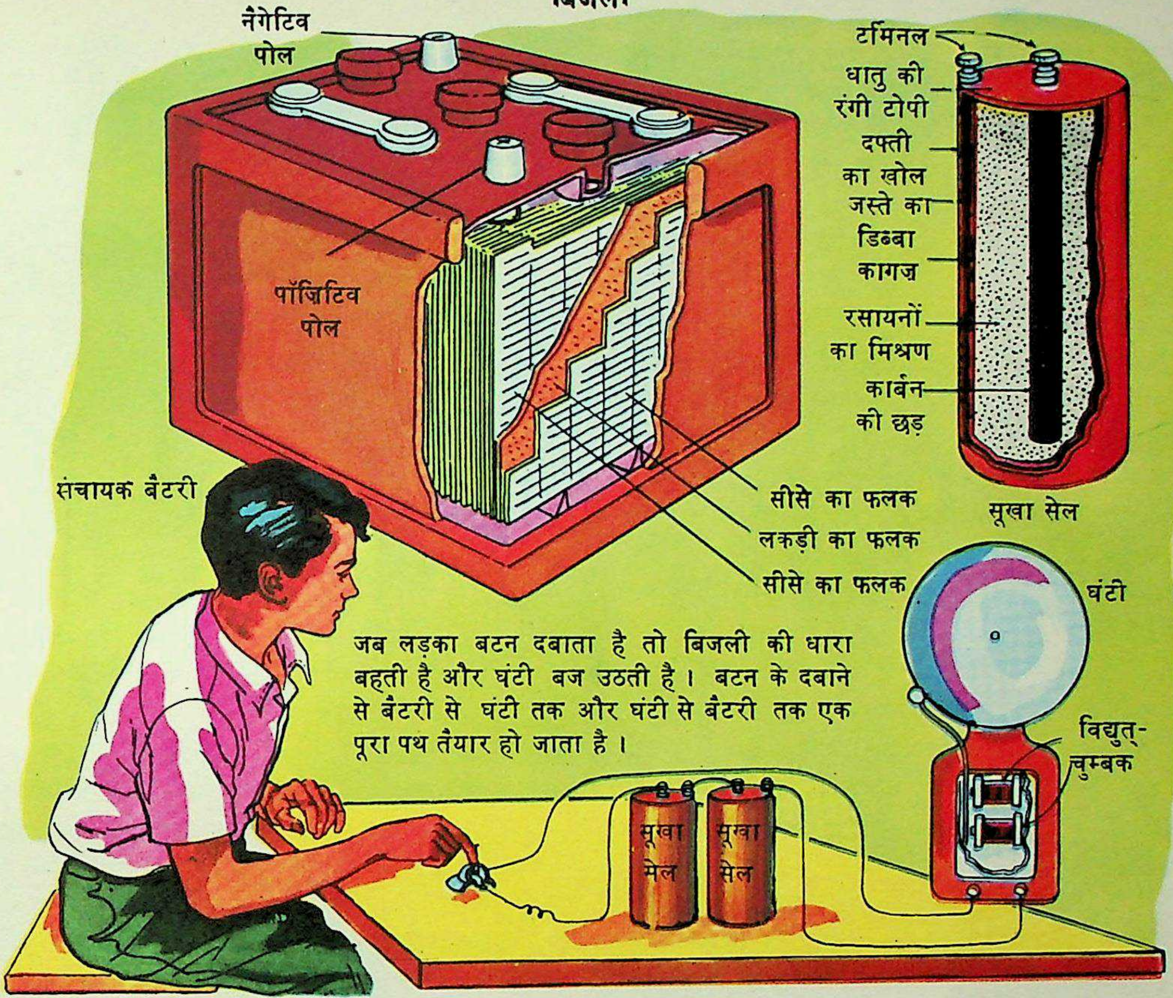

संवाद भेजने के लिए बिजली

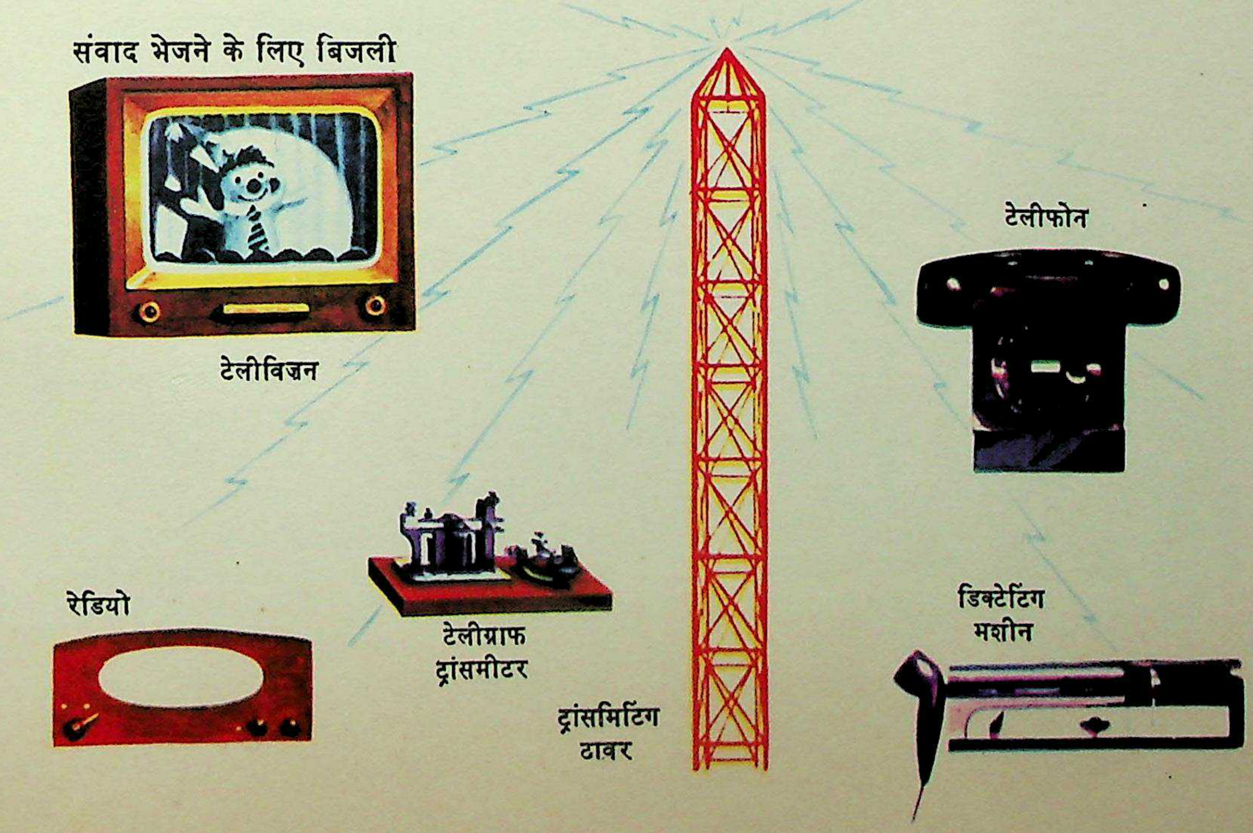

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की धातु पिघलकर गिर जाती है और लगाव खत्म हो जाता है। फ्यूज़ उड़ने का कारण आम तौर पर यह होता है कि लघु परिपथ की ओर बिजली प्रवाहित होने लगती है, अर्थात् उसका प्रवाह बिगड़ जाता है। अगर एक ही कमरे में कई बिजली की चीज़ें एकसाथ चालू कर दी जाती हैं तो भी बिजली अधिक आने लगती है और फ्यूज़ उड़ जाते हैं।

बिजली के सामानों को खरीदते समय या उनका व्यवहार करते समय हमें कुछ शब्दों को जानना ज़रूरी होता है। इनमें एक 'वोल्ट' है। दूसरा शब्द 'एम्पियर' है। तीसरा शब्द 'वाट' है।

जो धक्का (Push) बिजली की धारा को परिपथ की ओर ठेलता है, उसे हम वोल्ट में मापते हैं। हमारे घरों में काम आनेवाले कुछ उपकरण 110 या 220 वोल्ट के होते हैं।

एम्पियर बिजली की धारा की शक्ति की माप है। फ्यूज़ों पर हमेशा एम्पियर की मात्रा अंकित रहती है। इससे यह पता चलता है कि कितनी शक्ति की धारा फ्यूज़ से होकर बह सकती है, ताकि यह उड़ने से बचा रहे।

बिजली की बत्तियों पर वाट अंकित होते हैं। 100 वाट की एक बत्ती 25 वाट की बत्ती से चौगुनी रोशनी देगी। वाट इस बात की माप है कि कोई उपकरण कितनी बिजली खर्च करता है।

जब बिजली की धारा हमारे घरों में आती है तब यह एक 'मीटर' से होकर गुज़रती है। जितनी ताकत की बिजली खर्च होती है उसे मीटर मापता चलता है। इसको देखकर ही बिजली का बिल बनाया जाता है।

(देखें : फैराडे)

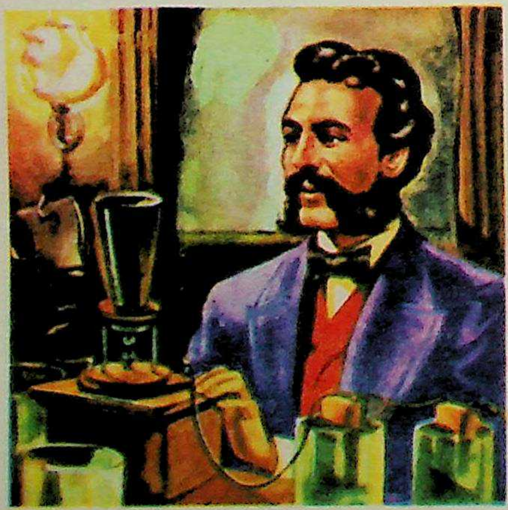

अलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल प्रयोगशाला में

बेल, अलेक्ज़ेंडर ग्राहम (ALEXANDER GRAHAM BELL 1847-1922) : टेलीफोन के आविष्कार के साथ ही ग्राहम बेल का नाम जुड़ा हुआ है। उनका जन्म स्कॉटलैंड

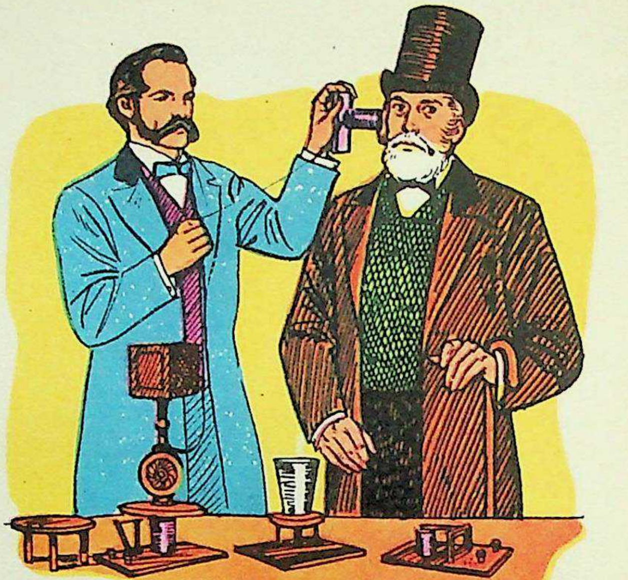

ब्राज़ील के बादशाह को जब टेलीफोन यंत्र दिखाया गया तो वे इसका महत्त्व फौरन समझ गए।

में हुआ था। उनके पिता गूंगों-बहरों के एक स्कूल में पढ़ाते थे। बड़े होकर बेल भी यही काम करने लगे।

1870 में अलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल अपना देश छोड़ अमरीका चले आए और कुछ दिन बाद बोस्टन नगर में बस गए।

बोस्टन में बेल दिन में गूंगे-बहरे बच्चों को पढ़ाते और रात के समय बिजली के बारे में प्रयोग करते। वह तार भेजने का एक ऐसा यंत्र बनाना चाहते थे जिसपर एकसाथ छः संदेश भेजे जा सकें। इसी सिलसिले में उनकी टॉमस वाटसन नामक बिजली-मिस्त्री से मुलाकात हुई। दोनों ने मिलकर काम करना शुरू कर दिया। बेल को विश्वास था कि उनके हिसाब और विचार में कहीं कोई गलती नहीं है, मगर उनका यंत्र फिर भी कामयाब नहीं हो रहा था। दोनों ने आपस में इस बारे में कितनी ही बातें कीं। तभी बेल के दिमाग में यह बात भी आई कि क्या आवाज़ को भी बिजली के तारों के ज़रिये भेजा जा सकता है।

छः महीनों तक दोनों मिलकर काम करते रहे। एक दिन बेल को अपने यंत्र पर एक अजीब आवाज़ सुनाई दी। वाटसन उस समय तार के दूसरे छोर पर, दूसरे कमरे में थे। बेल लपककर उस कमरे में गए और वाटसन से पूछने लगे, "तुमने अभी-अभी क्या किया था?" वाटसन ने कहा, "कुछ नहीं—हां, अभी मेरे हाथ से यह कमानी टूट गई।" बेल तुरंत समझ गए कि वह अजीब आवाज़ कहां और कैसे पैदा हुई थी। उन्हें पता लग गया कि आवाज़ को तार पर भेजा जा सकता है। अगले ही दिन दोनों ने अपना पहला टेलीफोन तैयार कर डाला।

मगर अभी भी यंत्र में कई खराबियां थीं। उन्हें दूर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने में काफी वक्त लगा। आखिर 10 मार्च, 1876 के दिन बेल ने अपने टेलीफोन के चोंगे में ये इतिहास-प्रसिद्ध शब्द कहे, "मि० वाटसन, इधर आइए; मुझे आपसे काम है।" टेलीफोन पर सुना गया यही पहला वाक्य था।

खोज इतनी मार्के की थी, लेकिन फिर भी लोगों ने उस ओर ज्यादा ध्यान न दिया। बेल की खुशकिस्मती से उस समय संयुक्त राज्य अमरीका के फिलाडेलफिया नगर में एक विश्वमेला चल रहा था। उन्होंने अपनी निराली खोज उसमें प्रदर्शित की। एक दिन ब्राज़ील के बादशाह डोम पेद्रो की निगाह इस यंत्र पर पड़ी और वे उसके महत्त्व को फौरन समझ गए।

कुछ ही वर्षों में टेलीफोन का संसारव्यापी प्रचार हो गया। अब तो शायद ही कोई ऐसा देश हो जहां एक सुव्यवस्थित टेलीफोन प्रणाली न हो।

यों तो बेल ने और भी कई खोजें कीं, लेकिन नाम उनका सदा टेलीफोन के जन्मदाता के रूप में ही अमर रहेगा।

बैरोमीटर (BAROMETER) : विज्ञान के सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण उपकरणों में से बैरोमीटर एक है। वायुयान-चालकों, पर्वतारोहियों और मौसमशास्त्रियों का तो इस यंत्र के बिना काम चल ही नहीं सकता। पूछा जा सकता है कि बैरोमीटर (वायुदाबमापी) ऐसा क्या काम करता है कि जिसके कारण यह इतना आवश्यक हो गया है।

बैरोमीटर, जैसाकि इसके नाम से ही प्रकट होता है, वायु का दाब मापता है। हम जानते हैं कि हमारे आस-पास—चारों तरफ हवा है। यह कहा जा सकता है कि हम वायु के एक महासागर के पेंदे में रहते हैं। ऊपर की यह हवा नीचे की हर चीज़ को दबाती है। वायुदाबमापी वायु के इस दाब को मापता है।

हवा का यह दाब सभी जगह एक जैसा नहीं होता। जैसे पहाड़ों पर यह कम होता है, लेकिन पहाड़ों की घाटियों में यह अधिक होता है। इसका कारण यह है कि पहाड़ ऊंचा होता है। ऊंचाई पर मैदान या समुद्र-तट के मुकाबले कम हवा होती है और इसीलिए उसका दाब

निर्द्रव बैरोमीटर

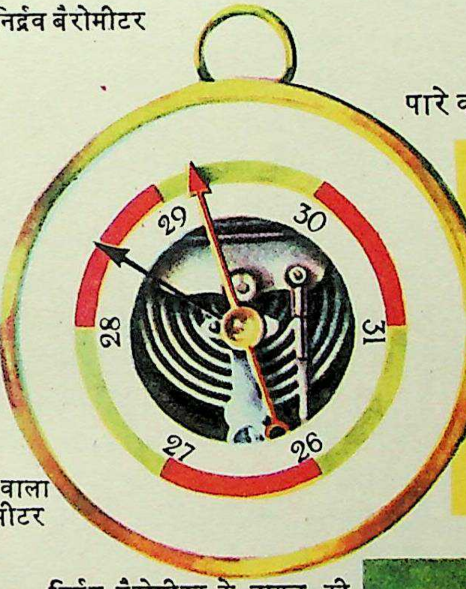

पारे वाला बैरोमीटर

पारे वाला बैरोमीटर

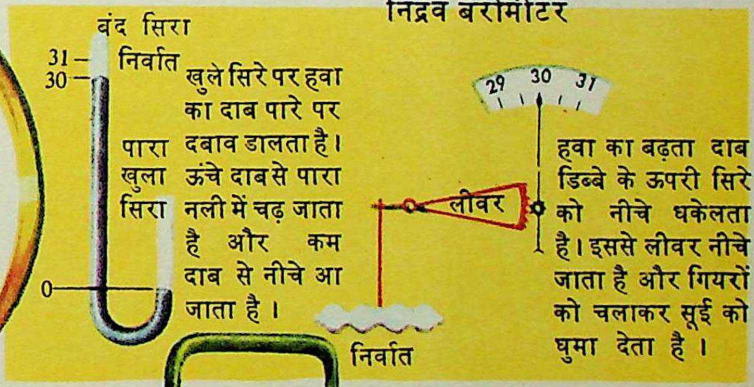

निर्द्रव बैरोमीटर के डायल की एक सूई को हाथ से किसी भी जगह स्थिर किया जा सकता है। दूसरी सूई की गति से यह पता चलता है कि हवा का दाब बढ़ रहा है या घट रहा है।

सबसे पहले पारे वाले बैरोमीटर का ही आविष्कार हुआ था। इसे गैलिलियो के शिष्य तोरिसेल्ली ने 1643 में बनाया था।

अभिलेखी बैरोमीटर में एक कलम से एक बेलन पर चढ़े कागज़ पर एक रेखा खिंचती रहती है, जिससे हवा के दाब के परिवर्तनों का रिकार्ड रहता है।

अभिलेखी बैरोमीटर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी कम होता है। एक जगह पर भी हवा का दाब हमेशा एक-सा नहीं रहता—वह मौसम के साथ बदलता रहता है। बैरोमीटर दाब में आनेवाले सूक्ष्म से सूक्ष्म अंतर को भी माप लेता है। मौसम विशेषज्ञ इस जानकारी का उपयोग मौसम-संबंधी भविष्यवाणियां करने में करते हैं। वे इसके आधार पर बता सकते हैं कि वर्षा या आंधी आदि की संभावना है या नहीं। वायुयानचालक बैरोमीटर से यह जान लेते हैं कि उनका यान कितनी ऊंचाई पर उड़ रहा है। पर्वतारोही भी इससे जान लेते हैं कि वे कितनी ऊंचाई पर हैं।

बैरोमीटर कई तरह के होते हैं। कुछ बैरोमीटरों में एक लंबी नली में पारा भरा होता है, तो कुछ डिबियानुमा होते हैं। उनके भीतर की काफी हवा निकाल दी जाती है। उनमें ऊपर घड़ी जैसा डायल होता है, जिसपर घूमनेवाली सुई की गति से हवा के दाब को पढ़ा जा सकता है। पारा-भरे नलीदार बैरोमीटर को पारद-बैरोमीटर (Mercury Barometer), और डिबियानुमा बैरोमीटर को निर्द्रव बैरोमीटर (Aneroid Barometer) कहते हैं। कुछ बैरोमीटर ऐसे भी होते हैं जो हवा के दाब को लगातार एक कागज़ पर दर्ज करते रहते हैं। इस तरह के बैरोमीटर को अभिलेखी बैरोमीटर (Recording Barometer) कहते हैं।

(देखें : मौसम-विज्ञान)

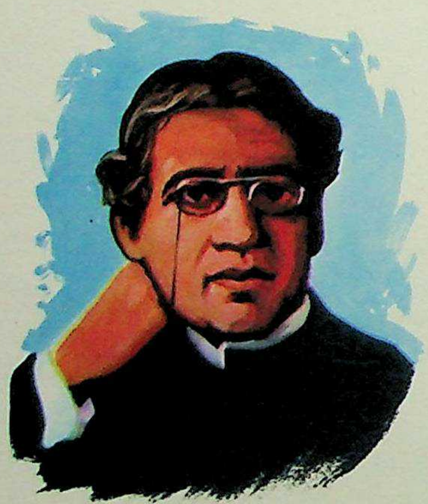

डा० जगदीशचन्द्र बोस

बोस, डा० जगदीशचन्द्र (Dr. JAGDISH CHANDRA BOSE 1858–1937) : इनका जन्म पूर्वी बंगाल के मैमनसिंह ज़िले में हुआ था। इन्हें बचपन में घर और स्कूल में अच्छी शिक्षा मिली। तेरह वर्ष की आयु में ये शिक्षा प्राप्त करने के लिए कलकत्ते गए और 1881 में इंग्लैंड गए। वहां वे कैम्ब्रिज के क्राइस्ट कालेज में दाखिल हुए।

कैम्ब्रिज में उन्होंने भौतिकी में प्रो० राले के साथ काम किया। वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर वाइन्स उनके घनिष्ठ मित्र बन गए। उनके सम्पर्क से वनस्पतिशास्त्र में उनकी रुचि बढ़ी। इसका भविष्य में उनके अनुसंधानों पर गहरा प्रभाव पडा। 1885 में वे भारत लौटे और प्रेसीडेंसी कालेज में भौतिकी के प्रोफेसर बने।

दस वर्ष पढ़ाने के बाद उनकी रुचि अनुसंधान में जागी। बोस ने बिजली के संबंध में खोज की। उन्होंने विद्युत्-चुम्बकीय रेडियो-तरंगें उत्पन्न करने के लिए एक यंत्र बनाया और इन तरंगों के गुणों का अध्ययन किया। ये तरंगें दीवारों के पार जा सकती थीं। 1895 में उन्होंने इन तरंगों की सहायता से 75 फुट दूर रखी टेलीफोन की घंटी बजाई। इन्हीं तरंगों के उपयोग का विकास करके मारकोनी ने रेडियो का आविष्कार किया।

बोस ने वनस्पति-जीवन का अध्ययन बारीकी के साथ किया। उन्होंने क्रेस्कोग्राफ नामक एक विशेष यंत्र बनाया। यह पौधों की वृद्धि की गति को एक करोड़ गुना बढ़ाकर दर्शाता है। उन्होंने स्वनिर्मित यंत्रों की सहायता से पौधों के जीवन पर निद्रा, वायु, भोजन, विष आदि द्वारा पड़नेवाले प्रभावों को दर्शाया। उन्होंने सिद्ध किया कि पौधों को भी हर्ष और पीड़ा का अनुभव होता है। वे भी सोते और जागते हैं। उनपर भी जंतुओं की भांति परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है।

आचार्य बोस रॉयल सोसाइटी के सदस्य चुने गए। उन्होंने यूरोप और अमरीका में भाषण दिए। वहां के वैज्ञानिकों ने उनमें बड़ी रुचि दिखाई। 1917 में उन्होंने अपने और साथियों के अनुसंधान-कार्य के लिए कलकत्ते में 'बोस रिसर्च इन्स्टीट्यूट' की स्थापना की। आचार्य बोस को वैज्ञानिक संसार में बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। उन्हें सम्पूर्ण जीवन की एकता सिद्ध करनेवाला कहा गया है।

बोस, डा० सत्येन्द्रनाथ (Dr. SATYENDRANATH BOSE 1894-) : इनका जन्म कलकत्ते में हुआ था। इन्होंने 1915 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम० एस-सी० पास की और उसमें प्रथम आए। विशेष अध्ययन के लिए ये 1924 में यूरोप गए। 1926 में ये पेरिस में मदाम क्यूरी की प्रयोगशाला में काम करने के लिए गए। वहां इन्होंने बड़े कठिन वैज्ञानिक प्रयोगों में सफलता प्राप्त करके विज्ञान की उस अद्भुत महिला को चकित कर दिया।

स्वदेश लौटने पर डा० बोस 1927 में ढाका विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में रीडर बने, और फिर प्रोफेसर तथा विभाग के अध्यक्ष हो गए। 1946 में ये कलकत्ते चले आए और 1956 तक भौतिकी के प्रोफेसर रहे।

डा० बोस की वैज्ञानिक सूझ और उनके गणित-कौशल ने विज्ञान में एक नये सिद्धांत की नींव डाली। यह बोस-आइंस्टाइन सांख्यिकी कहलाता है। सापेक्षता सिद्धांत के जन्मदाता वैज्ञानिक आइंस्टाइन ने इस सिद्धांत को मान्यता दी और बाद में उसका विस्तार किया। परमाणु के नाभिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डा० सत्येन्द्रनाथ बोस

के जो कण इस सिद्धांत के अनुसार व्यवहार करते हैं, वे बोसोन कहलाते हैं। डा० बोस ने आइंस्टाइन की उस यूनीफाइड थ्योरी को विकसित करने में सहायता दी है जिसमें गुरुत्वाकर्षण, विद्युत्-चुम्बकीयता और क्वांटम रचना के नियम संयुक्त हैं। इनके इस कार्य की महत्ता को संसार ने स्वीकार किया है।

डा० बोस गणित की लगभग सभी शाखाओं में पारंगत हैं। आज भी ये उन साइक्लोटोमिक समीकरणों से संबंधित समस्याओं में रुचि ले रहे हैं जिन्हें लगभग दो सौ वर्ष पहले प्रसिद्ध गणितशास्त्री गौस ने अधूरा छोड़ा था।

डा० बोस 1948-50 में नेशनल इंस्टीट्यूट ऑव साइंसेज़ के अध्यक्ष रहे। इन्हें 1954 में पद्मविभूषण की उपाधि दी गई। बोस संगीतप्रेमी, मानवतावादी और साहित्यिक हैं। ये उत्तरी कलकत्ते में रहते हैं।

भटनागर, डा० शांतिस्वरूप (Dr. SHANTI-SWAROOP BHATNAGAR 1894-1955)

: भटनागर का जन्म पंजाब के शाहपुर ज़िले में हुआ था। किन्तु उनका पालन नाना के यहां उत्तर प्रदेश में हुआ। वे पढ़ने में बहुत तेज़ थे और अध्यापकों से बड़े टेढ़े प्रश्न पूछते थे।

वे 1908 में लाहौर गए और 1917 में फोरमैन क्रिश्चियन कालेज से एम० एस-सी० करके 1919 में यूरोप चले गए। वहां उन्होंने प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के पथ-प्रदर्शन में काम करके डी० एस-सी० की डिग्री प्राप्त की।

विलायत से लौटकर भटनागर हिन्दू विश्वविद्यालय में रसायन के प्रोफेसर नियत हुए। 1924 में वे पंजाब विश्वविद्यालय में चले आए और भौतिक रसायन के प्राध्यापक और यूनिवर्सिटी कैमीकल लेबोरेटरी, लाहौर, के डायरेक्टर बने। 1926 में उन्होंने चुम्बक-रसायन पर अनुसंधान आरंभ किए। उन्होंने एक चुम्बकीय तराजू का आविष्कार किया और चुम्बक-रसायन के सिद्धांत तथा उपयोग पर एक पुस्तक लिखी। अंग्रेज़ी भाषा में अपने विषय की यह पहली पुस्तक थी।

डा० भटनागर विज्ञान को उपयोगी बनाने में विश्वास करते थे। उन्होंने अनेक कम्पनियों की टेक्नीकल समस्याओं के हल निकाले। इससे उन्हें रॉयल्टी और भेंट के रूप में जो धन मिलता था, वे उस सबको अपने शिष्यों और संस्थाओं को दे डालते थे। इससे वे बहुत लोकप्रिय हो गए।

दूसरे विश्वयुद्ध के दिनों में भारत सरकार ने उन्हें वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान का डायरेक्टर नियत किया। उनकी देखरेख में कितने ही उपयोगी आविष्कार किए गए। उनके सुझाव पर सरकार ने 'कौंसिल ऑव साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रियल रिसर्च' बनाई और उसके द्वारा देश-भर में राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं की एक शृंखला स्थापित की। डा० भटनागर मृत्यु तक इस कौंसिल के डायरेक्टर रहे। भारत सरकार ने उन्हें 1954 में पद्मविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया।

भाभा, डा० होमी जहांगीर (Dr. HOMI JEHANGIR BHABHA 1909-1966)

: डा० भाभा का जन्म बम्बई में हुआ था। उनकी शिक्षा एल्फिंस्टन कालेज और 'इंस्टीट्यूट ऑव साइंस' में हुई। वे बहुत ही प्रतिभाशाली विद्यार्थी थे। 1930 में उन्होंने कैम्ब्रिज से विज्ञान में ट्राइपोस पास किया। वहां उनको गणित में यात्रा छात्रवृत्ति दी गई। इससे वे यूरोप के प्रमुख वैज्ञानिकों के सम्पर्क में आए और उन्हें उनके साथ काम करने का अवसर मिला। उनमें वे एनरिको फेर्मी भी थे जिन्होंने 1942 में संसार का सबसे पहला परमाणु रिएक्टर बनाया।

भाभा 1940 में बंगलौर की 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑव साइंस' में भौतिकी के रीडर नियुक्त हुए और 1942 में

डा० होमी जहांगीर भाभा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रोफेसर हो गए। 1945 में वे 'टाटा इंस्टीट्यूट ऑव फंडा-मेंटल रिसर्च' के डायरेक्टर बनकर बम्बई चले गए।

डा० भाभा ने कॉस्मिक किरणों के अध्ययन के संबंध में बहुत महत्त्वपूर्ण काम किया। उन्होंने परमाणु के भीतर के सूक्ष्म कणों और क्वांटम सिद्धांत पर भी अनुसंधान किए। 1951 में वे भारतीय विज्ञान कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। 1954 में राष्ट्रपति ने उन्हें पद्मभूषण की उपाधि प्रदान की।

अगस्त, 1954 में भारत में परमाणु शक्ति विभाग की स्थापना की गई। डा० भाभा इस विभाग के सचिव नियत हुए। परमाणु शक्ति-संबंधी अनुसंधान के लिए देश का सबसे बड़ा संस्थान बम्बई के निकट ट्राम्बे में बनाया गया। डा० भाभा इस संस्थान के डायरेक्टर नियुक्त हुए। यहां उनकी अध्यक्षता में तीन परमाणु रिएक्टर बनाए गए। इनमें परमाणु शक्ति संबंधी अध्ययन किए जाते हैं और शान्तिपूर्ण अनुसंधान-कार्यों के लिए रासायनिक तत्त्वों के रेडियमधर्मी आइसोटोप तैयार किए जाते हैं।

डा० भाभा 1955 में जेनेवा में होनेवाले प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु शक्ति सम्मेलन के अध्यक्ष बनाए गए। वे कुशल वैज्ञानिक और सफल प्रशासक थे। 24 जनवरी, 1966 को जेनेवा जाते हुए विमान-दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई।

भौतिकी (PHYSICS) : चीनी, रबर, कांच, सूत, चांदी, दूध, लकड़ी, मिट्टी, ये सब साधारण पदार्थ हैं। देखते ही आप बता सकते हैं कि यह अमुक पदार्थ है और यह अमुक। स्याही की दावात से सूत बनाने की बात कोई भी नहीं सोचेगा, और मोमबत्ती से चीनी बनाने की कोशिश भी कोई नहीं करेगा। लकड़ी कोई नहीं पीना चाहेगा, और न दूध से कोई आग जलाना चाहेगा। कांच का बल्ला कौन बनाना चाहेगा, या चांदी की गेंद बनाने का ख्याल किसे आएगा? वैज्ञानिकों के अनुसार हर पदार्थ के अपने-अपने गुण होते हैं। फिर भी सब पदार्थों में एक तरह की समानता भी होती है, जैसे उन सबका कुछ न कुछ भार होता है और वे सब कुछ न कुछ जगह घेरते हैं।

जब वैज्ञानिक सब चीज़ों को इकट्ठा करके उनके संबंध में समूह रूप में कुछ कहना चाहते हैं, तो वे द्रव्य या मैटर शब्द का प्रयोग करते हैं। हर पदार्थ द्रव्य है। भौतिकी अंशतः द्रव्य के अध्ययन की विद्या है। यह बताती है कि कुछ तरह के पदार्थ क्यों ठोस होते हैं, कुछ क्यों तरल होते हैं, और कुछ क्यों गैस के रूप में होते हैं। यह बताती है कि पानी क्यों भाप बन जाता है, फिर तरल कैसे हो जाता है, और वह जम क्यों जाता है। भौतिकी से हमें यह पता चलता है कि लोहे की तुलना में मक्खन आग पर रखते ही क्यों तरल हो जाता है। गरम चाय में चीनी डालते ही क्यों गल जाती है। इससे यह भी पता चलता है

कुछ प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री

कि गर्मी के दिनों में सर्दी की बजाय किसी टायर के फट जाने की ज़्यादा आशंका क्यों रहती है। भौतिकी ऐसे बहुत-से परिवर्तनों का कारण बताती है जो हमारे आस-पास होते रहते हैं।

भौतिकी में ऊर्जा या शक्ति (एनर्जी) का भी अध्ययन किया जाता है। प्रकाश, ताप या गर्मी, ध्वनि, बिजली, चुम्बकत्व, कक्षा में घूमनेवाले नक्षत्रों और परमाणु शक्ति का भी भौतिकी में अध्ययन किया जाता है। सबसे साधारण सवाल यह होता है : यह चीज़ कैसे काम करती है? बहुत बार इस सवाल का जवाब पाने के लिए हमें भौतिकी की शरण जाना पड़ता है। इनमें से बहुतेरे जवाबों का संबंध ऊर्जा से होता है। टेलीविज़न कैसे काम करता है? आवाज़ कितनी तेज़ी से एक स्थान से दूसरे स्थान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर पहुंचती है ? कैमरे द्वारा फोटो कैसे उतार लिया जाता है ? कॉस्मिक किरणें क्या हैं ? अंतरिक्ष-यात्रा की क्या समस्याएं हैं ? झरनों से बिजली के यंत्र कैसे चलते हैं। हवाई जहाज़ कैसे उड़ता है ? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जिनके जवाब भौतिकी विद्या या भौतिकशास्त्र द्वारा मिलते हैं।

हर आदमी को उसके चारों ओर जो कुछ हो रहा है उसकी जानकारी प्राप्त करने के लिए विज्ञान का सहारा लेना पड़ता है। हज़ारों वैज्ञानिकों ने मिलकर भौतिकी विद्या को वह रूप प्रदान किया है जिसे आज हम देख रहे हैं। कुछ के नाम अन्य लोगों से ज़्यादा प्रसिद्ध हैं। कुछ प्रसिद्ध भौतिकशास्त्रियों के चित्र साथ में दिए जा रहे हैं। इनके अतिरिक्त आर्किमीडीज़, गिल्बर्ट, गलवानी, हेनरी और आइंस्टाइन के नाम भी बहुत प्रसिद्ध हैं।

मनोविज्ञान (PSYCHOLOGY) : हम तोतों आदि को बोलना किस प्रकार सिखलाते हैं ? कुछ बालकों की पढ़ने में तबीयत क्यों नहीं लगती ? कुछ बच्चे अकेले ही क्यों खेलना चाहते हैं ? कुछ लोगों को हम पागल क्यों कहते हैं ?

इस तरह के सवाल बहुत-से लोगों के सामने आए होंगे और उनके उत्तर के बारे में भी उन्होंने सोचा होगा। यह कुछ अजीब-सी बात लगती है कि मनोविज्ञान, जो इन प्रश्नों के उत्तर देता है, केवल सौ वर्ष पुराना है। इसमें हम स्मरणशक्ति, कल्पना, भावावेगों और आचरण आदि के विषयों का अध्ययन करते हैं।

जब मनोविज्ञान का अध्ययन आरंभ नहीं हुआ था, तब लोगों के आचरण के संबंध में हमारी धारणाओं का आधार बड़ी विचित्र बातें थीं। यदि कोई दुर्व्यवहार करता था तो हम समझते थे कि वह किसी दुष्ट आत्मा के प्रभाव में आकर ऐसा कर रहा है। हज़ारों वर्ष तक लोग भूत-प्रेत आदि पर विश्वास करते रहे और समझते रहे कि वे लोगों के आचरण को प्रभावित करते हैं। एक और ख्याल यह था कि चन्द्रमा के प्रभाव के कारण लोगों के दिमाग पर असर पड़ता है।

मनोविज्ञान से दिमाग के रोगों के कारण खोजने में बड़ी मदद मिलती है। डाक्टरों का कहना है कि शरीर और मस्तिष्क के विश्राम का परस्पर बड़ा गहरा संबंध है। रोगों की चिकित्सा के अलावा, और भी बहुत-सी बातों में मनोविज्ञान सहायक होता है। अध्यापकों को पढ़ाने में मनोविज्ञान से बड़ी मदद मिलती है। इसके द्वारा माता-पिता यह जान सकते हैं कि बच्चों की मानसिक उन्नति हो रही है या नहीं। मालिक अपने कर्मचारियों को उनकी मानसिक क्षमता के अनुसार काम पर लगा सकता है। निर्माता अपने माल का इस ढंग से विज्ञापन कर सकता है कि वह अधिक मात्रा में बिके। वकीलों और जजों को मुवक्किलों और अपराधियों से सही बात जानने में मनोविज्ञान से मदद मिलती है।

मनोविज्ञान की बहुत-सी शाखाएं हैं। इसका कारण यह है कि लोग अलग-अलग क्षेत्रों में इस विद्या से सहायता लेना चाहते हैं। इनमें कुछ शाखाओं के नाम हैं : विज्ञापन-मनोविज्ञान, बाल-मनोविज्ञान, विधि-मनोविज्ञान, शिक्षा-मनोविज्ञान, जीव-मनोविज्ञान और चिकित्सा-मनोविज्ञान।

माइक्रोस्कोप (MICROSCOPE) : यह यूनानी भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है, जिनका अर्थ है 'छोटा' और 'देखना'। हम इसे सूक्ष्मदर्शी या सूक्ष्मदर्शक यंत्र भी कहते हैं।

अधिकतर माइक्रोस्कोपों में लेंस (Lenses) होते हैं। लेंस का काम है, जो कुछ हम उसमें से देखें उसे बड़ा करके दिखाना। सरलतम माइक्रोस्कोप में एक लेंस होता है। पर बहुधा लोग जब माइक्रोस्कोप की बात करते हैं तो उनका मतलब मिश्रित माइक्रोस्कोप से होता है। मिश्रित माइक्रोस्कोपों में लेंसों के कम से कम दो सेट होते हैं।

यहां चित्र में प्रदर्शित प्राथमिक माइक्रोस्कोप में लेंसों के दो सेट हैं। एक सेट नेत्रिका (Eyepiece) में और दूसरा लक्षक कांच (Objective) में। माइक्रोस्कोप की चौकी या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्लेटफार्म पर एक गोल छेद होता है। इसके नीचे लगा शीशा सरकाया जा सकता है, ताकि वह छेद में से प्रकाश को ऊपर भेज सके।

मान लीजिए कि कोई व्यक्ति अपने माइक्रोस्कोप से किसी पराग-कण को देखना चाहता है। पहले वह निर्मल कांच के एक टुकड़े पर, जिसे 'स्लाइड' कहते हैं, कुछ पराग-कण रख देता है। फिर वह पराग-कणों पर एक बूंद पानी टपका देता है। अगला काम होता है शीशे या प्लास्टिक के एक पतले टुकड़े से, जोकि 'आवरण शीशा' कहलाता है, पराग-कणों को ढक देना। यह सावधानी बरतनी चाहिए कि शीशे के नीचे हवा भरने से बुलबुले न उभरने पाएं। हवा का नन्हा-सा बुलबुला भी बड़ा होकर एक काली गेंद के बराबर दिखाई देता है। अतः आवरण शीशे को मज़बूती से नीचे दबा देना चाहिए।

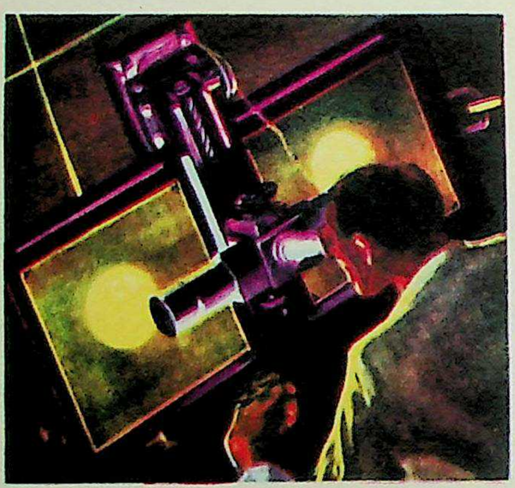

ज्योतिर्विद ब्लिक माइक्रोस्कोप का प्रयोग करते हैं।

अब पराग-कणों वाली स्लाइड को माइक्रोस्कोप की चौकी पर रख दिया जाता है। शीशा स्लाइड में से प्रकाश को ऊपर भेजता है और माइक्रोस्कोप की नली और लेंसों द्वारा वह मनुष्य की आंख तक पहुंचता है। लक्षक कांच को तब तक ऊपर-नीचे सरकाया जाता है जब तक कि पराग-कण स्पष्ट दिखाई न दे जाएं। सरकाने का काम छोटे-छोटे पहियों से किया जाता है।

श्रेष्ठतर 'मिश्रित माइक्रोस्कोप' में दो, तीन, यहां तक कि चार लक्षक कांच भी होते हैं। पर एक बार एक का ही प्रयोग किया जा सकता है। विभिन्न लक्षक कांचों का वर्द्धन-सामर्थ्य भी भिन्न-भिन्न होता है। कई माइक्रोस्कोपों में दो नेत्रिकाएं होती हैं, ताकि प्रयोक्ता जिसे देखना चाहता है उसका उभयनत्रीय रूप देख सके। सर्वोत्तम माइक्रोस्कोप से किसी छोटी-सी वस्तु को इतना बड़ा करके दिखाया जा सकता है कि उसका व्यास अपने वास्तविक माप से 2,500 गुना बड़ा दिखाई देने लगे।

माइक्रोस्कोप की और भी किस्में हैं। उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप। इसमें निरीक्षणीय वस्तु के पीछे इलेक्ट्रॉनों की धारा छोड़ी जाती है। वे इलेक्ट्रॉन एक विशेष पर्दे पर चित्र उभारते हैं। इलेक्ट्रॉन-धारा को जिस विधि से मोड़ा जाता है, उसके परिणाम-स्वरूप यह चित्र बहुत बढ़ा हुआ होता है।

इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप के द्वारा किसी सूक्ष्म वस्तु को 1,00,000 गुना बड़ा कर दिखाना संभव है। इसके द्वारा किसी पदार्थ के अणु तक देखे जा सकते हैं।

ब्लिक माइक्रोस्कोप ज्योतिर्विदों के काम आता है। इसके द्वारा वे नक्षत्रों के चित्रों का अध्ययन करते हैं। प्लूटो (यम) ग्रह की खोज भी इसी प्रकार के विशेष माइक्रोस्कोप द्वारा की गई थी।

माइक्रोस्कोप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। रोगों से लड़ने में ये बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं। अनेक आविष्कारों में इनका योग रहा है। (देखें : लेवेनहोक)

मूलतत्त्व (ELEMENTS) : प्राचीन भारतीय विचारक यह मानते थे कि दुनिया की सारी चीज़ें केवल पांच पदार्थों से बनी हैं। ये हैं पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इन्हें वे तत्त्व कहते थे। प्राचीन यूनानियों को इनमें से चार का ही ज्ञान था। आकाश को वे मूलतत्त्व या तत्त्व में नहीं गिनते थे। इन प्राचीन भारतीय व यूनानी विचारकों का मत कुछ अंशों में ठीक था। दुनिया की लाखों-करोड़ों चीज़ें कुछ बहुत ही सादे पदार्थों से बनी हैं। इन्हें हम मूलतत्त्व कहते हैं। इन्हीं मूलतत्त्वों से सारा ब्रह्माण्ड बना हुआ है। लेकिन प्राचीन भारतीय व यूनानी विचारकों को इस बात का सही ज्ञान नहीं था कि ये मूलतत्त्व वास्तव में क्या हैं और इनकी संख्या कितनी है।

मूलतत्त्वों की संख्या सौ से कुछ ऊपर ही है। कई साल तक वैज्ञानिकों का यह विचार था कि इनकी संख्या 92 ही है। वास्तव में प्राकृतिक मूलतत्त्व केवल 92 ही हैं। लेकिन अनेक मूलतत्त्वों की रचना वैज्ञानिकों ने प्रयोग-शालाओं में की है।

समस्त मूलतत्त्वों में से तीन-चौथाई से अधिक ठोस हैं। शेष मूलतत्त्वों में से अधिकांश गैस के रूप में हैं। उदाहरण के लिए कार्बन और लोहा ठोस हैं। ऑक्सीजन और क्लोरीन गैसें हैं। केवल दो तत्त्व द्रव रूप में हैं। ये तत्त्व हैं, पारा और ब्रोमाइन।

तालिका में कुछ मूलतत्त्वों के नाम दिए हुए हैं। इन्हें वैज्ञानिक जिन संकेतों द्वारा लिखते हैं उन्हें भी साथ में दिया गया है। इनमें कुछ मूलतत्त्वों के संकेत-चिह्न इनके अंग्रेज़ी नामों के पहले या पहले और बाद के किसी अक्षर को लेकर बनाए गए हैं—जैसे आयोडीन का संकेत-चिह्न 'I' और ब्रोमाइन का 'Br'। परन्तु कुछ के संकेत-चिह्न उनके लैटिन नामों से लिए गए हैं—जैसे लोहा, जिसे लैटिन में फेरम (Ferrum) कहते हैं। लोहे का संकेत-चिह्न है 'Fe'। इसी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रमुख मूलतत्त्वों की तालिका

मूलतत्त्व	संकेत-चिह्न
*ऐल्युमिनियम	Al
अमेरीसियम	Am
आर्गन	A
आर्सेनिक	As
बर्केलियम	Bk
ब्रोमाइन	Br
*कैल्सियम	Ca
कैलिफोर्नियम	Cf
†कार्बन	C
क्लोरीन	Cl
क्रोमियम	Cr
कोबाल्ट	Co
तांबा	Cu
फ्लुओरिन	F
सोना	Au
हीलियम	He
†हाइड्रोजन	H
आयोडीन	I
*लोहा	Fe
सीसा	Pb
*मैग्नीशियम	Mg
मैंगनीज़	Mn
पारा	Hg
मोलिब्डिनम	Mo
नेपट्यूनियम	Np
निकल	Ni
†नाइट्रोजन	N
†*ऑक्सीजन	O
फास्फोरस	P
प्लाटिनम	Pt
प्लूटोनियम	Pu
*पोटाशियम	K
रेडियम	Ra
*सिलिकॉन	Si
चांदी	Ag
*सोडियम	Na
गंधक	S
टीन	Sn
टाइटेनियम	Ti
टंगस्टन	W
यूरेनियम	U
जस्ता	Zn

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तरह सोने का लैटिन नाम 'ऑरम' (Aurum) है। इसका संकेत-चिह्न 'Au' बनाया गया है।

तालिका में कुछ शब्दों को रेखांकित किया गया है। ये ऐसे मूलतत्त्व हैं जिन्हें प्रयोगशालाओं में बनाया गया है।

जैसे दूसरी सारी चीज़ें मूलतत्त्वों से बनी हैं, वैसे ही हमारे शरीर की रचना भी मूलतत्त्वों से हुई है। हमारे शरीर में जो मूलतत्त्व पाए जाते हैं उनमें से चार के पहले (†) चिह्न लगे हुए हैं। ये मूलतत्त्व हमारे शरीर में अधिक मात्रा में पाए जाते हैं।

तालिका में जिन मूलतत्त्वों के साथ तारे का चिह्न (*) लगाया गया है, वे धरती की पपड़ी में बहुत अधिक

पाए जाते हैं। इनमें ऑक्सीजन सबसे अधिक मात्रा में पाई जाती है। ऑक्सीजन के बाद सिलिकॉन का नम्बर आता है।

रसायनशास्त्र की कहानी एक तरह से एक मूलतत्त्व के बाद दूसरे मूलतत्त्व की खोज की कहानी है। कुछ वैज्ञानिक तो मात्र किसी एक मूलतत्त्व का पता लगाने के कारण ही मशहूर हो गए हैं। जैसे, अंग्रेज़ वैज्ञानिक प्रीस्टले अपनी ऑक्सीजन की खोज के कारण ही मशहूर हो गया। कुछ मूलतत्त्वों का पता बहुत मुश्किल से लगा। इसका कारण यह है कि ये किसी अन्य मूलतत्त्व के साथ मिले होते हैं।

हीलियम मूलतत्त्व को सबसे पहले सूरज में पाया गया। फिर बाद में इसे पृथ्वी पर भी खोज निकाला गया। वैज्ञानिकों ने सूर्य के प्रकाश का अध्ययन करके इसे खोज निकाला था। हीलियम धरती पर बहुत कम पाया जाता है, लेकिन सूरज का लगभग आधा भाग हीलियम का ही बना हुआ है। हीलियम के अतिरिक्त सूरज में दूसरा मूलतत्त्व हाइड्रोजन है। यह भी लगभग सूरज का आधा भाग है। सूरज में पाए जानेवाले दूसरे सभी मूलतत्त्व मिलकर सूरज का केवल लगभग सौवां भाग हैं।

यही बात समस्त ब्रह्माण्ड के बारे में कही जा सकती है। करोड़ों-अरबों तारे अधिकतर हाइड्रोजन और हीलियम के द्वारा ही बने हैं। अगर समूचे ब्रह्माण्ड के दूसरे सारे मूलतत्त्वों को जोड़ लिया जाए तो भी हाइड्रोजन और हीलियम उनसे निन्यानबे गुना अधिक बैठेंगे।

(देखें : यौगिक)

मेंडेल, ग्रेगर (GREGOR MENDEL 1822-1884) : क्या कारण है कि एक ही कुतिया के एक पिल्ले का रंग एक तरह का तो दूसरे का दूसरी तरह का होता है? क्यों ओक के दो पेड़ एक जैसे नहीं होते? ऐसे प्रश्नों ने चिरकाल तक वैज्ञानिकों को उलझन में डाले रखा। इन प्रश्नों के कुछ उत्तर खोज निकालनेवाला पहला वैज्ञानिक था एक आस्ट्रियन साधु, जिसका नाम ग्रेगर मेंडेल था।

मेंडेल अपना अधिकतर समय मठ के बगीचे में पेड़-पौधों पर प्रयोग करने में व्यतीत करता था। उसने मटर की कई किस्मों का संकरण किया और उसके परिणामों का रिकार्ड रखा। इन परीक्षणों से उसे इस बात की कुछ जानकारी हुई कि पौधों और पशुओं में उनके पूर्वजों के आकार-प्रकार और रंग-ढंग वंशानुक्रम से कैसे आते हैं।

मेंडेल की गवेषणाएं 1866 में प्रकाशित हुईं। किन्तु लगभग 50 वर्ष तक उसके कार्य की ओर किसीका ध्यान तक न गया। तब तक दूसरे वैज्ञानिक भी मेंडेल की तरह ही प्रयोग कर चुके थे और उनके निष्कर्ष मेंडेल से मिलते-जुलते थे। तब मेंडेल के कार्य की कद्र हुई और लोगों ने उसे वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रगति का एक चरण बताया।

मोर्स, सैम्युएल फिन्ले ब्रीस (SAMUEL FINLEY BREESE MORSE 1791-1872) : मोर्स एक चित्रकार था और तीन वर्ष तक यूरोप की चित्रशालाओं का निरीक्षण करने के बाद 1832 में वह न्यूयार्क लौट रहा था। रास्ते में जहाज़ पर मोर्स ने चार्ल्स टी० जैक्सन नामक एक यात्री को यह कहते सुना कि उसके पास एक विद्युत्-चुम्बक है। उन दिनों विद्युत्-चुम्बक एक नई चीज़ थी। कालेज में भी विद्युत् और चुम्बक में मोर्स की रुचि थी। इसलिए एक नये प्रकार के चुम्बक की बात सुनकर उसका मन उधर आकृष्ट हो गया। एक दिन किसीने जैक्सन से पूछा, "भला तुम्हारे चुम्बक में बिजली दौड़ने में कितनी देर लगती है?" जैक्सन ने कहा, "बिजली इतनी तेज़ी से प्रवाहित होती है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि उसे इसमें ज़रा भी देर नहीं लगती।" मोर्स को तत्काल सूझ गया कि क्यों न ऐसे तेज़ प्रवाहक से संदेश भेजने का काम लिया जाए? उसने तत्काल अपने विचार को कार्यान्वित करना आरंभ कर दिया।

मोर्स ने अपना सारा अतिरिक्त समय इस नये विषय में लगा दिया। काम सरल न था क्योंकि उसे सब कुछ हाथ से करना पड़ता था। उन दिनों तांबे का तार तक खरीदना संभव न था। फिर भी 1835 में उसने अपना पहला तारयन्त्र पूर्ण कर लिया जो ठीक काम करता था।

मोर्स अपने तारयन्त्र पर काम करते हुए

प्रारंभिक तारयन्त्र

आधुनिक तारयन्त्र

बालचर द्वारा झंडे से मोर्स-कोड का प्रयोग

जब उसे निश्चय हो गया कि उसकी सूझ काफी अच्छी है तो मोर्स ने अमरीकी कांग्रेस को वाशिंगटन से बाल्टिमोर तक तार-लाइन लगाने के लिए कहा। उसने अपने आविष्कार के पेटेंट के लिए आवेदन भी दे दिया। 1840 तक यह पेटेंट प्रदान किया गया, और आखिर वह तार-लाइन भी बनकर रही। उसपर जो पहला संदेश भेजा गया वह था—'भगवान का यह कैसा चमत्कार है।'

मोर्स एक अच्छा कलाकार था, किन्तु यह तार का आविष्कार ही था जिसने उसे प्रसिद्ध बना दिया। उसने अपने जीते-जी अकेले अमरीका में 1,00,000 मील से भी अधिक लंबी तार-लाइन लगते देख ली, और अपने कानों से यह सुन लिया कि उसका नाम संसार के महान आविष्कारकों में लिया जाता है।

मौसम-विज्ञान (METEOROLOGY) : मौसम का अध्ययन मौसम-विज्ञान कहलाता है। यह एक नवीनतम विज्ञान है। लोग बहुत पहले से उन नक्षत्रों का अध्ययन करते रहे हैं जो हमसे करोड़ों मील दूर हैं। पर यह बहुत बाद की बात है कि उन्होंने यह देखने का यत्न किया कि हमारे आसपास का मौसम इतनी जल्दी क्यों बदलता रहता है।

अब मौसम-विशेषज्ञ मौसम-परिवर्तन के कारणों के विषय में बहुत-कुछ जान गए हैं। वे बता सकते हैं कि अगले एक या दो दिनों में मौसम कैसा रहेगा। वे हमें आनेवाले तूफानों की चेतावनी दे सकते हैं। मौसम में परिवर्तन करने की दिशा में थोड़ा-बहुत यत्न भी किया जा चुका है। वैज्ञानिक बादलों से नकली वर्षा करवाने में सफल हुए हैं। समय आएगा जब वे अंधड़ों को तितर-बितर कर सकेंगे और बर्फ के भारी तूफानों को नगरों से दूर रख सकेंगे। तब आगामी कई सप्ताहों के मौसम की ठीक-ठीक भविष्यवाणी करना भी संभव हो जाएगा।

(देखें : बैरोमीटर)

यौगिक (COMPOUNDS) : यदि हम संसार के सब पदार्थों के नामों को लिखें तो ऐसी बहुत-सी पुस्तकें भर जाएंगी। ये सब पदार्थ केवल उन लगभग सौ सरल पदार्थों से बने हैं जिन्हें हम मूलतत्त्व कहते हैं। अधिकतर पदार्थ यौगिक अथवा यौगिकों के मिश्रण हैं। यौगिक दो या अधिक मूलतत्त्वों के संयोजन से बनता है।

किसी मूलतत्त्व के सबसे छोटे कण को परमाणु कहते हैं। यौगिक का सबसे छोटा कण अणु कहलाता है। यौगिक के प्रत्येक अणु में कम से कम दो प्रकार के परमाणु होते हैं।

किसी यौगिक को देखकर कोई यह नहीं बता सकता कि उसमें कौन-से मूलतत्त्व हैं। सब जानते हैं कि पानी एक यौगिक है। वह हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का बना है। ये दोनों रंगहीन गैसें हैं। शर्करा और भी आश्चर्य-जनक है। इसमें पानी की ही भांति हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होती हैं। इसमें कार्बन भी होता है। कार्बन साधारणतया काला होता है। काजल कार्बन है। कार्बन मीठा नहीं होता। हाइड्रोजन और ऑक्सीजन भी मीठी नहीं होतीं। पर शर्करा मीठी होती है।

किसी यौगिक का अणु अपने प्रत्येक मूलतत्त्व के परमाणुओं की निश्चित संख्या से बनता है। कार्बन डाइ-ऑक्साइड हवा की एक गैस है। यह अहानिकर है। यदि वायु में कार्बन डाइऑक्साइड न होती तो न पौधे उगते और न वे हमारे लिए खाद्य तैयार करते। कार्बन डाइ-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऑक्साइड के एक अणु में ऑक्सीजन के दो परमाणु और कार्बन का एक परमाणु होता है। कार्बन मोनोक्साइड गैस भी कार्बन और ऑक्सीजन से बनी है। पर इसमें कार्बन के एक परमाणु के साथ ऑक्सीजन का केवल एक परमाणु होता है। यह एक बहुत विषैली गैस है।

वैज्ञानिक यौगिकों के नामों को एक संक्षिप्त रीति से लिखते हैं। H_2O पानी है। '2' का अंक यह दर्शाता है कि एक ऑक्सीजन परमाणु के पीछे हाइड्रोजन के दो परमाणु होते हैं। $C_{12}H_{22}O_{11}$ गन्ने की शर्करा है। गन्ने की शर्करा के एक अणु में कार्बन के 12 परमाणु, हाइड्रोजन के 22 परमाणु और ऑक्सीजन के 11 परमाणु होते हैं। CO_2 कार्बन डाइऑक्साइड है। CO कार्बन मोनोक्साइड है।

चित्र में चार और यौगिक दिखाए गए हैं। ये नमक, क्वार्ट्ज़, कार्बन टैट्राक्लोराइड, और पारे का लाल ऑक्साइड हैं।

नमक (NaCl) सोडियम और क्लोरीन से बना है। सोडियम एक विषैली धातु और क्लोरीन एक विषैली गैस है। नमक इनमें से किसी मूलतत्त्व के समान नहीं है। वह विषैला नहीं है। वास्तव में, हमारे शरीर को जीवित रखने के लिए उसकी आवश्यकता है।

क्वार्ट्ज़ (SiO_2) संसार में सबसे अधिक सामान्य यौगिक है। यह ऑक्सीजन और सिलिकॉन का बना है। शुद्ध सिलिकॉन को केवल कुछ ही लोगों ने देखा है। पर सिलिकॉन के इस यौगिक को सबने देखा है। रेत के अधिकतर कण क्वार्ट्ज़ के नन्हे खंड होते हैं।

HgO पारे का लाल ऑक्साइड है। कौन सोचेगा कि यह लाल चूर्ण चांदी के रंग के द्रव पारे और रंगहीन ऑक्सीजन का बना है। और कौन कल्पना करेगा कि रंगहीन कार्बन टैट्राक्लोराइड (CCl_4) काले कार्बन और हरी-सी क्लोरीन गैस से बना है।

प्रयोगशालाओं में प्रतिदिन नये यौगिक बनाए जा रहे हैं। मूलतत्त्वों को नई विधियों से संयोजित किया जा रहा है। इससे कुछ आश्चर्यजनक पदार्थ मिले हैं। प्लास्टिक उन्हींमें से है। (देखें : मूलतत्त्व)

रंग (COLOUR) : रंग को समझने के लिए हमें यह जानना चाहिए कि सूर्य के प्रकाश में बहुत-से रंग होते हैं। तिकोना कांच—प्रिज़्म—और हवा में तिरती हुई पानी की नन्ही बूंदें सूर्य के प्रकाश को उसके रंगों में खंडित कर देती हैं। अधिकतर कृत्रिम प्रकाश बहुत-कुछ सूर्य के प्रकाश के समान होता है।

जब सूर्य का प्रकाश गुलाब के चित्र पर पड़ता है तो यह चित्र सूर्य के सम्पूर्ण प्रकाश को परावर्तित नहीं करता। पंखुड़ियों पर जो स्याही लगाई गई है वह सूर्य के प्रकाश के अधिकतर रंगों को सोख लेती है, केवल लाल किरणों को परावर्तित करके हमारी आंखों में भेजती है। क्योंकि लाल किरणें हमारी आंखों में पहुंचती हैं, इसलिए पंखुड़ियां हमें लाल दिखाई देती हैं। पत्तियां लाल किरणों को सोख लेती हैं और हरी किरणों को हमारी आंखों में भेजती हैं। इसलिए वे हमें हरी दिखाई देती हैं। वस्तु से जिस रंग की किरणें निकलकर हमारी आंखों में पहुंचती हैं, वह वैसी ही दिखाई देती है।

सफेद प्रकाश इन्द्रधनुष के सब रंगों का मिश्रण है। इस पुस्तक का पृष्ठ सफेद इसलिए है कि वह पूरे प्रकाश को हमारी आंखों को भेजता है। अक्षर काले इसलिए हैं कि वे प्रकाश के सब रंगों को सोख लेते हैं, किसीको

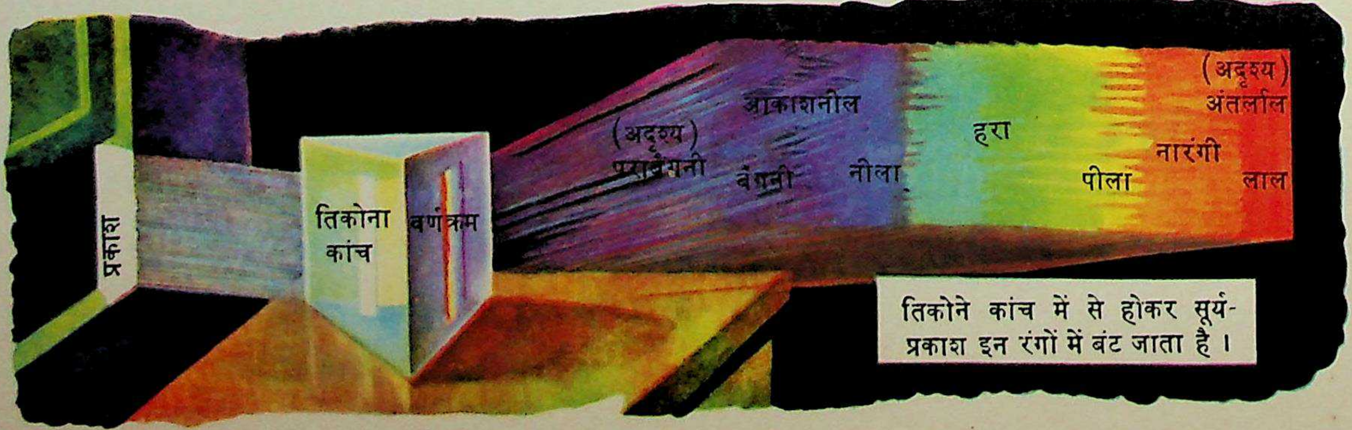

तिकोने कांच में से होकर सूर्य-प्रकाश इन रंगों में बंट जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

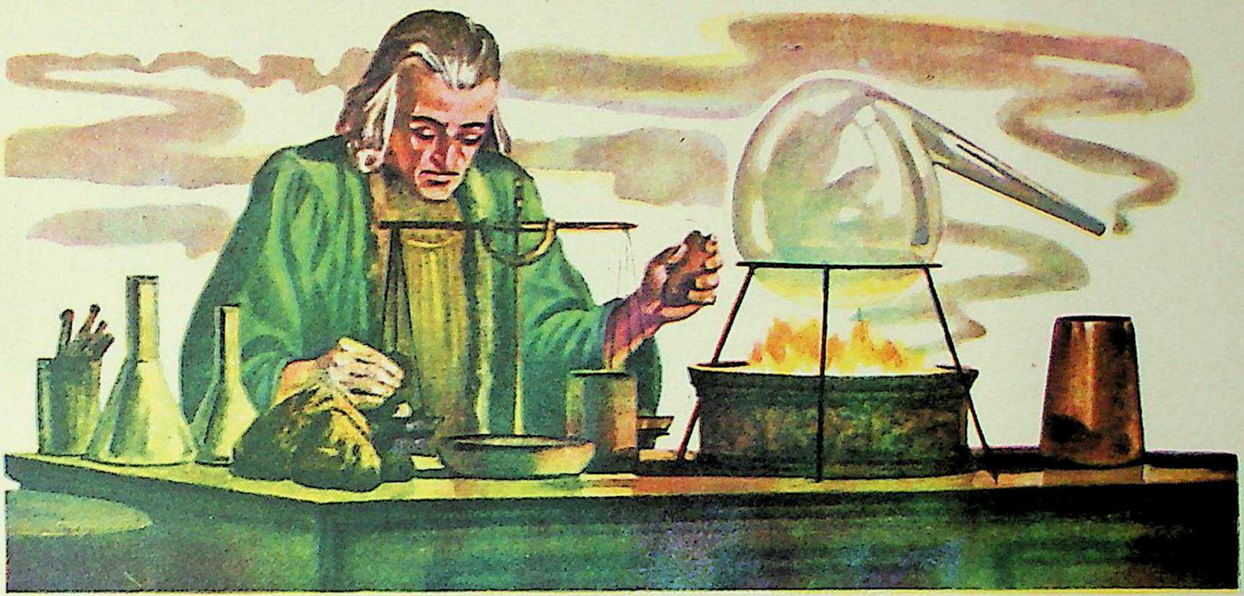

प्राचीन काल का एक रसायनज्ञ अपनी प्रयोगशाला में

हमारी आंखों तक नहीं भेजते ।

कुछ ऐसे दीप हैं जो सूर्य के प्रकाश की भांति सफेद प्रकाश नहीं देते। पारे के वाष्प-दीप के प्रकाश में लाल किरणें नहीं होतीं । इस प्रकाश में मनुष्य के ओंठ बेंगनी और कपोल नीले दिखाई देते हैं। कुछ दीप केवल लाल किरणें देते हैं। उनके प्रकाश में गुलाब की पंखुड़ियां और भी लाल दिखाई देती हैं। उसमें हरा रंग नहीं होता, इसलिए पत्तियां हमें हरा रंग नहीं भेज सकतीं । वे काली दिखाई देती हैं ।

यदि हम एक चकती पर इन्द्रधनुष के सब रंग बनाएं और उसे बहुत तेज़ी से घुमाएं, तो वे रंग हमें अलग-अलग नहीं दिखाई देते। हमारी आंखें उनको मिला लेती हैं और चकती हमें सफेद दिखाई देती है ।

रसायन-विज्ञान (CHEMISTRY) : सैकड़ों वर्ष से मनुष्य को यह जिज्ञासा रही है कि वस्तुएं किसकी बनी हैं। वह यह जानकर ही सन्तुष्ट नहीं है कि मकान ईंटों का बना है । वह पूछता है कि ईंटें किसकी बनी हैं ? वे मिट्टी की बनी हैं । यह भी काफी नहीं है । वह जानना चाहता है कि मिट्टी किसकी बनी है ? इस प्रकार की उत्सुकता से रसायन-विज्ञान का जन्म हुआ है ।

रसायनज्ञों ने पता लगाया है कि संसार की सब वस्तुएं लगभग 100 सरल पदार्थों से ही बनी हैं । वे इनको मूल-तत्त्व कहते हैं ।

रसायनज्ञ वस्तुओं को खंडित करके मालूम करते हैं कि उनमें कौन-से मूलतत्त्व हैं । वे रासायनिक परिवर्तनों की व्याख्या करते हैं, और नई उपयोगी वस्तुएं बनाने की विधियां भी निकालते हैं ।

जब किसी परिवर्तन के अंत की वस्तुएं आरंभ की वस्तुओं से भिन्न होती हैं, तो वह परिवर्तन रासायनिक परिवर्तन होता है । बच्चे के हाथ से दूध का प्याला छूट जाता है । प्याला टूट जाता है । दूध फर्श पर फैल जाता है । प्याला नष्ट हो गया है, पर उसकी चीनी मिट्टी अब भी चीनी मिट्टी है । दूध बेकार हो गया है, पर वह अब भी दूध है ।

कागज़ का एक टुकड़ा गलती से अंगीठी में गिर पड़ता है और जल जाता है । उसका यह परिवर्तन चीनी और दूध के परिवर्तन से भिन्न है । कागज़ अब कागज़ नहीं है । उसके स्थान पर अब थोड़ी-सी राख है, और कुछ अदृश्य गैसें हैं जो हवा में मिल गई हैं । जलना रासायनिक परिवर्तन है ।

हमारे चारों ओर सदा रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं । लोहे में ज़ंग लगता है । कपड़े का रंग हलका पड़ता है । दूध जमता है । फल सड़ते हैं । हरे पौधे हवा तथा भूमि से खाद्य-पदार्थ बनाते हैं । ये सब रासायनिक परिवर्तन हैं ।

हमारे जीवन-भर प्रत्येक क्षण हमारे शरीर के भीतर रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं । खाए हुए भोजन में से कुछ मांस, रक्त और हड्डी में बदलता रहता है । उसमें से कुछ धीरे-धीरे जलता रहता है, जिससे हमें काम करने और खेलने के लिए शक्ति मिलती रहती है ।

कुछ रासायनिक परिवर्तन गर्मी से होते हैं । उदाहरण के लिए, गर्मी की सहायता से हम लोहे को उन पदार्थों से अलग करते हैं जिनसे वह लोह खनिज में जुड़ा होता है । प्रकाश कुछ रासायनिक परिवर्तनों को जन्म देता है । इनके कारण ही फोटोग्राफ लेना संभव होता है । बिजली भी रासायनिक परिवर्तन पैदा करती है । छुरियों, कांटों और चम्मचों पर चांदी की पतली तह ऐसे ही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे दैनिक जीवन में रसायन-विज्ञान

कोयले से रसायनज्ञ रंजक द्रव्य प्राप्त करते हैं जो ऊन और रेशम रंगने और रोगन व स्याही बनाने के काम आते हैं। शीतल पेयों में कार्बन डाइऑक्साइड मिलाई जाती है। दूध में कैल्सियम होता है। मक्खन का सुनहरी रंग एक रासायनिक रंजक की देन है। चीनी में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होती है। धातुओं को रासायनिक प्रक्रिया से शुद्ध किया जाता है। मिट्टी से ऐल्युमिनियम प्राप्त होता है। बर्फ के क्यूब रेफ्रीजरेटर में एक रासायनिक द्रव्य फ्रिओन से बनते हैं।

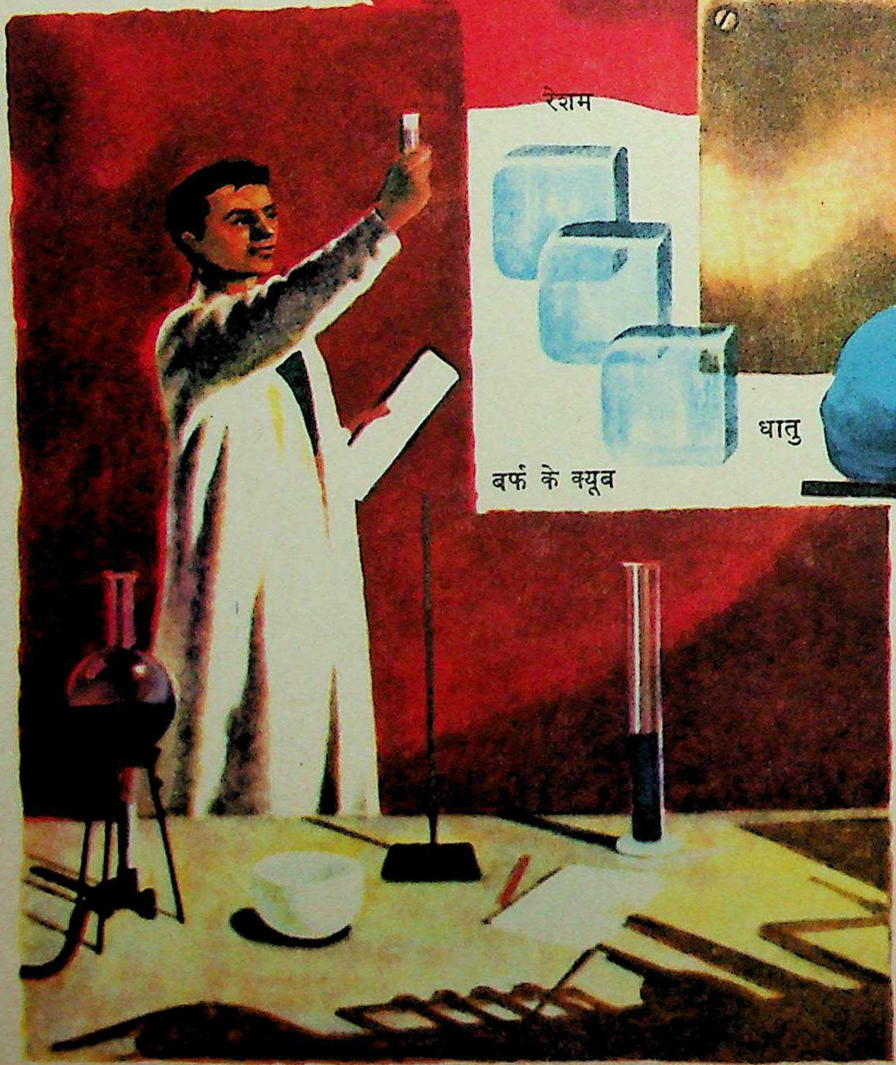

रसायनज्ञ अपने विशिष्ट उपकरणों से यह पता लगाते हैं कि कौन-सा पदार्थ किन-किन मूलतत्त्वों से बना है और वे उसमें किस अनुपात में हैं। वे प्रत्येक पदार्थ का ठीक-ठीक परिमाण मालूम कर सकते हैं। उनकी तराजुओं से एक बाल तक का वज़न जाना जा सकता है। रसायनज्ञों की यह भी कोशिश रहती है कि चीज़ें पहले से सस्ती और बेहतर होती जाएं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिवर्तन की सहायता से चढ़ाई जाती है।

एक समय था जब रसायनज्ञ केवल स्कूलों और कालेजों में मिलते थे। अब रसायनज्ञ तरह-तरह के माल बनानेवाली बड़ी कम्पनियों में काम करते हैं।

राइट बन्धु (WILBUR WRIGHT 1867–1912 ; ORVILLE WRIGHT 1871–1948) : विल्बर राइट और ओरविल राइट दो भाई थे। 14 दिसम्बर, 1903 को ये दोनों अमरीका के उत्तरी कैरोलिना के किटीहॉक नामक रेतीले मैदान में अपने बनाए हुए हवाई जहाज़ को उड़ाने के लिए पहुंचे। विल्बर और ओरविल ने यह फैसला करने के लिए कि पहली बार हवाई जहाज़ में कौन चढ़ेगा, सिक्का उछाला। विल्बर की जीत हुई। वह हवाई जहाज़ में सवार हुआ और उसने इंजन चालू कर दिया। हवाई जहाज़ धरती से ऊपर उठा, लेकिन इंजन में कोई गड़बड़ी हो गई। हवाई जहाज़ हवा में सिर्फ $2\frac{1}{2}$ सेकंड ही रहा। राइट बन्धुओं ने इस असफलता की परवाह नहीं की।

तीन दिन बाद हवाई जहाज़ दूसरी उड़ान के लिए तैयार था। अब ओरविल की बारी थी। हवा तेज़—कोई 27 मील प्रति घंटे की रफ्तार से चल रही थी। इंजन चालू हुआ और हवाई जहाज़ पथ पर धीरे-धीरे बढ़ने लगा। चालीस फुट जाने पर वह ज़मीन से ऊपर उठ गया। नीचे विल्बर उसके साथ-साथ दौड़ता रहा। बारह सेकंड में हवाई जहाज़ 120 फुट उड़ा।

यह हवा में उड़ने की पहली घटना नहीं थी। लोग गुब्बारों से उड़ चुके थे। लेकिन गुब्बारे से उड़ना सही मानों में उड़ना नहीं, बल्कि हवा में तैरना था। ग्लाइडर (बिना इंजन के हवाई जहाज़) द्वारा भी लोग हवा में उड़ चुके थे। लेकिन ग्लाइडर की उड़ान बहुत हद तक हवा के प्रवाहों द्वारा नियंत्रित थी। यहां पहली बार हवा से भारी एक मशीन अपनी शक्ति के बल पर एक आदमी को लेकर हवा में उड़ी थी।

उसी दिन—17 दिसम्बर को—ओरविल ने एक, और विल्बर ने दो उड़ानें और भरीं। सबसे लम्बी उड़ान विल्बर की रही। यह 59 सेकंड की थी और इसमें हवाई जहाज़ 852 फुट उड़ा था।

विल्बर और ओरविल की ओहायो के डेटन नामक स्थान में साइकिलों की दूकान थी। किटीहॉक में वे अपने हवाई जहाज को उड़ाने की इसलिए कोशिश कर रहे थे कि अमरीका के मौसम ब्यूरो ने उन्हें बताया था कि वहां हवा का बहाव उनके प्रयोगों के लिए अनुकूल रहेगा। राइट बन्धुओं को मिली यह सफलता कोई संयोग की बात नहीं थी। वे अपने अध्ययन और प्रयोग में वर्षों से लगे थे।

उनके पिता पादरी थे। उन लड़कों को हाईस्कूल तक की भी शिक्षा नहीं मिली थी। लेकिन अध्ययन में उनकी गहरी रुचि थी। उन्हें कल-पुर्ज़ों से उलझने का भी चस्का था। अध्ययन करते हुए उन्हें उड़ान के कई प्रयोगों के विवरण मिले। वे उन प्रयोगों की असफलता पर आपस में बातचीत करते रहते थे। चार वर्ष तक इस संबंध में पढ़ने और चर्चा करने के बाद, उन्होंने अनुभव किया कि अब इस काम में उनके हाथ डालने का समय आ गया है। उन्होंने शुरूआत ग्लाइडर से की। पहले उन्होंने पांच फुट का एक ग्लाइडर बनाया। उसे उन्होंने पतंग की तरह उड़ाया और वे ध्यान से उसका निरीक्षण करते रहे। फिर उन्होंने एक इतना बड़ा ग्लाइडर बनाया जो एक आदमी को लेकर उड़ सके।

राइट बन्धुओं ने यह समझ लिया था कि हवाई जहाज़ बनाने से पहले उन्हें हवा के दबाव के बारे में बहुत-कुछ जानना होगा। इसके अध्ययन के लिए उन्होंने एक हवाई सुरंग तैयार की। उनकी समझ में यह बात आ गई कि उन्हें दूकानों पर मिलनेवाले पंखों से कहीं अच्छे पंखों

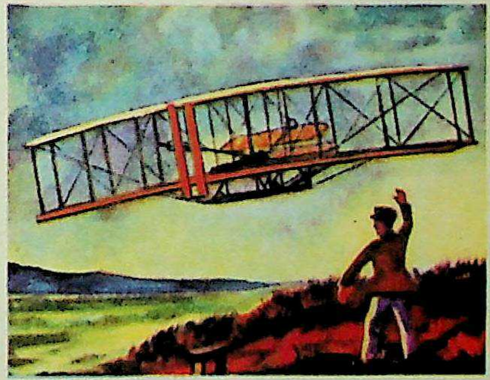

आखिर राइट बंधुओं का जहाज हवा में उड़ने लगा।

की ज़रूरत पड़ेगी। उन्होंने एक नया नमूना तैयार किया। आखिर उनका परिश्रम और अध्ययन सार्थक हुआ।

राइट बन्धुओं की चारों ओर धूम मच गई। आज किटीहॉक में किल डेविल पहाड़ी पर उनका सुन्दर स्मारक बना हुआ है।

रॉकेट (ROCKETS) : रॉकेटों को मिसाइल या प्रक्षेपणास्त्रों के रूप में काम में लाने का विचार कोई सात सौ बरस पहले चीन में किया गया था। चीन के बनाए रॉकेट का ईंधन कोयला और गंधक था। इसके साथ ऑक्सीजन उत्पन्न करनेवाला एक रसायन मिलाया जाता था, जो तुरन्त जल पड़ता था। ईंधन के जलने से जो गैस पैदा होती थी, वह तेज़ी से एक ट्यूब में से बाहर छूटती थी। उसके धक्के से रॉकेट विपरीत दिशा में ऊपर जाता था। रॉकेटों के ऊपर के हिस्सों में बारूद-भरा बम लगा होता था। जैसे ही रॉकेट का अगला भाग किसी चीज़ से टकराता था, वह धड़ाके की आवाज़ के साथ फूट पड़ता था।

लेकिन रॉकेट दूसरे महायुद्ध के पहले तक महत्त्वपूर्ण नहीं समझे जाते थे। दूसरे महायुद्ध में जर्मन रॉकेटों ने इंग्लैंड के नगरों को बड़ी हानि पहुंचाई। दूसरे महायुद्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

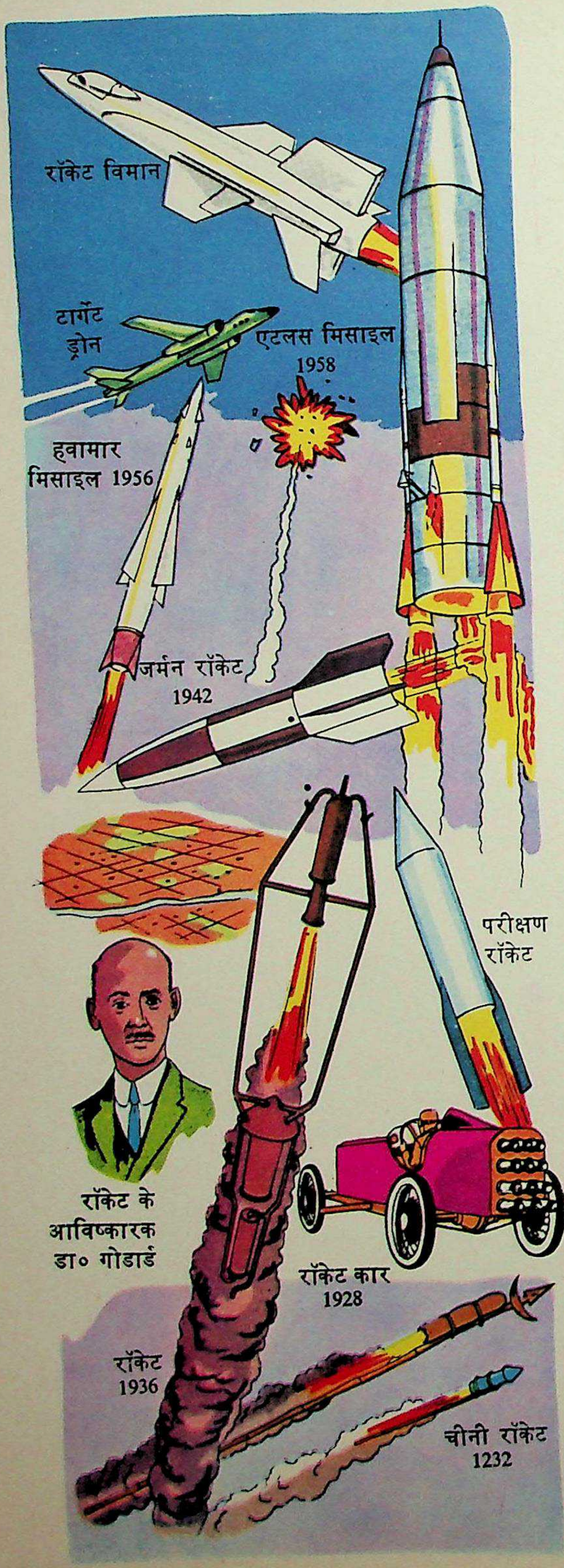

के बाद रॉकेटों के क्षेत्र में बहुत-से प्रयोग किए गए।

रॉकेटों की ज़रूरत अस्त्र के रूप में ही नहीं, बल्कि कृत्रिम उपग्रहों को छोड़ने के लिए भी थी। इसके अलावा, अंतरिक्ष-यात्रा रॉकेटों पर ही निर्भर करती है। हवाई जहाज़ पृथ्वी के वायुमण्डल को नहीं छोड़ सकते, क्योंकि उनको वायु का दबाव ही संभाले रहता है। लेकिन रॉकेट को चलने के लिए वायुमण्डल या उसके दबाव की कोई ज़रूरत नहीं पड़ती।

सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार ऐसे रॉकेटों का बनना था जिनमें ईंधन एक बार में ही नहीं, बल्कि थोड़ा-थोड़ा कई बार में जलता है और हर बार रॉकेट की गति तेज़ होती जाती है। यह रॉकेट 'बहुक्रमी' (मल्टीस्टेज) कहलाता है।

अक्तूबर, 1958 में अमरीका ने 'पायनीयर प्रथम' नाम का रॉकेट छोड़ा। इस रॉकेट को चन्द्रमा तक पहुंचने के लिए छोड़ा गया था। यह चन्द्रमा तक नहीं पहुंचा; लेकिन इसने कई महत्त्वपूर्ण संदेश भेजे। इनमें से एक संदेश ऐसी रश्मियों के बारे में था जो पृथ्वी को वायुमण्डल के ऊपर घेरे रहती हैं और बड़ी घातक होती हैं। इसके साल-भर बाद सोवियत संघ ने 'ल्यूनिक तृतीय' नामक रॉकेट भेजा, जो चन्द्रमा तक पहुंच गया।

रॉकेट पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति के घेरे से परे तभी जा सकता है, जब उसकी रफ्तार 25,000 मील प्रति घंटा हो। अंतरिक्षगामी रॉकेटों को बिलकुल ठीक दिशा में भेजने के लिए लक्ष्य-निर्धारण का काम सदा ही बड़े महत्त्व का रहेगा। ब्रह्माण्ड में कहीं कुछ भी स्थिर नहीं है। पृथ्वी बराबर सूर्य की परिक्रमा करती रहती है। सौरमण्डल के अन्य ग्रह भी सूर्य के चारों ओर घूमते रहते हैं। इसके अलावा, ग्रहों की परिक्रमा उनके चन्द्र जैसे उपग्रह लगाते रहते हैं।

मान लीजिए कि एक रॉकेट चन्द्रमा पर भेजना है, तो लक्ष्य साधने के वक्त जहां चन्द्रमा हो वहां का लक्ष्य बनाकर रॉकेट नहीं छोड़ा जाएगा। रॉकेट छोड़ते वक्त यह ध्यान रखना पड़ेगा कि जब रॉकेट यात्रा करके अंतरिक्ष में चन्द्रमा के पास पहुंचे तब चन्द्रमा भी उस स्थान पर हो। पृथ्वी पर बहुत मामूली-सी भूल से रॉकेट चन्द्रमा के हज़ारों मील परे से गुज़र जाएगा।

अंतरिक्ष में जितने रॉकेट जिस लक्ष्य से भेजे जाते हैं, वे सारे ही सफल नहीं होते। अंतरिक्ष यान को ऊपर भेजना इतना कठिन नहीं है जितना उसको पृथ्वी पर वापस लाना। अगर रॉकेट की रफ्तार नियंत्रित न की जाए तो वह बड़ी तेज़ी से वायुमंडल में प्रवेश करता है। तेज़ गति का अर्थ घर्षण है। इस घर्षण से आग लग जाती है और वह जल जाता है। 'पायनीयर प्रथम' के साथ ऐसा ही हुआ था। लेकिन वैज्ञानिकों को विश्वास है कि अंतरिक्ष-यात्रा की जो समस्याएं हैं, उन सबका हल वे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निकाल लेंगे। उनमें से कई को उन्होंने हल भी कर लिया है। कई अंतरिक्ष-यात्री आकाश से वापस लौट आए हैं।
(देखें : अंतरिक्ष-यात्रा; कृत्रिम उपग्रह)

रामन्, डा० चन्द्रशेखर वेंकट (Dr. C.V. RAMAN 1888-)

: सर रामन् का जन्म त्रिचनापल्ली में हुआ। रामन् शुरू से ही बहुत परिश्रमी हैं। जब 1904 में वे मद्रास के प्रेसीडेंसी कालेज में आए तो उनके ज्ञान से प्राध्यापक

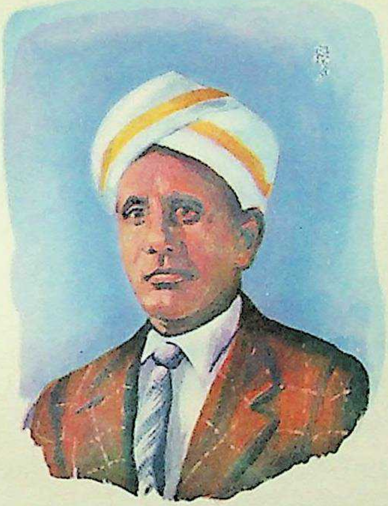

डा० चन्द्रशेखर वेंकट रामन्

काफी चकित हुए। वे बी० एस-सी० में प्रथम आए। उन्होंने भौतिकी में एक स्वर्ण-पदक प्राप्त किया। 1906 में उनका पहला अनुसंधान लेख प्रकाशित हुआ। एम० एस-सी० में भी वे प्रथम आए। इसके बाद वे भारत सरकार के वित्त विभाग की परीक्षा में बैठे और उसमें भी प्रथम आए।

रामन् अब भारतीय वित्त विभाग में अफसर हो गए। पर विज्ञान में उनकी रुचि कम नहीं हुई। जब वे बदली होकर कलकत्ते पहुंचे तो वहां 'इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टीवेशन ऑव साइंस' की प्रयोगशाला में शौकिया काम करते रहे। उनका यह काम बीस वर्ष तक चला, और यहां से उन्होंने अनेक अनुसंधान लेख प्रकाशित किए।

जब कलकत्ता विश्वविद्यालय ने रामन् को भौतिकी के प्रोफेसर का पद स्वीकार करने का निमंत्रण दिया, तो वे वेतन कम होने पर भी सरकारी नौकरी छोड़कर विश्वविद्यालय में चले गए। 1928 में उन्होंने उस प्राकृतिक घटना का पता लगाया जो 'रामन् प्रभाव' के नाम से प्रसिद्ध हुई। जब एकरंगी प्रकाश की किरण किसी पारदर्शी पदार्थ में से गुज़रती है तो उस किरण का कुछ भाग अपने मार्ग से फैल जाता है और इस फैले हुए प्रकाश की तरंग-लम्बाई आरंभिक प्रकाश की तरंग-लम्बाई से अधिक होती है। इस कारण इसका रंग भी आरंभिक प्रकाश से भिन्न होता है।

'रामन् प्रभाव' भौतिकी और रसायन के अध्ययनों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस कार्य के लिए रामन् को सर की उपाधि दी गई। 1930 में उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार दिया गया। आचार्य रामन् को संसार के विभिन्न देशों ने अनेक उपाधियों से विभूषित किया है। भारत के वे भारतरत्न हैं। प्रकाश के अतिरिक्त उन्होंने ध्वनि और क्रिस्टलों के संबंध में भी महत्त्वपूर्ण अध्ययन किए हैं। वे बंगलौर-स्थित अपनी रामन् इंस्टीट्यूट में काम करते हैं।

रामानुजन्, श्रीनिवास (SRINIVASA RAMANUJAN 1887–1920)

: रामानुजन् का जन्म मद्रास राज्य के तंजोर ज़िले के कुम्बकोनम नगर में हुआ था। उनका स्वभाव शांत और स्मरणशक्ति विलक्षण थी। उन्हें 12 वर्ष की आयु में 'बाल विद्वान' घोषित कर दिया गया था।

रामानुजन् को गणित से बहुत प्रेम था। वे चौथी कक्षा में ही ट्रिगॉनोमेट्री में रुचि लेने लगे थे और उन्होंने अनेक सूत्रों का अपने-आप पता लगाया था। 1903 में रामानुजन् ने हाईस्कूल परीक्षा पास की और कुम्बकोनम के सरकारी कालेज में दाखिल हुए। उन्होंने अंग्रेज़ी और गणित में छात्रवृत्ति प्राप्त की। पर अब उनकी रुचि गणित

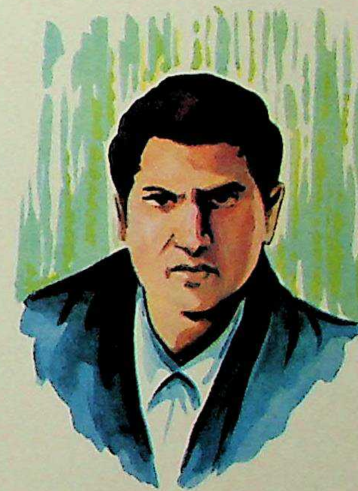

श्रीनिवास रामानुजन्

की ओर रहने लगी। फल यह हुआ कि वे दूसरे विषयों में फेल हो गए।

1911 में रामानुजन् का पहला अनुसंधान पत्र प्रकाशित हुआ। 1913 में उन्होंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हार्डी को अपनी 120 थ्योरमें भेजीं। हार्डी उनसे बहुत प्रभावित हुए और उनके प्रकाशन का प्रबंध कर दिया।

हार्डी की रुचि के कारण मद्रास विश्वविद्यालय ने रामानुजन् को 250 पौंड सालाना की छात्रवृत्ति दी। वे 1914 में इंग्लैंड गए। वहां उन्होंने हार्डी के सहयोग से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गणित में अनुसंधान किए। इसके लिए वे रॉयल सोसाइटी के फैलो चुने गए।

इंग्लैंड में उनका स्वास्थ्य बहुत गिर गया। उन्हें तपेदिक हो गई। वे 1919 में भारत लौटे और 1920 में उनकी मृत्यु हो गई।

गणितशास्त्र के जिन विषयों में रामानुजन् ने योग दिया है उनको संख्याओं का सिद्धांत, पार्टीशन का सिद्धांत और सतत भिन्नों का सिद्धांत कहते हैं।

राय, आचार्य प्रफुल्लचन्द्र (Dr. P.C. ROY 1861–1944) : आचार्य राय का जन्म एक बड़े ज़मींदार परिवार में हुआ था। उन्होंने 1879 में हाईस्कूल परीक्षा पास की और प्रेसीडेंसी कालेज में भौतिकी तथा रसायन का अध्ययन किया। बाद में वे आगे अध्ययन के लिए ब्रिटेन गए।

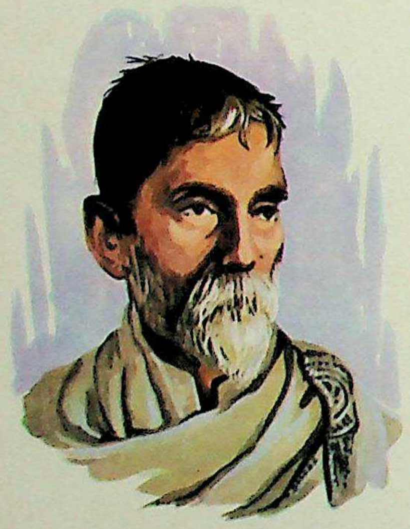

आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय

वहां एडिनबरा विश्वविद्यालय में राय प्रसिद्ध रसायनज्ञ प्रो० क्रम ब्राउन के सम्पर्क में आए। उन्होंने अकार्बनिक रसायन में अनुसंधान किए तथा गिल्क्रिस्ट फाउण्डेशन और होप पुरस्कार छात्रवृत्तियां प्राप्त कीं।

भारत लौटने पर वे कलकत्ते के प्रेसीडेंसी कालेज में रसायन के प्राध्यापक बने। उन्होंने अपने शिष्यों को वैज्ञानिक अनुसंधान करने के लिए प्रोत्साहित किया। वे भारत में आधुनिक विज्ञान की नींव रखनेवालों में समझे जाते हैं।

डा० राय के अनुसंधान का विषय नाइट्राइट थे। उन्होंने सरलता से विच्छेदित होनेवाले अस्थायी नाइट्राइटों को बनाया और उनके गुणों का अध्ययन किया। उन्होंने देश में विज्ञान का प्रसार किया, इंडियन स्कूल ऑव कैमिस्ट्री और इंडियन कैमिकल सोसाइटी की स्थापना की। रासायनिक उद्योग के क्षेत्र में उन्होंने बंगाल कैमिकल एंड फार्मेस्यूटिकल वर्क्स की नींव डाली। उन्होंने प्राचीन संस्कृतशास्त्र का अनुसंधान करके 'हिन्दू रसायन का इतिहास' नामक एक विशाल ग्रंथ लिखा।

आचार्य राय ने अनेक विद्यार्थियों को अपना जीवन विज्ञान की सेवा में लगाने की प्रेरणा दी। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें सर की उपाधि दी। आचार्य राय जीवन-भर अविवाहित रहे। वे बड़े देशभक्त, दानी और सेवापरायण व्यक्ति थे। उनके जीवन का आदर्श 'सादा जीवन और उच्च विचार' था।

रॉयल सोसाइटी (ROYAL SOCIETY) : रॉयल सोसाइटी की स्थापना लन्दन में सन् 1660 में हुई थी। यह विश्व की सबसे पुरानी वैज्ञानिक संस्था है। इसका पूरा नाम है : 'रॉयल सोसाइटी ऑव लन्दन फॉर इम्प्रूविंग नेचुरल नॉलेज।' इसका अर्थ है : प्रकृति-संबंधी ज्ञान बढ़ाने के निमित्त बनी लन्दन की शाही संस्था।

आरंभ में इसके चालीस सदस्य थे। वे वैज्ञानिक विचार-विमर्श और व्याख्यान आदि के लिए गोष्ठियों में सम्मिलित होते थे। लेकिन बाद में प्रयोग आदि होने लगे। विदेशी वैज्ञानिकों से पत्र-व्यवहार शुरू किया गया। तब ही से विज्ञान-संबंधी एक पत्र का प्रकाशन भी शुरू हुआ, जिसका नाम 'फिलॉसॉफिकल ट्रान्ज़ेक्शन्स' है। रॉयल सोसाइटी ब्रिटिश सरकार को वैज्ञानिक मामलों में सलाह भी देती है।

राशिचक्र (ZODIAC) : इसे होराचक्र भी कहते हैं। ये अलग-अलग तारा-मंडल हैं। फलित ज्योतिष के आचार्यों का यह मत है कि ये विभिन्न तारा-मंडल, अपनी स्थिति के अनुसार, पृथ्वी के हर क्रिया-कलाप को प्रभावित करते हैं। इन आचार्यों का कहना है कि राशियों की स्थिति का प्रभाव व्यक्तियों के चरित्र और उनके भविष्य पर भी पड़ता है। इन तारा-मंडलों को ध्यान से देखने पर कुछ विशेष आकृतियां उभरती हैं। इन्हीं आकृतियों के नाम पर इन तारा-मंडलों का नामकरण किया गया है। इन्हें राशियां भी कहते हैं।

इन बारह राशियों की स्थिति कुछ ऐसी है कि पृथ्वी से देखनेवाले को लगेगा कि ये उसी पथ में स्थित हैं जिससे होकर सूर्य आकाश में चलता है। ऐसा लगता है कि सूर्य इन तारा-मंडलों में से प्रत्येक में एक मास रहता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि सूर्य अपने स्थान पर बना हुआ है। वह एक तारा-मंडल से दूसरे तारा-मंडल की ओर चलता नहीं है। सूर्य चलता हुआ इसलिए मालूम होता है कि स्वयं पृथ्वी वर्ष में एक बार सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है। मार्च के आखिरी दिनों में सूर्य मेष राशि में होता है। यदि हम दिन में तारे देख सकते तो हम मेष राशि को मार्च के आखिरी दिनों में सूर्य के साथ उगते, आसमान में चढ़ते और डूबते पाते। एक महीने बाद सूर्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वृष राशि में होता है। इसी तरह यह क्रम चलता रहता है। साल-भर बाद यह क्रम फिर दुहराया जाता है।

(देखें : ज्योतिर्विज्ञान;फलित ज्योतिष)

रीड,वाल्टर (WALTER REED 1851-1902) : डा० वाल्टर रीड ने मनुष्य के दो सबसे बड़े दुश्मनों का पता लगाया। उन्होंने यह मालूम किया कि मक्खियां टाइफाइड (आंत्रिक ज्वर) और एक खास तरह के मच्छर पीला बुखार फैलाते हैं।

वाल्टर रीड का बचपन अमरीका के वर्जीनिया राज्य में बीता, जहां उनके पिता पादरी थे। 16 साल की उम्र में ही वे स्कूल की शिक्षा पूरी कर वर्जीनिया विश्वविद्यालय में पहुंच गए। उनका इरादा डाक्टर बनने का था। डाक्टरी के कोर्स में कई साल लगते हैं, पर रीड यह जानते थे कि उनके पिता की हैसियत ऐसी नहीं है कि वे कई साल विश्वविद्यालय में रह सकें। इसलिए उन्होंने विश्वविद्यालय के अधिकारियों से प्रार्थना की कि उन्हें, जब वे अपने को परीक्षा देने के योग्य समझें तभी परीक्षा में बैठने दिया जाए। उन्हें इजाज़त मिल गई। लेकिन जब रीड ने नौ महीने में ही डाक्टरी की परीक्षा पास कर ली तो अधिकारियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

न्यूयार्क में कुछ अरसे रहने के बाद रीड फौजी डाक्टर बन गए। उन्हें एरीज़ोना की एक छावनी में भेजा गया। वहां जाने से पहले उन्होंने अपना विवाह कर लिया। वे 14 साल एरीज़ोना में रहे। वहां वे सैनिकों का ही नहीं, बल्कि आसपास के सभी बीमारों का इलाज करते थे।

एरीज़ोना से उन्हें बाल्टिमोर भेज दिया गया। वहां उन्हें सुप्रसिद्ध हॉपकिन्स विश्वविद्यालय में अध्ययन का अवसर मिला। कुछ समय बाद वे वाशिंगटन के सैनिक चिकित्सा विद्यालय में प्राध्यापक हो गए। उनका पहला बड़ा काम यह पता लगाना था कि फौजी कैम्पों में टाइफाइड का इतना ज़ोर आखिर क्यों रहता है। उन्होंने अपनी खोज से यह मालूम किया कि मक्खियां टाइफाइड के कीटाणुओं को उस भोजन में ले जाती हैं जो सैनिक खाते हैं, और इस तरह यह रोग एक से दूसरे सैनिक में फैलता जाता है।

टाइफाइड से भी बड़ी समस्या उस समय पीले बुखार की थी। क्यूबा और मध्य अमरीका में इसका बड़ा ज़ोर था। संयुक्त राज्य अमरीका के भी कितने ही शहरों में यह महामारी कई बार फैल चुकी थी और हज़ारों लोग इससे मर चुके थे। 1900 में रीड और कई अन्य फौजी डाक्टर इस रोग के अध्ययन के लिए क्यूबा गए।

मच्छर पीले बुखार के कीटाणुओं को फैलाते हैं, इसके कुछ संकेत तो उन्हें मिल चुके थे। पर अभी कोई चीज़ पूरी तरह निश्चित नहीं हो पाई थी। इसलिए यह ज़रूरी था कि पहले पीले बुखार के कुछ रोगी अपने को मच्छरों

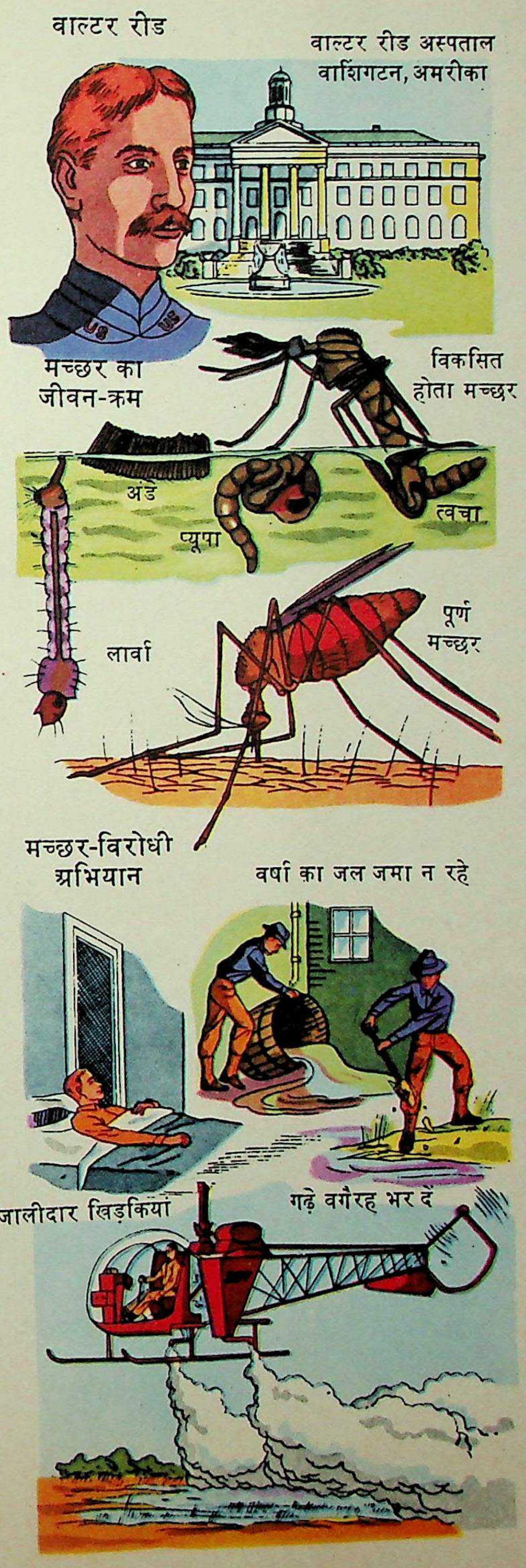

मच्छर वाली जगहों पर कीटाणुनाशक का छिड़काव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से कटवाएं और फिर उन्हीं मच्छरों से भले-चंगे लोगों को कटवाया जाए। ज़ाहिर है कि इसमें जान का खतरा था। फिर भी कुछ बहादुर लोग इस प्रयोग के लिए तैयार हो गए। उनमें से तीन को बीमारी हुई, पर वे इलाज से ठीक हो गए। लेकिन डा० लेज़िअर की, जो रीड के साथ ही काम कर रहे थे, इसी रोग से मृत्यु हो गई। वे अस्पताल में मरीज़ों को देख रहे थे कि एक मच्छर उनकी बांह पर आ बैठा। उन्होंने जान-बूझकर उसे नहीं हटाया। उन्हें पीला बुखार हुआ और वे उसीमें चल बसे।

यह निश्चित हो जाने पर कि मच्छर ही पीले बुखार को फैलाते हैं, मच्छरों को नष्ट किया जाने लगा। क्यूबा के हवाना शहर में मच्छरों का सफाया हो जाने से पीला बुखार भी खत्म हो गया। फिर तो सभी जगह यह तरीका अपनाया गया। अब यह रोग बहुत ही कम होता है।

हवाना से पीले बुखार का नामोनिशान मिट जाने के कुछ दिन बाद ही वाल्टर रीड की मृत्यु हो गई। इस महान डाक्टर की स्मृति में सरकार ने वाशिंगटन में एक बड़ा फौजी अस्पताल कायम किया है जो 'वाल्टर रीड अस्पताल' कहलाता है।

रोगाणुरोधक (ANTISEPTICS): यह नाम उन औषधियों का है जो जीवाणुओं को मारती हैं और उन्हें बढ़ने नहीं देतीं। प्राथमिक उपचार में काम आनेवाली दवा पेटी से लेकर बड़े-बड़े अस्पतालों तक, हर जगह रोगाणुरोधक औषधियों या एंटीसेप्टिक्स का उपयोग किया जाता है। इनके उपयोग से घावों में रोगमूलक जीवाणु प्रवेश नहीं पा सकते।

लेकिन उन्नीसवीं सदी के पहले हमें न जीवाणुओं की जानकारी थी और न रोगाणुरोधकों की। नतीजे के तौर पर होता यह था कि ऑपरेशन के घावों और चोट में लगे घावों के दूषित हो जाने के कारण हज़ारों लोग मर जाया करते थे। कोई पचहत्तर साल पहले लुई पास्चर नामक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने इस बात का पता लगाया कि कुछ रोग जीवाणुओं के कारण उत्पन्न होते हैं। जब जोसेफ लिस्टर नामक स्कॉट सर्जन को इस बात की जानकारी हुई तो उन्होंने जीवाणु मारनेवाली औषधियों की खोज शुरू की। उन्होंने पाया कि कार्बोलिक अम्ल के उपयोग से घावों में पीब नहीं पड़ती और न रोगी के रुधिर में विष पैदा होता है। यही पहला रोगाणुरोधक था।

पर अब कार्बोलिक अम्ल का ज़्यादा उपयोग नहीं होता है क्योंकि बाद की खोजों से कितनी ही और औषधियों का पता चल गया है जो जीवाणु मारने के लिए कहीं ज़्यादा अच्छी हैं।

लाइनियस, कैरोलस (CAROLUS LINNAEUS 1707–1778): लाइनियस स्वीडन के एक डाक्टर थे। उनके प्रसिद्ध होने का कारण यह है कि उन्होंने पौधों के वर्गीकरण का एक नया ढंग निकाला। उन्होंने हर पौधे का नाम दो लैटिन शब्दों को इस तरह जोड़कर बनाने की युक्ति सोची, जिससे एक बिरादरी के सभी पौधों को उनके नाम से ही पहचाना जा सके। इसे उन्होंने पौधों का वैज्ञानिक नाम कहा। अंग्रेज़ी में डॉग वायलेट (बैंगनी बनफ़शा) और पैंजी (तिरंगा बनफशा) को सुनकर हम उनके पारस्परिक संबंध को नहीं जान सकते। लेकिन 'वायला रिविनिआना' और 'वायला ट्राईकलर' से दोनों की सजातीयता का पता चल जाता है। आज हम वनस्पति-विज्ञान में इन्हीं नामों का प्रयोग करते हैं।

लाइनियस जब बच्चे थे तभी वे फूलों को बहुत ध्यान से देखा-परखा करते थे। उन्होंने हालैंड में जाकर डाक्टरी पढ़ी और डाक्टर बन गए। लेकिन कुछ दिनों बाद ही वे वनस्पति-विज्ञान का अध्यापन करने लगे। लाइनियस अपनी कक्षा के छात्रों को लेकर दूर-दूर तक नये पौधों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेवेनहोक ने आश्चर्यचकित दर्शकों को अपना माइक्रोस्कोप दिखाया।

तलाश में निकल जाते थे। उनके छात्र पौधों को इकट्ठा करने और उनका नामकरण करने में लग गए।

लेवेनहोक, ऐंटन वान (ANTON VAN LEEUWENHOEK 1632–1723) : अनेक लोग लेवेनहोक को सूक्ष्मदर्शी या माइक्रोस्कोप का आविष्कारक मानते हैं। लेकिन सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार उसने नहीं किया था। फिर भी उसने इतने अच्छे सूक्ष्मदर्शी बनाए जितने अच्छे कि उससे पहले नहीं बन सके थे। वही पहला आदमी था जो अनेक ऐसे नन्हे जीवों और पौधों को देखने में सफल हुआ जिन्हें आंख से नहीं देखा जा सकता।

लेवेनहोक डच था। वह डेल्फ्ट नगर में पंसारी का काम करता था। लेकिन अपना अधिकांश खाली समय वह सूक्ष्मदर्शी बनाने में लगाता था। कुल मिलाकर उसने 247 सूक्ष्मदर्शी बनाए। वह एकसाथ कई सूक्ष्मदर्शियों पर काम करता था। एक के नीचे अगर ऊन का एक धागा रखता, तो दूसरे के नीचे मधुमक्खी का डंक, और तीसरे के नीचे शराब की एक बूंद। जो कुछ उसे दीखता उसे वह बहुत सावधानी से लिखता जाता।

उसे सबसे बड़ा आश्चर्य तब हुआ जब उसने अपने सूक्ष्मदर्शी के नीचे बरसाती पानी की एक बूंद रखी। उसने देखा कि इसके भीतर अनेक जीव इधर-उधर चल-फिर रहे हैं। उसने उन्हें 'नन्हे जीव' की संज्ञा दी। फिर तो उसने अपने दांतों की मैल में भी ऐसे ही छोटे जीव देखे। आज हम सभी जानते हैं कि इन्हें जीवाणु कहा जाता है। लेवेनहोक जीवाणुओं को देखनेवाला पहला आदमी था।

इन नन्हे जीवों के बारे में लिखते हुए लेवेनहोक ने उनके आकार का भी अच्छा अनुमान दिया है। एक बार उसने लिखा, "यह अन्तिम जीव जूं की आंख के हज़ारवें हिस्से के बराबर होता है।"

लेवेनहोक के सूक्ष्मदर्शी आज के सूक्ष्मदर्शियों की तुलना में काफी अच्छे नहीं थे। लेकिन जीवाणुओं की छानबीन के काम को उसीने शुरू किया।

लेवेनहोक का माइक्रोस्कोप

लेवेनहोक के माइक्रोस्कोप में चांदी की दो पट्टियां परस्पर जुड़ी होती थीं और उनके बीच में एक लेंस लगा रहता था। जिस चीज़ को देखना होता था उसे सुई की नोक पर रखते थे और फिर माइक्रोस्कोप को प्रकाश की ओर कर देते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वनस्पति-विज्ञान (BOTANY) : पेड़-पौधों के अध्ययन की विद्या को वनस्पति-विज्ञान कहते हैं । पेड़-पौधे हमारे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं । पेड़-पौधों के बिना हमें और अन्य जीवों को भी भोजन मिलना असंभव हो जाता । पेड़-पौधे हमें भोजन के अलावा अन्य कई प्रकार की वस्तुएं देते हैं ।

पेड़-पौधे हमारे लिए इतने महत्त्वपूर्ण हैं, इसलिए हमारे लिए उनके बारे में बहुत-कुछ जानना ज़रूरी है । हमारे लिए यह जानना ज़रूरी है कि पेड़-पौधे किस चीज़ से बनते हैं और किस तरह जीवित रहते हैं । वनस्पति-विज्ञान से हमें पेड़-पौधों के बारे में यह सारी जानकारी मिलती है । यही विज्ञान हमें बताता है कि किस प्रकार विभिन्न प्रकार के पौधे विभिन्न प्रकार की मिट्टी और जलवायु में उत्पन्न होते हैं, किस प्रकार विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों का आपस में घनिष्ठ संबंध है, अच्छे पौधों को किस प्रकार उगाया जा सकता है और पौधों को विनाशकारी कीड़े-पतंगों से किस प्रकार बचाया जा सकता है। वनस्पति-विज्ञान कई शाखाओं में बंटा हुआ है ।

वाट, जेम्स (JAMES WATT 1736–1819) : जेम्स वाट को मुख्यतः इस बात के लिए याद किया जाता है कि उसने अपने युग में प्रचलित भाप के इंजन में सुधार किया । वैसे वाट एक मेधावी व्यक्ति था और उसके आविष्कार दूसरे क्षेत्रों में भी फैले हुए हैं । उसका जन्म स्कॉटलैंड में हुआ था । बचपन में वह बीमार रहता था, अतः नियमित रूप से स्कूल नहीं जा पाता था । उसने बहुत-कुछ स्वाध्याय से ही सीखा था । बड़ा होने पर वह औज़ार बनाने का काम करने लगा । उस ज़माने के भाप के इंजन खानों में से पानी निकालने के काम आते थे । लेकिन वे बहुत ताकतवर नहीं होते थे । वाट ने उन इंजनों को जिस रूप में सुधारा उसे आधुनिक भाप के इंजन का प्रारंभिक रूप कहा जा सकता है । बिजली की शक्ति की इकाई, 'वाट' का नामकरण उसीके नाम पर किया गया है ।

विज्ञान (SCIENCE) : संसार में हमारे चारों तरफ जो कुछ है, उस सबका ज्ञान-समुच्चय ही विज्ञान है । इसमें वह सब कुछ शामिल है जो हम पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं, भूमि, आकाश, ऋतु आदि के बारे में जानते हैं । विज्ञान में यह भी शामिल है कि चीज़ें किन तत्त्वों की बनी हैं, और वे कैसे काम करती हैं । यह ज्ञान-भण्डार प्रेक्षण, माप-तोल, प्रयोग आदि के सावधानी से इकट्ठे किए गए परिणामों का निष्कर्ष है ।

विज्ञान केवल ज्ञान का समुच्चय ही नहीं है । यह विचार करने की एक पद्धति भी है । इससे समस्याओं और प्रश्नों के हल और उत्तर प्राप्त किए जाते हैं ।

हमने अपने संसार के विषय में इतनी जानकारी हासिल कर ली है कि किसी एक व्यक्ति के लिए वह सारा ज्ञान प्राप्त कर लेना कठिन ही नहीं असंभव है । इसलिए विज्ञान को बहुत-सी शाखाओं में विभक्त कर लिया गया है । साथ में दिए गए विज्ञान-वृक्ष के चित्र में आप देखेंगे कि इनमें से कुछ प्रमुख विषय शाखाओं के रूप में प्रदर्शित किए गए हैं । लेकिन इनमें से हर एक शाखा की भी कई शाखाएं हैं ।

कुछ विज्ञानों को प्रायोगिक विज्ञान (Applied Sciences) कहा जाता है । इसका अर्थ है, ऐसे विज्ञान जिन्हें दैनिक व्यवहार में उतार लिया गया है। उदाहरण के लिए

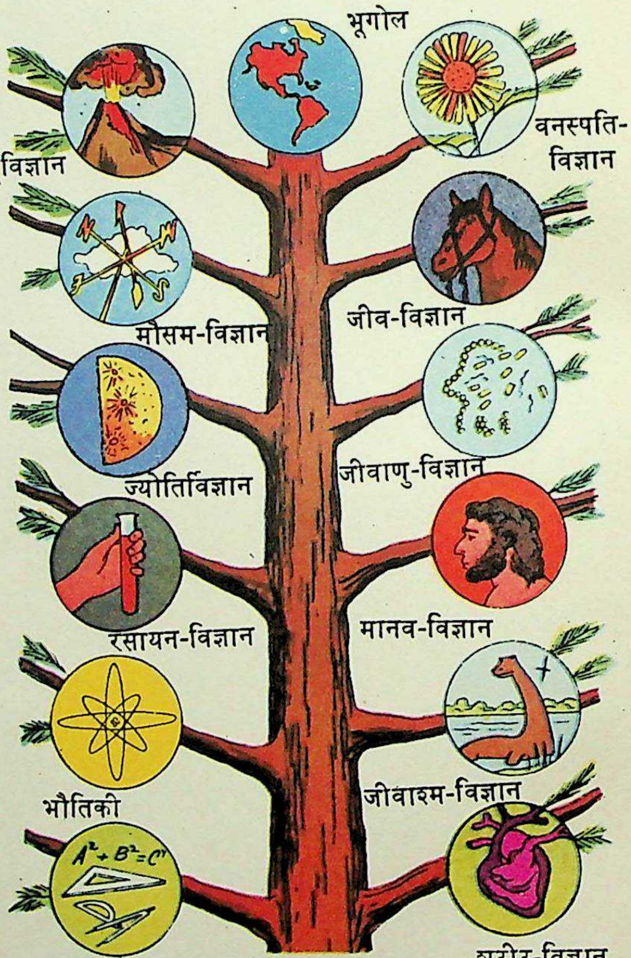

विज्ञान वृक्ष

वनस्पति-विज्ञान का प्रायोगिक रूप कृषि है । भौतिकी का प्रायोगिक रूप इंजीनियरी है ।

वैज्ञानिकों को अभी सारी समस्याओं को हल करने में सफलता नहीं मिली है । इसी प्रकार कुछ लोग समझते हैं कि साहसिक यात्राओं के दिन अब अतीत की बात हैं, क्योंकि पृथ्वी के प्रायः हर भाग के नक्शे बन गए हैं । लेकिन अंतरिक्ष-यात्रा के विशेषज्ञों का कहना है कि शीघ्र ही चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहों की यात्राएं कर सकना संभव होगा । इसके अलावा, सच बात तो यह है कि एक माने में सभी वैज्ञानिक 'साहसी यात्री' होते हैं । अपने आस-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पास की दुनिया से उपयोगी बातों का ज्ञान प्राप्त कर लेना पर्वत के किसी नये शिखर या चन्द्रमा के न दिखलाई पड़नेवाले भाग के पता लगाने से कम ग्रानन्ददायी नहीं है।

वृत्त (CIRCLE) : ग्रगर हम कागज़ पर एक बिन्दु बनाएं ग्रौर उसके ग्रासपास समान दूरी पर एक वक्र या मुड़ी हुई रेखा खींचते जाएं, तो यह रेखा ग्रन्त में उसी जगह समाप्त होगी जहां से हमने इसे खींचना ग्रारम्भ किया था। इस प्रकार कागज़ पर एक वृत्त या गोल चक्कर बन जाएगा। हम कम्पास या परकार की सहायता से भी वृत्त बना सकते हैं। किसी भी पूर्ण वृत्त का प्रत्येक भाग उसके केन्द्र से समान दूरी पर होता है। इस दूरी को व्यासार्ध या त्रिज्या (Radius) कहते हैं। कोई वृत्त कितना बड़ा है यह बताने के लिए उसके व्यास (Diameter) का नाप बताया जाता है। व्यास व्यासार्ध का दूना होता है। केन्द्र के ग्रार-पार एक तरफ से दूसरी तरफ तक की दूरी ही वृत्त का व्यास कहलाती है।

भूमध्य रेखा एक प्रकार का काल्पनिक वृत्त है, जो उत्तरी ग्रौर दक्षिणी ध्रुवों से समान दूरी पर पृथ्वी के चारों ग्रोर स्थित माना जाता है। भूमध्य रेखा का व्यास लगभग 8,000 मील है। (देखें : गणित)

शून्य (ZERO) : हिन्दी भाषा में प्रयुक्त सभी शब्द मात्र 49 ग्रक्षरों की मदद से लिखे जाते हैं। इसी तरह चाहे कितनी भी बड़ी संख्या क्यों न हो हम उसे केवल दस ग्रंकों की सहायता से लिख सकते हैं। ये ग्रंक हैं : 0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8 ग्रौर 9। इनमें से पहले ग्रंक को शून्य कहते हैं।

शून्य का ग्रंक एक बहुत बड़ा ग्राविष्कार था। यह उतना पुराना नहीं है जितना कि हम सोचते हैं। संभवतः इसका ग्राविष्कार एक हज़ार वर्ष से बहुत ग्रधिक पहले नहीं हुग्रा था। ग्राठवीं सदी से भारत में शून्य के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं। भारतीयों से शून्य की इस पद्धति को ग्ररब वालों ने सीखा ग्रौर फिर वहां से पश्चिमी देशों ने सीखा।

शून्य का ग्रर्थ होता है, 'कुछ नहीं'। देखने में तो ऐसा लगता है कि एक ऐसा चिह्न, जिसका प्रयोग 'कुछ नहीं' के लिए किया जाता है, कोई महत्त्व नहीं रखता होगा। लेकिन, सच पूछिए तो इससे संख्याग्रों के लिखने में बहुत बड़ी सहायता मिलती है। हमें 'दस' के लिए किसी ग्रन्य ग्रंक की ग्रावश्यकता नहीं पड़ती। हम सिर्फ एक '1' लिखकर उसके ग्रागे एक शून्य लगा देते हैं। ग्रगर '1' के ग्रागे दो शून्य लगा दें तो सौ हो जाएगा। सौ में एक ग्रौर शून्य लगा दें तो हज़ार हो जाएगा। हज़ार में दो ग्रौर शून्य लगाएं तो लाख हो जाएगा।

शून्य का मान इसकी स्थिति पर निर्भर करता है। हम इसकी सहायता से दूसरे ग्रंकों को यथोचित स्थिति में रखकर जो भी संख्या सूचित करना चाहें कर सकते हैं। ग्रगर हमें 'पांच करोड़, दो लाख, दो सौ चौवन' बिना शून्य की सहायता के लिखना हो तो हमें करोड़, लाख, हज़ार, सौ, ग्रौर दहाई व इकाई के लिए ग्रलग-ग्रलग चिह्नों का प्रयोग करना पड़ेगा, जैसाकि प्राचीन यूनानी करते थे। लेकिन शून्य की सहायता से हम 5,02,00,254 कितनी ग्रासानी से लिख लेते हैं। (देखें : ग्रंक ग्रौर संख्याएं)

शून्यक (VACUUM) : शून्यक खाली स्थान को कहते हैं। हम जिन चीज़ों को खाली कहते हैं, वास्तव में उनमें से ग्रधिकांश भरी हुई होती हैं। उनमें हवा भरी होती है। शून्यक उत्पन्न करने के लिए पंप से हवा को भी निकाल देना ज़रूरी है।

ग्रगर किसी बर्तन में से सब कुछ—यहां तक कि हवा भी—निकल जाए, तब उस बर्तन में पूर्ण शून्यक हो

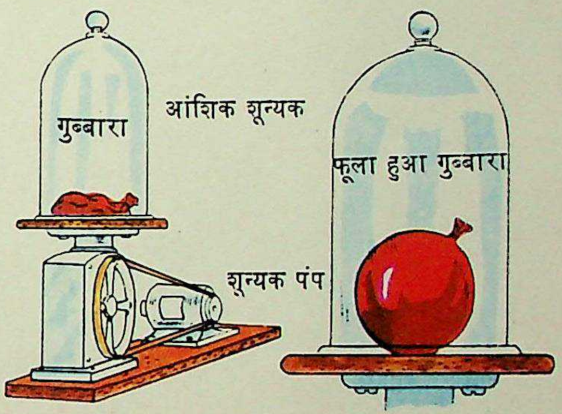

जाएगा। लेकिन ग्राज तक पूर्ण शून्यक कोई भी उत्पन्न नहीं कर सका है। यह तो संभव है कि पंप द्वारा सारी हवा निकाल दी जाए—लेकिन थोड़ी-बहुत हवा फिर भी रह ही जाएगी।

चित्र में जो पंप दिखाया गया है वह शून्यक पंप है। इस पंप से चित्र में दिखाए गए मर्तबान में से हवा निकाली जा रही है। मर्तबान के ग्रंदर जो गुब्बारा है उसमें थोड़ी-सी हवा है। जब मर्तबान की हवा निकाल दी जाती है तो गुब्बारे के ग्रंदर की हवा उसे फुला देती है।

शून्यक पंप का ग्राविष्कार ग्राज से लगभग 300 वर्ष पूर्व हुग्रा था। इसका ग्राविष्कार जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक ग्रोटो वॉन गेरिक ने किया। (देखें : गेरिक)

संवेदनाहारी (ANAESTHETICS) : इन्हें मनुष्य की पीड़ा हरने की दिशा में विज्ञान की सबसे बड़ी देन कहना ही ठीक होगा। संवेदनाहारी का उपयोग डाक्टर लोग ग्रॉपरेशनों के दौरान करते हैं, क्योंकि इससे वेदना या पीड़ा की तनिक भी ग्रनुभूति नहीं होती। सबसे ज़्यादा उपयोग में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

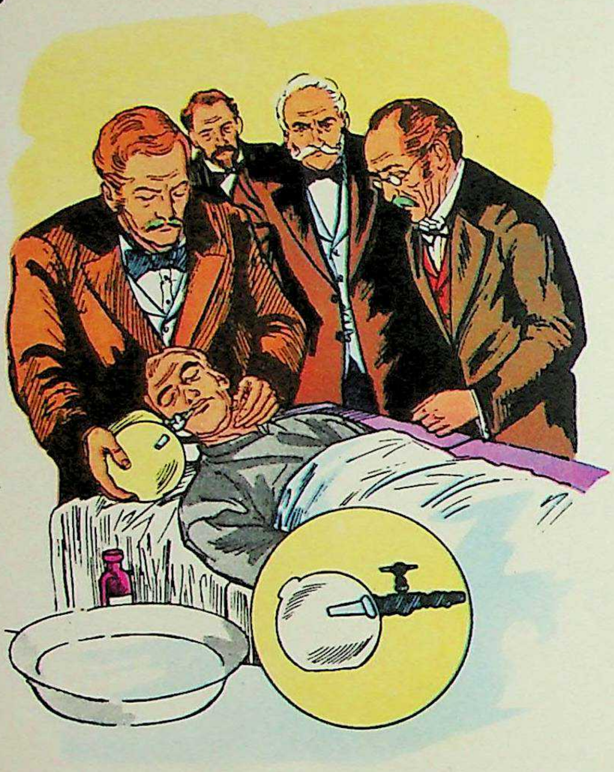

ईथर का एक संवेदनाहारी के रूप में उपयोग पहले-पहल अमरीका में किया गया। विलियम मॉर्टन ने 1846 में डाक्टरों के सामने एक रोगी को ईथर सुंघाया और वह तुरंत बेहोश हो गया।

आनेवाले संवेदनाहारी हैं ईथर, क्लोरोफार्म तथा नाइट्रस ऑक्साइड।

संवेदनाहारियों का उपयोग पहले-पहल अमरीकी डाक्टरों द्वारा ही शुरू किया गया। संवेदनाहारी के रूप में क्लोरोफार्म का उपयोग सर जेम्स सिंपसन नामक अंग्रेज़ सर्जन ने शुरू किया। ईथर का उपयोग और भी बाद में शुरू हुआ।

संवेदनाहारी दो तरह के होते हैं। एक प्रकार के संवेदनाहारियों के उपयोग से रोगी की चेतना जाती रहती है—वह बेहोश हो जाता है। दूसरे प्रकार के संवेदनाहारी स्थानिक संवेदनाहारी कहलाते हैं और वे केवल प्रभावित अंग की चेतना ही हरते हैं।

संवेदनाहारियों के बिना आधुनिक शल्य-चिकित्सा-विज्ञान की प्रगति असंभव थी।

सम्मोहन (HYPNOTISM) : बहुत पहले और कई देशों में यह खोज की गई कि मनुष्यों को सम्मोहित किया जा सकता है। सम्मोहित व्यक्ति बहुत हद तक वैसा ही दीखता है जैसा नींद में चलनेवाला आदमी। सम्मोहित करनेवाला व्यक्ति उससे जो भी कुछ कहने या करने को कहता है वह वही-वही कहता और करता है। वह ऐसी उलटी-सीधी बातें कहता है जिन्हें आम तौर पर कहने की बात वह सोच भी नहीं सकता। वह ऐसे काम कर सकता है जिन्हें यदि उसे सम्मोहित न किया गया होता तो वह कदापि नहीं करता। सम्मोहन दूर हो जाने पर वह सम्मोहित अवस्था में कही हुई अपनी बातों और किए हुए कामों को बिलकुल याद नहीं रख पाता है।

सम्मोहित व्यक्ति से जो कुछ भी कहा जाए, वह उसमें विश्वास कर लेता है। अगर उससे यह कहा जाए कि वह एक खास तरह की आवाज़ सुन रहा है तो उसे विश्वास हो जाएगा कि वह उस तरह की आवाज़ सुन रहा है। यदि उससे कहा जाए, तो वह यह भी विश्वास कर लेगा कि वह चित्र-विचित्र चीज़ें देख सकता है।

सम्मोहित व्यक्ति से भविष्य में किसी समय पर कोई काम करने को कहा जा सकता है। समय आने पर बिना यह जाने कि वह ऐसा क्यों कर रहा है, वह व्यक्ति उस काम को कर डालेगा।

सम्मोहित होने का यह मतलब नहीं कि व्यक्ति अपनी इच्छा-शक्ति को पूर्णतया खो बैठता है। सम्मोहन के अधिकांश विशेषज्ञों का विश्वास है कि यदि कोई ऐसी बात कही जाए जो सम्मोहित व्यक्ति की सत्-असत् की गहरी धारणा के बिलकुल विपरीत है, तो वह उसे कदापि नहीं करेगा।

जिस व्यक्ति को दूसरों को सम्मोहित करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, उसे सम्मोहक कहते हैं। सम्मोहक प्रायः अपने रोगी को अंधेरे कमरे में बैठाता है। सम्मोहक अपने रोगी से बड़े ही शान्त स्वर में बार-बार अपने को ढील देने और सो जाने के लिए कहता है। लेकिन हर व्यक्ति को सम्मोहित नहीं किया जा सकता। कोई आदमी अगर न चाहे तो उसे सम्मोहित नहीं किया जा सकता।

कभी-कभी सम्मोहक अपने कारनामों का प्रदर्शन भी करते हैं। वे दर्शकों में से ऐसे लोगों को चुन लेते हैं जो सम्मोहित किए जाने की स्वीकृति देते हैं और फिर उन्हें सम्मोहित करते हैं। शेष दर्शक इस तमाशे का मज़ा लेते हैं। लेकिन सम्मोहन सिर्फ एक खिलवाड़ नहीं है। डाक्टर

सम्मोहन की दशा में रोगी अतीत को फिर से जी सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसका प्रयोग रोगियों की चिकित्सा के लिए करते हैं। सम्मोहन का पुराना नाम मेस्मेरिज़्म (Mesmerism) है। 'मेस्मेरिज़्म' शब्द फ्रैंज़ मेस्मर नामक एक डाक्टर के नाम पर चला है, जिसने 200 वर्ष पूर्व सम्मोहन का प्रयोग अपने रोगियों की चिकित्सा के लिए किया था।

साहनी, डा० बीरबल (Dr. BIRBAL SAHNI 1891–1949) : साहनी का जन्म पश्चिमी पंजाब के शाहपुरा ज़िले में हुआ। उनके पिता रसायन के अध्यापक थे। उन्हें घर में विज्ञान का वातावरण प्राप्त हुआ और उसमें उनकी रुचि बढ़ी। उनका गांव नमक की पहाड़ियों के पास था। वे उसके आसपास के पहाड़ और जंगल से पौधे, चट्टानें, और पुराने पौधों तथा जंतुओं के फॉसिल इकट्ठे किया करते थे।

साहनी 1911 में पंजाब विश्वविद्यालय से बी० एस-सी० करके कैम्ब्रिज चले गए। उन्होंने पुरावनस्पतिशास्त्री प्रो० स्वीर्ड के निदेशन में अनुसंधान किए और 1919 में उन्हें फॉसिल पौधों के अध्ययन पर लंदन विश्वविद्यालय से डाक्टर की डिग्री मिली।

भारत लौटकर साहनी पहले बनारस विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफ़ेसर बने और फिर 1921 में लखनऊ विश्वविद्यालय चले गए।

डा० साहनी ने पौधों के वर्गीकरण की एक नई विधि निकाली। उनकी प्रयोगशाला से तीस वर्ष तक अनुसंधान-लेखों का तांता-सा बंधा रहा। वे प्राचीन पौधों का अध्ययन करने के लिए एक अलग अनुसंधानशाला बनाना चाहते थे। इस संबंध में उन्होंने यूरोप, अमरीका और कनाडा की यात्रा की। उनके लौटने पर 3 अप्रैल, 1949 को लखनऊ में इस संस्थान की नींव रखी गई। पर इसके एक सप्ताह बाद ही डा० साहनी की मृत्यु हो गई।

डा० साहनी भूगर्भविज्ञान और वनस्पतिशास्त्र दोनों में प्रवीण थे। उन्होंने हिमालय और गोंडवाना की रचना के विषय में महत्त्वपूर्ण खोजें कीं। उन्होंने बहुत छोटे फॉसिलों के जो अध्ययन किए हैं, उनकी बहुत प्रशंसा हुई है।

साहा, डा० मेघनाथ (Dr. MEGHNATH SAHA 1893–1956) : साहा का जन्म पूर्वी बंगाल के ढाका ज़िले में हुआ। 1915 में उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से व्यावहारिक गणित में प्रथम श्रेणी में एम०एस-सी० किया। जब वे कलकत्ते के प्रेसीडेंसी कालेज में थे तो उनपर आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय का गहरा प्रभाव पड़ा। वे आचार्य जगदीशचन्द्र बोस के सम्पर्क में भी आए। उनसे उन्होंने भौतिकी का अध्ययन किया और गणित भौतिकी में उनकी रुचि बढ़ी।

साहा कलकत्ता विश्वविद्यालय में गणित के प्राध्यापक हो गए। इन दिनों उन्होंने जो अनुसंधान-कार्य किया, उसके लिए उन्हें 1918 में डी० एस-सी० की उपाधि दी गई। साहा 1919 में यूरोप गए और महान वैज्ञानिकों के सम्पर्क में आए। उन्होंने सामान्य सापेक्षवाद और क्वांटम सिद्धांत का अध्ययन किया। उन्होंने गर्मी के प्रभाव से परमाणुओं के आयनित होने का सिद्धांत बनाया। यह 1920 में प्रकाशित हुआ। इसके लिए वे रॉयल सोसाइटी के सदस्य बनाए गए।

डा० साहा ने परमाणु भौतिकी संस्थान की स्थापना की। उनकी अध्यक्षता में परमाणु-भंजन के लिए एक साइक्लोट्रोन लगाया गया। उनकी अध्यक्षता में कैलेंडर सुधार समिति बनी। इस समिति ने जिस कैलेंडर का सुझाव दिया वह 22 मार्च, 1957 से देश के राष्ट्रीय कैलेंडर के रूप में अपना लिया गया।

डा० मेघनाथ साहा

डा० साहा कर्तव्यनिष्ठ और प्रेरणा देनेवाले अध्यापक थे। वे महान विचारों के त्यागवान व्यक्ति थे।

हाइड्रोजन (HYDROGEN) : अगर एक बोतल में रंगहीन हाइड्रोजन गैस भरी हो, तो वह ऐसी दीखेगी मानो खाली हो। उसका वज़न हवा से भरी हुई बोतल से कुछ कम होगा। हाइड्रोजन सबसे हलका रासायनिक तत्त्व है। यह दुनिया का सबसे हलका पदार्थ है।

हाइड्रोजन ब्रह्माण्ड का सर्वाधिक प्रचुर पदार्थ भी है। हमारे सूरज का अधिकांश हाइड्रोजन से बना हुआ है, और यही दशा सुदूर-स्थित अन्य तारों की भी है। पृथ्वी पर विशुद्ध हाइड्रोजन कम ही मिलती है। वायुमण्डल में बहुत ऊंचाई पर जाकर कुछ पाई जा सकती है। लेकिन अन्यत्र यह किसी न किसी चीज़ में मिली हुई ही मिलती है। वैज्ञानिकों का कथन है कि यह यौगिक रूप में ही पाई जाती है।

अधिकतर यौगिकों में हाइड्रोजन बिलकुल छिपी रहती है। मक्खन की एक टिकिया, या चीनी-भरे एक पात्र, या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पानी से भरे एक गिलास को देखकर कोई यह अनुमान भी नहीं कर सकता कि मक्खन, चीनी और पानी अंशतः हाइड्रोजन हैं।

हम लोग स्वयं अंशतः हाइड्रोजन हैं। यही हालत दूसरे जीवों और पौधों की भी है। कारण यह है कि समस्त सजीव पदार्थ अंशतः हाइड्रोजन से बने होते हैं। नमक और कुछ दूसरे खनिज पदार्थों को छोड़कर, हमारे खाने की हर चीज़ अंशतः हाइड्रोजन से बनी हुई है। अम्ल या तेज़ाब (Acids) कहलानेवाले सभी रसायनों में हाइड्रोजन होती है। समाक्षार (Bases) कही जानेवाली चीज़ों में भी हाइड्रोजन होती है। पृथ्वी की पपड़ी की कुछ चट्टानों में भी हाइड्रोजन पाई जाती है।

हाइड्रोजन आसानी से प्राप्त की जा सकती है। ऐसे यौगिकों में से जिनमें यह मिली रहती है, इसे निकाला जा सकता है।

हार्वे, विलियम (WILLIAM HARVEY 1578–1657):

विलियम हार्वे प्रसिद्ध अंग्रेज़ डाक्टर हुआ है।

कोई साढ़े तीन सौ बरस पहले मानव-शरीर में रक्त-संचार के विषय में डाक्टरों के बड़े विचित्र विचार थे। उनका कहना था कि शरीर के रक्त में ज्वारभाटे की तरह उफान आता है और फिर शांत हो जाता है। वे समझते थे कि रक्त यकृत में बनता है और हृदय में दूसरी तरह का रक्त बनता है।

विद्वानों का यह भी मत था कि रक्त केवल शिराओं में बहता है, धमनियों में नहीं बहता। हृदय के एक भाग से दूसरे में रक्त किस तरह पहुंचता है—यह रहस्य था, क्योंकि हृदय के दोनों भागों के बीच दीवार होती है। उन दिनों डाक्टरों का ख्याल था कि दीवार में सूक्ष्म रन्ध्र होंगे जिनसे होकर रक्त दूसरी ओर पहुंचता होगा।

डाक्टरी पढ़ते समय जब हार्वे को यह सब बताया गया तो उसके गले ये बातें नहीं उतरीं। उसने निश्चय किया कि वह इन सभी बातों का पता खुद लगाएगा।

हार्वे अपनी पढ़ाई पूरी करके घर वापस लौटा। लौटकर वह बड़ा प्रसिद्ध डाक्टर बना। जल्दी ही वह इंग्लैंड के राजा का डाक्टर नियुक्त हो गया।

कई वर्ष तक हार्वे ने जानवरों के हृदय और उनके शरीर में रक्त-संचार का अध्ययन किया और अनेक प्रयोग किए। उसने अपने रोगियों की भी ध्यान से देखभाल की। जब उसे पक्का विश्वास हो गया तो उसने अपने विचार छपवा दिए।

हार्वे की लिखी पुस्तक आज तीन सौ वर्ष बाद भी बड़ी उपयोगी मानी जाती है। इसमें हार्वे ने रक्त-संचार का सही ढंग से वर्णन किया है। वह रक्त-संचार के बारे में सही बात बतानेवाला पहला व्यक्ति था। आज वह चिकित्सा-विज्ञान का बहुत बड़ा वैज्ञानिक माना जाता है।

हीलियम (HELIUM):

साथ के चित्र में जो गुब्बारेनुमा हवाईजहाज़ है, उसमें अक्सर हीलियम गैस भरी जाती है। यह गैस बहुत हलकी होती है। हीलियम हाइड्रोजन से तो भारी होती है, लेकिन इसे हवाई गुब्बारे में भरना इसलिए पसंद किया जाता है कि यह आग नहीं पकड़ती।

यूनान के लोग सूर्य को हीलियम कहते थे। उसीसे इस गैस का यह नाम पड़ा है। सन् 1868 में वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि सूर्य में हीलियम गैस होती है। कोई तीस बरस बाद उन्हें पता लगा कि यह गैस पृथ्वी पर भी मिलती है।

यह प्राकृतिक गैस है। दुनिया की सारी हीलियम गैस करीब-करीब अमरीका में बनाई जाती है।

पृथ्वी पर हीलियम गैस का अभाव है, लेकिन ब्रह्माण्ड में इसकी कमी नहीं है। अधिकांश तारे, जिनकी संख्या करोड़ों है, हीलियम और हाइड्रोजन से मिलकर बने हैं।

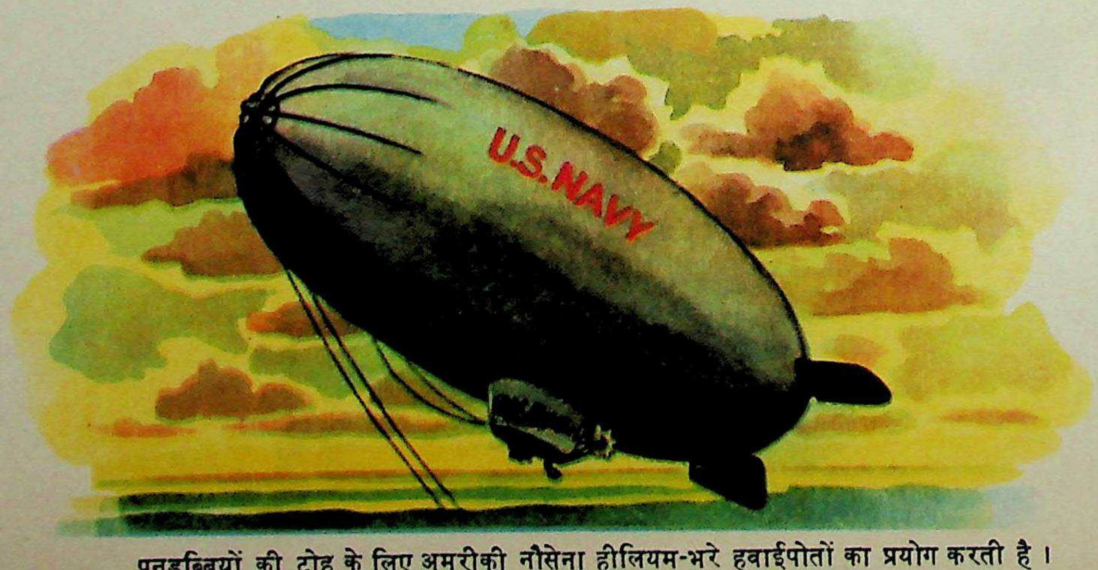

पनडुब्बियों की टोह के लिए अमरीकी नौसेना हीलियम-भरे हवाईपोतों का प्रयोग करती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमणिका
पारिभाषिक शब्द

अंक और संख्याएं (Numbers and Numerals) 5
अंतरिक्ष यात्रा (Space Travel) 6
अगासी, जां लुई रोदोल्फ
(Jean Louis Rodolphe Agassiz) 7
अणु (Molecules) 8
अपकेन्द्री बल (Centrifugal Force) 9
अबाध गति (Perpetual Motion) 9
अम्ल और समाक्षार (Acids and Bases) 9
अवरक्त किरणें (Infrared Rays) 10
आइन्स्टाइन, ऐल्बर्ट (Albert Einstein) 10
ऑक्सीजन (Oxygen) 11
आग (Fire) 11
आनुवंशिकता (Heredity) 12
आर्कराइट, सर रिचार्ड (Sir Richard Arkwright) 14
आर्किमीडीज़ (Archimedes) 14
इलेक्ट्रॉनिकी (Electronics) 15
ईंधन (Fuels) 16
ऊर्जा (Energy) 18
एडिसन, टॉमस अलवा (Thomas Alva Edison) 19
ऐलकोहल (Alcohol) 19
कंपास, चुम्बकीय (Magnetic Compass) 20
कार्बन (Carbon) 21
कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon Dioxide) 21
कार्बन मोनोक्साइड (Carbon Monoxide) 22
कार्बोरंडम (Carborundum) 22
कार्वर, जॉर्ज वाशिंगटन
(George Washington Carver) 23
कीमियागरी (Alchemy) 23
कृत्रिम उपग्रह (Satellites) 24
कृष्णन्, डा० करियमाणिक्यम श्रीनिवास
(Dr. K. S. Krishnan) 26
केशिका-कर्षण (Capillary Attraction) 27
कैलेंडर और पंचांग (Calendar) 27
कोपेर्निकस (Copernicus) 29
क्यूरी, मेरी और पियरे
(Marie Curie; Pierre Curie) 30
क्लोरीन (Chlorine) 30
गणित (Mathematics) 30
गति (Speed) 32
गुडईयर, चार्ल्स (Charles Goodyear) 33
गूतेनबर्ग, जोहान (Johann Gutenberg) 33
गेरिक, ओटो वॉन (Otto Von Guericke) 43
गैलिलियो (Galileo) 35
घर्षण (Friction) 35
चिकित्सा-विज्ञान (Medicine) 36
चुम्बक (Magnets) 39
जाइरोस्कोप (Gyroscope) 40
जीव-विज्ञान (Biology) 40
जीवाणु-विज्ञान (Bacteriology) 41
जीवाश्म-विज्ञान (Palaeontology) 41
जेनर, एडवर्ड (Edward Jenner) 41
ज्योतिर्विज्ञान (Astronomy) 42
टोलेमी (Ptolemy) 44
डार्विन, चार्ल्स (Charles Darwin) 44
डाल्टन, जॉन (John Dalton) 45
डेवी, सर हम्फ्रे (Sir Humphry Davy) 45
ताप (Heat) 46
तारीख (Dates) 47
थर्मामीटर (Thermometers) 48
दंतचिकित्सा (Dentistry) 50
दीपक और प्रकाश-व्यवस्था
(Lamps and Lighting) 50

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूरबीन (Telescope) 51
द्रव इंजीनियरी (Hydraulics) 53
द्रव वायु (Liquid Air) 54
धुम्रां (Smoke) 55
ध्वनि (Sound) 56
नाइट्रोजन (Nitrogen) 58
न्यूटन, सर ग्राइज़क (Sir Isaac Newton) 58
परमाणु (Atoms) 59
पशु-चिकित्सा (Veterinary Medicine) 61
पास्चर, लुई (Louis Pasteur) 62
पेरिस्कोप (Periscope) 63
प्रतिजैविक पदार्थ (Antibiotics) 64
प्रयोग (Experiments) 64
प्राणिविज्ञान (Zoology) 65
प्रीस्टले, जोज़ेफ (Joseph Priestley) 66
फलित ज्योतिष (Astrology) 66
फाब्रे, जां हेनरी (Jean Henri Fabre) 67
फारेनहाइट, गैब्रील डेनियल
(Gabriel Daniel Fahrenheit) 67
फास्फोरस (Phosphorus) 67
फुल्टन, रॉबर्ट (Robert Fulton) 68
फैराडे, माइकेल (Michael Faraday) 68
फोर्ड, हेनरी (Henry Ford) 69
फ्रैंकलिन, बेंजामिन (Benjamin Franklin) 71
बरबैंक, लूथर (Luther Burbank) 71
बिजली (Electricity) 72
बेल, ग्रलेक्ज़ेंडर ग्राहम
(Alexander Graham Bell) 76
बैरोमीटर (Barometer) 77
बोस, डा० जगदीशचन्द्र
(Dr. Jagdish Chandra Bose) 78
बोस, डा० सत्येन्द्रनाथ
(Dr. Satyendranath Bose) 78
भटनागर, डा० शांतिस्वरूप
(Dr. Shantiswaroop Bhatnagar) 79
भाभा, डा० होमी जहांगीर
(Dr. Homi Jehangir Bhabha) 79
भौतिकी (Physics) 80
मनोविज्ञान (Psychology) 81
माइक्रोस्कोप (Microscope) 81
मूलतत्त्व (Elements) 82
मेंडेल, ग्रेगर (Gregor Mendel) 84
मोर्स, सैम्युएल फिन्ले ब्रीस
(Samuel Finley Breese Morse) 84
मौसम-विज्ञान (Meteorology) 85
यौगिक (Compounds) 85
रंग (Colour) 86
रसायन-विज्ञान (Chemistry) 87
राइट बन्धु
(Wilbur Wright ; Orville Wright) 89
रॉकेट (Rockets) 89
रामन्, डा० चन्द्रशेखर वेंकट (Dr. C. V. Raman) 91
रामानुजन्, श्रीनिवास (Srinivasa Ramanujan) 91
राय, ग्राचार्य प्रफुल्लचन्द्र (Dr. P. C. Roy) 92
रॉयल सोसाइटी (Royal Society) 92
राशिचक्र (Zodiac) 92
रीड, वाल्टर (Walter Reed) 93
रोगाणुरोधक (Antiseptics) 94
लाइनियस, कैरोलस (Carolus Linnaeus) 94
लेवेनहोक, एंटन वान
(Anton Van Leeuwenhoek) 95
वनस्पति-विज्ञान (Botany) 96
वाट, जेम्स (James Watt) 96
विज्ञान (Science) 96
वृत्त (Circle) 97
शून्य (Zero) 97
शून्यक (Vacuum) 97
संवेदनाहारी (Anaesthetics) 97
सम्मोहन (Hypnotism) 98
साहनी, डा० बीरबल (Dr. Birbal Sahni) 99
साहा, डा० मेघनाथ (Dr. Meghnath Saha) 99
हाइड्रोजन (Hydrogen) 99
हार्वे, विलियम (William Harvey) 100
हीलियम (Helium) 100

△ △ △

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय, लखनऊ
क्रमसंख्या 3822
प्राप्ति तिथि 7/68
State Museum, Library, Lko.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सचित्र विश्वकोश
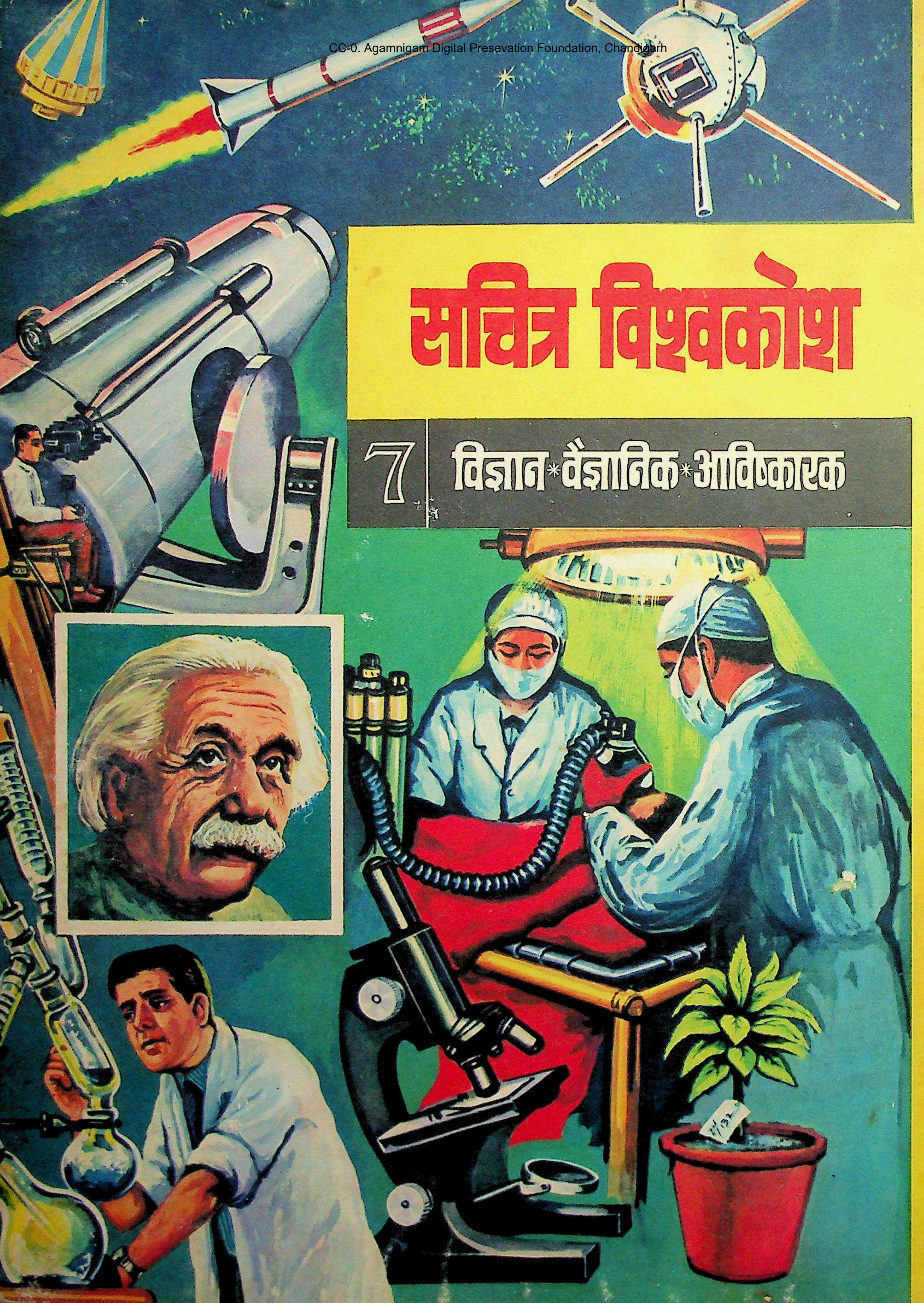
7 विज्ञान * वैज्ञानिक * आविष्कारक